RNI : UPMUL00620/24/1/2014-TC ISSN : 2394-4366

Abhinav Gaveshna

(Multi Disciplinary Quarterly International Refreed/Peer Reviewed Research Journal)

Our PATRON

Sri Manvendra Swaroop, En. Gaurvendra Swaroop

Secretary : Dayanand Shikshan Sansthan, Kanpur

Dr. Shiv Balak Dwivedi (Ex. Principal) Badri Vishal (P.G.) College, Farrukhabad

Dr. N. K. Bajpai (Ex. Dean & Convinor) Dept. of Commerce C.S.J.M. University, Kanpur

Editor-in-Chief

Dr. Pradeep Kumar Tripathi

Asso. Professor Dept. of Commerce

D. A. V. (P. G.) College, Kanpur (U.P.)

Editor

Dr. Gyanprabha Agarwal

Asso. Professor & Head Dept. of Economics,

Juhari Devi Girls (P.G.) College, Kanpur (U.P.)

Peer-Review Board

◆**Dr. Ram Babu Gautam** (Prof. & President-International Hindi Asso.) New Jersi 220, Wheeler Street, Clifsite Park, New Jersi-07010 (America) ◆**Dr. Ram P. Dwivedi** (Visiting Prof.) Tokyo University of Foreign Studies (America) ◆**Dr. Bindeshwari Aggarwal** Prof.-Dept. of Hindi, Newyork University (America) ◆**Dr. Sirish Kr. Pandey** (Prof. - Hindi) Ul Litawashka 37, 51-354, Ursaw (Poland) ◆**Dr. Nitai C. Naag** Prof.-Economics, Chittgang University, Dhaka (Bangladesh) ◆**Dr. Filip Rodriguez-e-Melo** (Principal) S.S. Ambiye Govt. College of Arts & Commerce, Virnoda, Pernem (Gova) ◆**Dr. M. G. Kalavadiya** (Principal) Smt. R. P. Bhalodiya Mahila Arts, Commerce & Science College, Upleta, Rajkot (Gujrat) ◆**Dr. Ajai Saxena** (Principal) D. A-V. College, Dehradoon (U.K.) ◆**Dr. Shyla** (Principal) Kuriyakose Gregorios College, Pampady, Kottayam (Kerala State) ◆**Dr. Alok Kumar** Chinmaya. Degree College, Ranipur, Haridwar (U.K.), ◆**Dr. Mukesh Kr. Rathore** D. N. (P.G.) College, Fatehgarh (U.P), ◆**Dr. Amit Saxena** Khalsa Girls Degree College, Kanpur,◆ **Dr. Swadesh Srivastava** H. S. (P.G.) College, Kanpur ◆ **Dr. Sadhna Singh** D. G (P.G.) College, Kanpur◆ **Dr. Chhaya Jain** V. S. S. D. College, Kanpur ◆**Dr. K. N. Mishra** Armapur (P.G.) College, Kanpur, ◆ **Dr. Rajat Chaturvedi** Juhari Devi Girls (P.G.) College, Kanpur ◆ **Dr. Surachna Trivedi** B.D. Arya Kanya Mahavidyalaya, Lakhimpur-Khiri (U.P.)

Editorial Board

Hindi-

Dr. Priya A. Kuriyakose Gregorios College, Pampady, Kottayam, Kerla

Dr. Amrita Desai Dhinge S. S. Ambiye Govt. Arts, Science & Comm. College, Virnoda, Pernam (Gova)

Dr. Rashmi Chaturvedi M. M. V. Kanpur

Dr. Rakhi Upadhyay D. A. V. (P. G.) College, Dehradoon (Uttarakhand)

Dr. Daya Dixit D. A. V. (P.G.) College, Kanpur

Dr. Alka Dwivedi J. D. G. (P.G.) College, Kanpur

Dr. Premila K. V. M. (P.G.) College, Kanpur

English-

Dr. Nishi Singh M. M. V., Kanpur

Dr. Poonam Dubey D.S.N. College, Unnao

Dr. Nivedita Tandan D.G.(P.G.) College, Kanpur

Dr. Indu Mishra M. M. V., Kanpur

Dr. Manju Tiwari D.A.V. College, Kanpur

Sanskrit-

Dr. Savita Bhatt D. A. V. (P. G.) College, Dehradoon (Uttarakhand)

Dr. Preeti Vadhwani T. D. College, Auraiya

Dr. Puja Srivastava M. M. V., Kanpur

Dr. Shobha Mishra V.S.S.D. College, Kanpur

Education-
Dr. Alpna Rai J.D.G. (P.G.) College, Kanpur
Dr. Geetanjali Maurya D.G. College, Kanpur
Dr. Bindumati Dwivedi Sanskrit University, Haridwar (U.K.)
Dr. Kirti Verma A. N. D. College, Kanpur
Dr. Reeta Srivastava A.N.D. College, Kanpur
Political Science-
Dr. Rajiv Dwivedi Atarra (P.G.) College, Atarra
Dr. Archna Dixit J. D. Girls P.G. College, Kanpur
Dr. Pravita Tripathi R. P. J. D. Colleghe, Hardoi
Sociology-
Dr. Piyush Mishra D.A-V. (P.G.) College, Ddn.
Dr. Satyam Dwivedi D.A-V. (P.G.) College, Ddn
Dr. Archna Mishra M. M. V. Kanpur (U.P.)
Economics-
Dr. Jaya Mishra J.D. G. (P.G.) College, Kanpur
Dr. N. K. Garg S. M. J. N. (P. G.) College, Haridwar (U.K.)
Dr. Alka Soori D.B.S. College, Dehradoon
Phychology-
Dr. Rashmi Rawat D. A. V. College, Dehradoon
Dr. Monika Sahai S.N.Sen (P.G.) College, Kanpur
Dr. Pratima Verma M. M. Vidyalaya, Kanpur
Math-
Dr. Anila Tripathi D. A. V. College, Kanpur
Dr. Anokhe Lal Pathak B.N.D. College, Kanpur
Dr. Shikha Gupta Chinmay College, Haridwar
History-
Dr. Chandani Saxena J.D.G. (P.G.) College, Kanpur
Dr. Archna Shukla M.K.P. College, Dehradoon
Dr. Meera Tripathi M. M. V. , Kanpur
Dr. Shalini Gangwar J. D. P. G. College, Kanpur
Drawing & Painting-
Dr. Hradya Gupt D. A. V. College, Kanpur
Dr. Vandana Sharma M.M.V., Kanpur
Dr. Sarika Bala A.ND.N.N.M. College, Kanpur
Physics-
Dr. A. K. Agnihotri B.N.D. College, Kanpur
Dr. Prakesh Dubey Janta Degree College, Bakever
Dr. Manoj Kr. Verma S.V.(P.G.) College, Aligarh
Chemistry-
Dr. Archna Pandey B. N.D. College, Kanpur
Dr. (Smt.) Roli Agarwal S.V.(PG) College, Aligarh
Dr. Om Kumari K. K. College, Etawah
Zoology-
Dr. Alok Kr. Srivastava D.B.S. College, Kanpur
Dr. Ajai Kumar Chinmay College, Haridwar
Dr. Madhu Sahgal Jalta College, Ajitmal-Auraiya
Botany-
Dr. Vishal Saxena D. A. V. College, Kanpur
Dr. Manisha Ji Chinmay College, Haridwar
Dr. Santosh Bhatnagar A.N.D. College, Kanpur
Geography-
Dr. Anita Nigam D. B. S. College, Kanpur
Dr. K. C. Tripathi D. B. S. College, Kanpur
Dr. Anjana Srivastava D. G. College, Kanpur
Commerce-
Dr. Nalin Srivastava Christ Church College, Kanpur
Dr. Yogesh Shukla Janta Degree College, Bakever
Dr. Piyush Ji D.A.V. College, Kanpur
Dr. Sudhansu Chaman Ji D.A.V. College, Kanpur
Dr. Alekha Mittal I.M.C.O.S.T., Mumbai (Ms.)
Music-
Dr. Sunita Dwivedi Juhari Devi College, Kanpur
Dr. Nishtha Sharma M.G. College, Firozabad
Dr. Kajal Sharma A. N. D. College, Kanpur
Home Science-
Dr. Ranju Kushwaha Juhari Devi Girls (P.G.) College, Kanpur
Dr. Alka Tripathi D. G. (P.G.) College, Kanpur
Dr. Richa Saxena Juhari Devi (PG) College, Knp.
Managing Editor & Publisher-
Sarveish Tiwari `Rajan'
World Bank Barra, Kanpur-208027

सभी संपादकीय दायित्व पूर्णतः अवैतनिक हैं।

नोट- प्रकाशित आलेखों के विचारों से सम्पादक व प्रकाशक की सहमति अनिवार्य नहीं है । समस्त वाद का क्षेत्र कानपुर होगा।

स्वत्वाधिकारी, प्रकाशक एवं प्रबन्ध सम्पादक सर्वेश तिवारी `राजन'** द्वारा **पूजा प्रिन्टर्स** हमीरपुर रोड, नौबस्ता, कानपुर-208022 से मुद्रित एवं **सुपर प्रकाशन** के-444 `शिवराम कृपा', विश्व बैंक बर्रा, कानपुर-208027 से प्रकाशित। सम्पादक- डॉ. ज्ञानप्रभा अग्रवाल मो. 8707047802 । **सम्पर्क- मो.- 08896244776, 09335597658 **E-mail: super.prakashan@gmail.com, Website : www.abhinavgaveshana.com**

सम्पादक की कलम से ......

किसी भी देश का आर्थिक विकास उसकी आधारभूत संरचना पर निर्भर करता है। इस आधारिक संरचना के अन्तर्गत उन सभी सुविधाओं एवं सेवाओं को सम्मिलित किया जाता है जो अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने एवं उत्पादन क्षमता बढ़ाने में अपना विशेष योगदान देती है। आर्थिक अधोसंरचना के अन्तर्गत मुख्यतः भौतिक पूँजी, ऊर्जा, यातायात, संचार, सिंचाई, बैंकिंग, बीमा, विज्ञान एवं टेक्नोलॉजी को शामिल किया जाता है जब कि सामाजिक आधारिक संरचना के अन्तर्गत मानवीय पूँजी की गुणवत्ता में सुधार हेतु शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुविधायें शामिल हैं। ये आधारिक संरचनायें आर्थिक एवं सामाजिक परिवर्तन के उन मूल तत्वों को प्रदर्शित करती हैं जो कि अर्थव्यवस्था की उत्पादन एवं मानवीय गतिविधियों में एक सहयोगी व्यवस्था (Support System) के रूप में कार्य करती हैं। विश्व विकास रिपोर्ट 1994 (World Development Report) के अनुसार अधोसंरचना की पर्याप्त उपलब्धि उत्पादन के विविधीकरण, व्यापार के विकास, जनसंख्या वृद्धि से उत्पन्न समस्याओं का समाधान, निर्धनता को कम करने एवं पर्यावरण में सुधार करने में एक देश की सफलता तथा दूसरे देश की असफलता निर्धारित करने में सहायक होती है। विश्व बैंक (World Bank) के एक अनुमान के अनुसार विकास एवं अधोसंरचना में प्रत्यक्ष आनुपातिक सम्बन्ध है।

वर्तमान में हमारी सरकार ने आर्थिक एवं मानवीय संरचना को सुदृढ़ करने हेतु अनेक प्रयास किये हैं। मानवीय अधोसंरचना जिसके अन्तर्गत शिक्षा में ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत 8 नये IITs, 7 नये IIMs एवं 10 नये NITs स्थापित किये हैं। वर्ष 2016–2017 तक उच्च शिक्षा संस्थानों में दाखिला दर 11 प्रतिशत से बढ़कर 21 प्रतिशत हो गयी। योग्यता – विकास के लिए औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों की संख्या दो गुनी की गयी तथा IITs के स्तर को बढ़ाने का प्रयास किया गया। शिक्षा के स्तर में सुधार हेतु निजी क्षेत्र की सहभागिता सुनिश्चित की गयी। प्राथमिक एवं सेकेण्डरी शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार लाये गये हैं तथा राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के तहत अनेक योजनायें लागू की गई हैं। व्यासायिक शिक्षा से सबन्धित अनेक नये पाठ्यक्रम लागू किये गये हैं। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में शिक्षित जनसंख्या का कुल जनसंख्या में प्रतिशत 74.04 था जो कि वर्तमान में 85 प्रतिशत तक बढ़ाने का लक्ष्य रखा गया है। इन सकारात्मक प्रयासों के बावजूद अभी भी हम आर्थिक–सामाजिक अधोसंरचना के विकास में अन्य देशों

की अपेक्षा बहुत पीछे है विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में इस प्रकार के विकास को उच्च प्राथमिकता देने की आवश्यकता है।

'अभिनव गवेषणा' के प्रस्तुत अंक में सामाजिक – आर्थिक अधोसंरचना सम्बन्धी अनेक लेखों को शामिल किया गया है। पर्यावरण, सेवा क्षेत्र, रेलवे, लघु एवं कुटीर उद्योग, बढ़ती जनसंख्या की समस्या, जीवन–बीमा निगम में मानव–संसाधन विकास का विश्लेषण, इण्टरनेट एवं मीडिया क्षेत्र में सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन एवं महिला शक्ति से सम्बन्धित विश्लेषण के अतिरिक्त शिक्षा की गुणवता में सुधार, आधुनिक शिक्षा प्रणाली में आनलाइन शिक्षा की प्रासंगिकता एवं उच्च, मध्यम एवं निम्न सामाजिक–आर्थिक स्तर के किशोर छात्र–छात्राओं की शैक्षिक एवं वाणिज्यिक रुचि का तुलनात्मक अध्ययन एवं सरकारी एवं निजी स्कूलों में जाने वाले छात्र–छात्राओं से सम्बन्धित अनेक अध्ययनों को समाहित किया गया है। मुझे विश्वास है कि आधारित संरचना से सम्बन्धित विभिन्न आयामों एवं अन्य अनेक विषयों पर प्रस्तुत लेख विद्वत्जनों एवं सुधी पाठकों हेतु निश्चित रूप से उपयोगी सिद्ध होंगे।

इति।

– डॉ. ज्ञानप्रभा अग्रवाल
एसोसिएट प्रोफेसर – अर्थशास्त्र विभाग,
जुहारी देवी गर्ल्स (पी. जी.) कालेज,
कानपुर–208004 (उ.प्र.)

Index

Editorial Board -

Dr. Pradeep Kumar Tripathi - Chief Editor- Abhinav Gaveshna' (Multi Disciplinary Quarterly International Peer Reviewed Research Journal) & Associate Professor - Dept. of Commerce, D. A. V. (P. G.) College, Kanpur-208001 (U.P.)

&

Dr. Gyanprabha Agarwal : Editor - Abhinav Gaveshna' (Multi Disciplinary Quarterly International Peer Reviewed Research Journal), Associate Professor & Head, Dept of Economics, Juhari Devi Girl's P. G. College, Kanpur-208004 (U.P.).

1-	**"Performance & Effectiveness of Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act (MGNREGA) in UP"**	- Dr. Pradeep Kumar Tripathi	07
2-	**Impact of Service Sector on Indian Economy**	- Dr. Jyotikaben B. Patel	10
3-	**Role of Customer Relationship Management in Business**	- Dr. Sunil Kumar Batra - Dr. Virendra Kumar Gupta - Neetika Aggarwal	14
4-	**Threatening Effect of Neem dominated areas on the Biological Diversity of herbs**	- Dharni Dhar Pandey - Dr. Arun K umar Tewari	21
5-	**India's Foreign Policy Since Modi Government**	- Dr. A. M. Tripathi - Dr. Vinod Mohan Mishra	28
6-	**India Israel Defence Relationship in the Present World Order**	- Vikram Mani Tiwari	34
7-	**A Sociological Study of Suicide in India**	- Dr. Susheel Kumar	39
8-	**A Linear Model for Estimation of Force of Mortality**	- R. B. Tiwari	43
9-	**Evaluation of Phenotypic and Genotypic Variation among different Candidate Plus Clumps of *Dendrocalamus Strictus***	- Pradeep Singh - Satyendra Kumar Srivastava - Narendra Kumar Shukla	47
10-	**An Analysis of The Modern Poem of W.B Yeats *The Second Coming* Through The Post Modern Lens with Special Impact on Decentralization**	- Dr. Laxmi Pandey	51
11-	**Synthesis, Characterization and Antimicrobial Studies of Gadolinium Metal Soaps with Lower Fatty Acids**	- Dr. Vibha Maheshwari	55
12-	**Impact of Inflation on Indian Economy**	- Dr. Suneet Awasthi	59
13-	किशोरावस्था और अवसाद	– डॉ मधुलिका त्रिपाठी	63
14-	सार्क की उत्पत्ति एवं विकास	– डॉ. विष्णु कुमार जायसवाल – राधा जायसवाल	67
15-	बदलते परिदृश्य में भावात्मक एवं राष्ट्रीय एकता की भूमिका	– डॉ. रवेन्द्र राजपूत	71

16-	मध्यकाल की स्थापना से पूर्व हिन्दू समाज में खान–पान	– डॉ. प्रीती त्रिवेदी	**77**
16-	सामाजिक घटनाओं की प्रकृति और वस्तुनिष्ठता	– डॉ. मणींद्र कुमार तिवारी	**80**
17-	सामाजिक परिवर्तन और मलिन बस्तियाँ	– डॉ. श्वेता तिवारी	**85**
18-	राजनैतिक व्यवस्था में सैनिक शक्ति की सुदृढ़ता की आवश्यकता	– डॉ. निरंकार प्रसाद तिवारी	**89**
19-	पण्डित दीन दयाल उपाध्याय : एक युगपुरुष	– डॉ. ज्ञानप्रभा अग्रवाल	**92**
20-	दलित मानवाधिकार	– डॉ. ममता गंगवार	**95**
21-	किशोरावस्था में किशोर एवं किशोरी में स्वास्थ्य के प्रति सजगता एवं पोषक तत्व के ज्ञान स्तर का तुलनात्मक अध्ययन	– डॉ. रन्जू कुशवाहा – डॉ. प्रियंका सिंह	**101**
22-	गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के शैक्षिक विचारों का मूल्यांकन एवं वर्तमान परिस्थितियों में उनकी प्रासंगिकता	– शिव प्रकाश – डॉ. विजय कुमार गुप्ता	**107**
23-	महिला सशक्तिकरण में स्वयं सहायता समूहों की भूमिका : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण	– डॉ. सीमा आर्य – रजनी शुक्ला	**112**
24-	वैदिक एवं आधुनिक गृह निर्माण व्यवस्था	– डॉ. अनुपमा कुमारी	**117**
25-	उदारीकरण एवं वैश्वीकरण के दौर में केन्द्रीय सरकार की वर्तमान आर्थिक नीति का अध्ययन''	– डॉ. रवि रस्तोगी	**120**
26-	भारतीय जनचेतना, पुनर्जागरण और स्वामी दयानन्द सरस्वती	– डॉ. रीना चन्द्रा	**126**
27-	कानपुर महानगर में चौराहों का यातायात असन्तुलन एवं नियोजन	– डॉ. दीप्ति सुनेजा – डा. प्रभाशंकर श्रीवास्तव	**130**
28-	आज के सन्दर्भ में पर्यावरण शिक्षा के प्रति उच्च शिक्षा स्तर के अध्यापकों की जागरुकता का अध्ययन	– डॉ. स्वाती सक्सेना	**138**
29-	बौद्ध दर्शन की आचार मीमांसा : समसामयिक प्रासंगिकता	– डॉ. रंजय प्रताप सिंह	**140**
30-	भारत में शारीरिक शिक्षा एवं राष्ट्रीय खेल नीतियाँ	– डॉ. शैलजा शुक्ला	**145**
31-	महाकाव्यों एवं पुराणों में सूर्य की संकल्पना	– डॉ. विनीता वर्मा	**149**
32-	रामचरितम् कविशिरोमणिरभिनन्दस्य कर्तुः परिचयाः	– डॉ. अरविन्द कुमार चतुर्वेदी	**154**
33-	भारतीय लोकतंत्र में बालश्रम की समस्या पर संसद की भूमिका	– डॉ. रमेश चन्द्र ओझा	**157**
34-	**Sustainable Agricultural Development in India: Strategies for Agricultural Growth and Challenges Ahead**	- Dr. Sangeeta Sitani	**162**
35-	इण्टरनेट एवं सोशल मीडिया का समाज पर प्रभाव : एक विवेचन	– डॉ. रेनू कुरील	**169**

◈◈

RNI : UPMUL00620/24/1/2014-TC ISSN : 2394-4366

Received: 01 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

"Performance & Effectiveness of Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act (MGNREGA) in UP"

- Dr. Pradeep Kumar Tripathi
Associate Professor -
Dept. of Commerce,
D. A. V. College, Kanpur-208001
(U.P.)

E-mail:
drpktripathi@gmail.com

Abstract

Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act (MGNREGA) implemented by the Ministry of Rural Development(MoRD), is the flagship programme of the Government that directly touches lives of the poor and promotes inclusive growth. The Act aims at enhancing livelihood security of households in rural areas of the country by providing at least one hundred days of guaranteed wage employment in a financial year to every household whose adult members volunteer to do unskilled manual work. Mahatma Gandhi NREGA is the first ever law internationally that guarantees wage employment at an unprecedented scale. The primary objective of the Act is augmenting wage employment and its auxiliary objective is strengthening natural resource management through works that address causes of chronic poverty like drought, deforestation, agricultural works and soil erosion and so encourage sustainable development. The process outcomes include strengthening grass-root processes of democracy and infusing transparency and accountability in governance.

Keywords : ***MGNREGA, Performance, Rural Employment, Households, Persons-days.***

Introduction-

The National Rural Employement Guarantee Act 2005 number 42 of 2005 implimented by pariliament 5th september 2005 is published by ministry of rural dovelopment. An act provide for the enhancement of livelihood security of the household in rural areas of the country by providing at least one hundred day of guaranrteed wages emloyement in every financial year to every household whoose adult member want to do unskilled manual work. This act was notified in 200 district in the first fase with effect from 2nd feb 2006 and then act was extended 130 district in a fianacial year 2007-08. The remaining district have been notified under the nrega with

effect from 1st April 2008.

Thus NREGA covers the entire country with the exception of district that have a hundred percent urban population. It was initially called the National Rural Employment Guarantee Act (NREGA) but was renamed on 2 october 2009 as Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee act (MGNREGA). The main objective of NREGA is to protect rural households from poverty and hunger. MGNREGA can also serve other objectives: Generating productive assets, protecting the environment, empowering Women, reducing rural urban migration and fostering social equity among others. Thus MGNREGA is not just an employment scheme: it is a tool of Economic and social change in rural areas.

Objectives of the Study -

1. To explain the concept, evolution and current status of MGNREGA;

2. To discuss about the objectives and salient features of MGNREGA.

Research Methodology -

The data collected for the study includes secondary data. The various sources used to collect secondary data include reports of MGNREGA, research papers, journals and the website of MGNREGA.

Current Status of MGNREGA -

In current financial year 2015-16 (upto December, 2015) 35 lakhs households were provided employment and 11 Crore person-days of employment were generated. The enhanced wage earnings have led to a strengthening of the livelihood resource base of the rural poor in UP . 85 percent of funds utilized were in the form of wages paid to the workers. Self targeting in nature, the programme has high work participation for marginalized groups like SC/STs (40%) and Women (40%) in 2015-16 (upto December, 2015). 36 lakhs beneficiaries get wages by DBT ,Total works undertaken were 70 thousands in the same period, Women participation in current financial year upto December, 2016 was 40% and the participation of SC & ST in current financial year upto December, 2015 is 35%.

Objectives and Feature of MGNREGA -

1. Adult members of a rural household willing to do unskilled manual work may apply for registration in writing or orally to the local gram panchayat.

2 The gram panchayat after due to varification will issue a job card. The job card will bear the photoghraph of all adult member of household willing to work under MGNREGA.

3. The job card should be issued after 15 dayes of application.

4. A job card holder may submit written application of the gram panchayat starting the time and duration of for which work is sought the minimum days of employment have to be at least fourteen.

5. Wages are to be paid according to the minimum wage act 1948 for agricultural labourers in the states ,until the center notify a wage rate which will not be less than Rs 60/ per day, equal wages will be provided to both men and women.

6. Work should be provided within 5 th km of the village, if work should provided beyond 5 km then extra wage 10% are payable for conveynce.

7. A 60:40 wage and material ratio has to be mentioned by gram panchayat at the gram panchayat level. No contractor and machinery are allowed in this act.

8. Social audit has to be done by gram panchyat.

9. All accounts and records relating to the scheme should be available for public scrutiny.

10. Cost sharing : Central government 3/4th, state government 1/4th.

11. This minimum wage varies from state to state, in some states it is Rs. 161 whereas in other it is Rs. 161 or Rs. 185. According to the Act the minimum wage cannot be less than Rs. 60. The 100 days of work figure was estimated because the agricultural season is only supposed to last roughly around 250 days and unskilled workers have no alternative source of income in

the remaining parts of the year.

12. Each district has to prepare a shelf of projects the selected works to provide employment are to be selected from the list of permissible works the different categories of permissible works are as follows:

Water conservation and water harvesting , Drought proofing ,Irrigation canals including micro and minor irrigation works,Flood control and protection works, Minor irrigation horticulture and land dovelopment on the land of SC/ST/BPL and land reform beneficiaries., Renovation of traditional water bodies including desilting of tanks.

Funding Pattern of MGNREGA-

The government of India has established a fund called the National Employment Guarantee Fund, from which grants are released directly to states. Revolving funds are to be set up under REGS at the states,in a bank account. Then the beneficiaries will get wages in their accounts with the help of DBT . The action plan of the Scheme is purposes of the Act. These guidelines have been formulated to facilitate the design and implementation of Rural Employment Guarantee Schemes. They should be interpreted as a broad operational framework, around which further provisions may be built, taking into account the State's economic, social and institutional context. The Act is a Centrally Sponsored Scheme on a cost sharing basis by the Central and the States Governments as follows: Central Government to pay for: Wage costs, 75% of material costs, and some administrative costs. State governments to pay for: 25% of material costs, other administrative costs and unemployment allowance.

Conclusion -

India's MGNREGA is the only Act which gives its rural people such a right and that too in the aera of Liberalization, Privatization and Globalization (LPG). It has a vital role to play because of its humane approach. It serves as an effective safety net for the unemployed especially during famine and drought. It has enabled them with sufficient purchasing power and they are able to at least to supports their basic necessity i.e. food. The Act has confined the rural poor to their areas and stopped migration to the cities. It is not only giving rural livelihoods but also involving them in other non-agricultural work. This has helped in handling disguised workers. Employment in other non-agricultural work will also improve the rural infrastructure i.e. rural asset building. It will ultimately lead to sustainable development.

References

1. NREGA Implementation Status Report for the financial.year2015-16, [Online] Available: http://www.nrega.nic.in/netnrega/mpr_ht/nregampr.aspx, 2015.
2. "MGNREGA (2012), Report to the people", Ministry of Rural Development, Department of Rural Development, Government of India, New Delhi, 2nd February, 2012.
3. LJ.Chaarlas, J. M. Velmurugan (2012), "Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act, 2005 (MGNREGA) : Issues and Challenges", International Journal of Physical and Social Sciences, Vol. 2, Issue 6, June, 2012, pp. 253-261.
4. Dr. Debasish Biswas, (2012)- "Performance of Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Scheme with Special Reference to Jalpaiguri District of West Bengal", National Monthly Refereed Journal of Research in Commerce & Management, Vol. 1, No. 3, March 2012, pp. 94-102.
5. Ajay Kumar Singh, Niti Sury and Sameer Lama (2012), "MGNREGA : A Critical Assessment of Issues and Challenges", The Indian Journal of Commerce, Vol. 65, No. 2, April-June 2012, pp.151-164.
6. [Online] Available: http://www.mgnrega.nic.in (MANREGA): Issues and Challenges", International Journal of Physical and Social Sciences, Vol. 2, Issue 6, June, 2012,.

Received: 01 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

Impact of Service Sector on Indian Economy

- Dr. Jyotikaben B. Patel
Associate Professor -
Department of Economics,
Seth H. P. Arts & Com. College,
Talod, Dist.- Sabarkantha-383001
Gujrat

E-mail:
jyotikajpatel1967@gmail.com

Abstract

Service sector is the lifeline for the social economic growth of a country. It is today the largest and fastest growing sector globally contributing more to the global output the employing more people than any other sector. Services sectors have become more important in recent years as advances in technology have permitted new means of providing services across borders. The growth in output in the sector in recent times has mostly come from the rapid development of skill intensive services in the information technology and professional service segments, mostly oriented toward the external market. This study investigates to growth, contribution and development of services sector in Indian economy. Further this study discusses to economic policy and impact of services sector.

Keyword: contribution, services, development, growth, etc.

Introduction-

Economy is divided into three sectors: primary, secondary and tertiary sector. The primary sector consists of farming, forestry, animal husbandry and fisheries. The manufacturing sector is composed of mining, construction and manufacturing. All other economic activities which are not covered by the agricultural or manufacturing sectors are broadly defined as services and hence belong to the service sector. They include service provided for the agricultural sector, activities associated with the supply of water, electricity and gas, transport and communications, wholesale and retail trade, finance and insurance, business and personal services and community an social services. Services can be broadly distinguished between two types, that is, old and new. The old or traditional service include petty trading, domestic services, catering and hotel services. The new services are generally associated with communications, business and legal practices, culture, research and education\. Service sector is the lifeline for the social economic growth of a country. It is today the largest and fastest growing sector globally contributing more to the global output and employing more people than any other sector.

The ral reason for the growth of the service sector is due to the increase in urbanization, prizatiozaton and more demand for

intermediate and final consumer series. Availability of quality services is viat for the well being of the economy. In advanced economies the growth in the primary and secondary sectors are directly dependent of the growth of services like banking, insurance, trade, commence, entertai-nment etc. the growth in services has also been accompanied by the rising share of services in the world transactions. Testimony to the rise in international supply of services is the fact that trade in services has grown as fast as trade in goods in the period 1990-2003. Along with this worldwide has been marked shift FDI away from manufacturing sector towards services sector. In line with the global trend, services sector in India has also grown rapidly in the lat decade3. Its growth has in fact been higher than the growth in agriculture and manufacturing sector. Service sectors have become more important in recent years as advances in technology have permitted new means of providing services across borders. While there is little doubt that services trade is an essential ingredient to economic growth and sustainable development, it is widely accepted that it can only make such positive contribution if appropriately liberalized and implemented across countries. An efficient service sector is crucial for the growth and competitiveness of an economy.

The role of services in India's economy in terms of contribution to GDP. Employment. FDI. And States domestic product and draws some international comparisons. The chapter goes on the examine the performance of different services sub-sectors which are not well-covered in other chapters such as domestic trade; tourism including totals and restaurants; shipping and port services; storage; telecommunications related services; real estate: information technology (IT) and IT enabled services (ITeS): accounting and auditing services research and development (R&D) servicers: legal service and consultancy: construction: and some specialized social services such as sports…

Objectives-

Helping are this in mind and efforts has been made to study the impact, growth and development of services sector of India. The stipulated objectives of the current study are given below:

▣ To Study the Growth and Development of service sector.

▣To Study the Impact of Service Sector in India Economy.

▣To study the economic policy and implementation of service sector.

Importance of the Services Sector for India-

The importance of the services sector can be gauged by looking at its contributions to different aspects of the economy.

Services GDP-

The share of services in India's GDP at factor cost (at current prices) increased rapidly from 30.5 percent 1950-51 to 55.2 per cent in 2009.10. if construction is also included then the share increases to 63.4 per cent in 2009-10.

The ratcheting up of the overall growth rate (compound annual growth rate [CAGR] of the Indian economy from 5.7 per cent in the 1990 to 8.6 per cent during the period 2004-05 to 2009-10 was to a large measure due to the acceleration of the growth rate (CAGR) in the services sector from 7.5 percent in the 19900s to 10.3 percent in 2004-05 to 2009-10. The services sector growth was significantly faster than the 6.6 percent for the combined agriculture and in dustry sectors annual output growth during the same period. In 2009-10 services growth was 10.1 percent and in 2010.11 (advance estimates-AE) it was 9.6 percent India's service GDP growth has been continuously above overall GDP growth, pulling up the latter since 1997-98. It as also been more stable

Services Employment in India-

Although the primary sector (agriculture mainly) is the dominant employer followed by the services sector. The share of services has been increasing over the years while that of primary sector has been decreasing. Between 1993-94 to 2004-05 there was a sharp fall in the share of the primary sector in employment. The consequent

rise in share of employment of the other two sectors was almost equally divided between the secondary and tertiary sectors. In 2007-08 compared to 2004-05 though the trend was similar the fall in employment in primary sector was less (at-1.1) per cent) with a small commensurate rise in employment in the other two sectors which was again almost equally divided between the other sectors.

State-Wise Comparison-

A comparison of the share of services in the gross state domestic product (GSDP) of different states and Union Territories shows that the services sector is the dominant sector in most states of India (Figure 10.2) states such as Delhi, Chandigarth, Kerala, Maharashtra, Bihar, Tamilnadu and West Bengal have shares equal to or above the all-India share. State-wise growth state-wise of GSDP is also closely associated with faster growth of the tertiary sector. Interestingly. Bihar which has the highest overall growth rate in 2008-09 also has the fastest growth among States in services in part due to its rapid progress from a low base (only) Goa's growth rate in services is higher than that of Bihar. Bu this is for 2007-08) Even small States such as Orissa and Rajsthan which have relatively low overall growth rates have stared piggy-backing on the good performance of their services sectors to climb up the ladder of progress. Thus. The services revolution in India seems to be becoming more broad based rather than being concentrated in only few States.

Services Exports-

India is also moving towards a services led export growth. During 2004-05 to 2008-09 as per the Balance of payments data, merchandise and service exports by 22.2 and 25.3 percent respectively. Services growth slowed in 2009-10 as a result of the global recession, but the decline was less pronounced than the slowdown in merchantdise export growth, and has recovered rapidly in the first half of 2010-11 with a growth of 27.4 per cent. The everall openness of the economy reflected by total trade including services as a percentage of GDP shows a remarkable increase from 29.2 per cent in 2000-01 to 53.9 percent in 2008.9 though it dipped to 46.1 percent in 2009-10 due to the global crisis. The dip was more due to fall in share of merchandise trade to GDP to 35 per cent in 2009-10 compared to 41 per cent in 2008-09. The fall in the share of service trade to GDP was less than 2 percentage points from 12.9 per cent to 11.2 percent.

Important Services for India-

Some services have been particularly important for this improving performance in India. Software is one sector in which India has achieved a remarkable global brand identity. Tourism and travel related services and transport services are also major items in India's services. Besides these, the potential and growing services include many professional services. Infrastru-cture-related services and financial services.

Impact of Services Sector on Indian Economy-

India has taken substantial steps towards economic liberalization during last few years, having worked out strategies for bringing about rapid economic development. India has managed to achieve a six percent annual growth rate in her economic agenda. During these years, a large increase in the middle class category income has been seen and it is estimated that there about 200 million people in the middle class category. And particularly on the basis of this figure, all the efforts are concentrated. This category will have a substantial demand for service in the next century. With increasing standards in education, which in India is provided free of cost and compulsory till the age of 14 years by the India government, there will be increasing demand for educational services. Primary school, secondary and higher secondary school, junior degree college all these institutes are in great demand, with the increase in population and an awareness of the benefits of seeking education.

As the number of students goes on increasing, there is also increasing demand for tuitions, private classes etc. with the

establishment of technical institutes even at the district level, these has emerged an increase in demand for the services of professionally qualified technicians. With the increasing amount of trade and business covered by road, there exists a substantial demand for transport services, which benefits various automobile manu-facturers, who cash boxes start over flowing. Large sections of the population appreciate having their own vehicles, providing a good business proposition for the automobile industry. Banking services are very necessary to meet financial requirement of the public and the national industrial sector.

The electric services provide benefits to the society, industry and so no. adequate hospital services are essential for the well beings of the society. Personal care services are essential to develop potentiality of an individual for a perfect personality and positive image projection. Hospitality services (hotels etc) work on strategies to satisfy the business class through their services in term of comport and satisfaction. The tourism industry is a potential one which has geared itself to make tourists enjoy the holiday in destinations of their choice, and take them away from the monotonous in cities.

The entertainment industry plays an equality important role towards this end. All these services have left management scientists, professional and socio economic tinkers to analyze and understand that managing services to the consumers, the main thing in this business is that they have unlimited potentialities and we have to explore these opportunities and tap them against the background of the changing social, cultural and economic condition. The professional requirements need a change when technology develops and evolves. These necessitate proficiency in the management level, possible only through giving a boost to human abilities.

Conclusion-

All service sectors participated in this boom, growth was fastest in communications, banking, hotels and restaurants, community services, trade and business service. One of the reasons of the sudden growth in the services sector in India in the nineties was the liberalization in the regulatory framework that gave rise to innovation and higher exports from the services sector. The agriculture sector contributed 17.2%; industry contributed 29.1% while the service sector had a contribution of 52.7% according to 2008 estimates. The growth rate in the current fiscal is expected to be 19.5% for IT- BPO services, 18.5% for exports and 22.8% for domestic IT related services in 2011. The growth in output in the sector in recent times has mostly come from the rapid development of skill intensive services in the information technology and professional service segments, mostly oriented toward the external market. The new Economic Policy includes reduction in government expenditure, opening of the economy to trade and foreign investment, adjustment of the exchange rate from fixed exchange rate system of flexible exchange rate system, deregulation in most markets and the removal of restrictions on entry, on exit, on capacity and on pricing. A shift in the consumption pattern of this nature indicates that the demand-side impetus to services growth will continue indeed will get stronger. Since liberation began, Indian's services export have increased.

Bibliography

1. Sandu, H.S. & Mehta.R. (2007): “Career advancement challenges for women executives in the service sector”, Journal of advances in Management Research, Vol. 4, Issue, 2 pp. 69-78
2. Economic survey (2005-2012): Ministry of Commerce, Various Issues.
3. Singh, Nirvikar (2010) “Understanding India's Servicesled Growth” India 2010, Business Standard, pp.17
4. IRDA Annual Report, 2010
5. Singhal, Arvind [2010] “The shifting sands of Consumption” India 2010, Business standard, PP. 118-121.

◈◈

Received: 01 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

Role of Customer Relationship Management in Business

- Dr. Sunil Kumar Batra
Principal,
S. M. J. N. (P. G.) College,
Haridwar - 249402 (U. K.)

E-mail:

- Dr.Virendra Kumar Gupta
Associate Professor -
Faculty of Commerce,
Pt. L. M. S. Campus, Rishikesh
- 249137 (U.K.)

- Neetika Aggarwal
Research Scholar,
Department of Commerce,
S. M. J. N. (P. G.) College,
Haridwar249402 (U.K.)

Abstract

In the present era of intense globalization, it is very crucial for any business to retain customers in order to survive in this competitive world. Customer relationship management is a process or methodology used to learn more about the needs and behavior of customers so as to develop stronger relations with them. There are many technological terms related to customer relationship management, but it not good to think of it primarily in such terms. In fact, to think about customer relationship management as a process that helps in bringing together lots of information about customers, sales, marketing effectiveness, responsiveness and market trends. This paper attempts to assess the role of customer relationship management in business from the same point of view and to suggest ways accordingly to make it fruitful for the growth of business organizations.

keywords- Customer Relationship Management, Business growth, customer support services, market trends.

Introduction -

The term Customer Relationship Management refers to the practices, strategies, and technologies that companies used to manage and analyze customer interactions and data throughout the 'customer lifecycle', with the goal of improving customer service relationships, and assisting in customer retention and driving sales growth.

Customer Relationship Management is a strategy widely used by companies and organizations (includingrelated integrated information systems and technology, often in the form of software) to record and manage their overall data and interactions with current, past and potential customers. CRM works to ensure that all customer interfacing organizational functions like sales, marketing, technical support are efficient and synchronized, ensuring that former and potential customers are adequately and appropriately served.

"CRM is concerned with the creation, development and enhancement of individualized customer relationships and

with carefully targeted customers and customer groups resulting in maximizing their total customer life time values”. It is a system of managing a company's interactions with current and future customers. It often involves using technology to organize, automate and synchronize sales, marketing, customer service and technical support.

Features of Customer Relationship Management

There are following characteristics or features which customer relationship management possess. They are described as below:

- A business strategy: Customer Relationship Management is business strategy to select and manage customers to optimize long term value.
- A comprehensive strategy: Customer Relationship Management is a comprehensive strategy and a process of acquiring, retaining, and partnering with selective customers to create superior value for the company and the customer.
- A complete system that provides a means and method to enhance the experience of the individual customers so that they will remain customers for life.
- It provides both technological and functional means of identifying, capturing and retaining customers, and gives a cohesive view of customer across the enterprise.

According to Sir Henry Ford, “A business absolutely devoted to customer service excellence will have only one worry about profits. They will be embarrassingly large”.

The term Customer Relationship Management (CRM) started using since early 1990's by business people when the concept of business started to change from 'transactional to related'. Information technology plays a very critical role in identifying, acquiring and retaining customers, and thereby managing a healthy relationship with them. The systems in customer relationship management are designed to compile information on customers across different channels or points of contacts between the customer and the company which could include the company's websites telephone, live chat, direct mail, marketing materials and social media. This system can also give customer-facing staff detailed information on customer's personal information, purchase history, buying preferences and concerns. In other words, customer relationship management (CRM) is an approach to manage a company's interaction with current and potential future customers. The CRM approach tries to analyze data about customer's history with a company in order to improve business relationships with customers, specifically focusing on customer retention and ultimately to drive sales growth. The primary goal of customer relationship management systems is to integrate and automate sales, marketing and customer support. Therefore, these systems typically have a dashboard that gives an overall view of the three functions on a single page for each customer that a company may have. The dashboard may provide client information, post sales, previous marketing efforts and more summarizing all of the relationships between the customer and the firm. Following are the aims of customer relationship management:

- Improving customer satisfaction: CRM helps in improving customer satisfaction as the customers who are satisfied remain loyal to the business and spread good word-of-mouth. This can be accomplished by fostering customer engagement via social networking sites, surveys, interactive blogs, and various mobile platforms.
- Expand customer base: CRM not only manages the existing customers but also creates knowledge for prospective customers who are yet to convert, it helps in creating and managing a huge customer base that fosters profits continuity, even for a seasonal business.
- Enhance business sales: CRM methods can be used to close more deals, increase sales, improve forecast accuracy, and suggestion, selling. CRM helps to create new sales opportunities and thus helps in increasing

business revenue.

• Improve workforce productivity: A CRM system can create organized way of working for sales and sales management staff of a business. The sales staff can view customer's contact information, follow up via email or social media, manage tasks, and track the salesperson's performance. The salespersons can address the customer inquiries speedily and resolve their problems.

Review of the Literature -

A review of the literature provides the summary of the related work done by previous researchers. It is important to review past literature so as to find out gaps and to contribute something new to the existing knowledge. Following studies were taken for review for the present study:

Ozgener & Iraz (2006) in their study concluded that in order to achieve successful follow-up of the Customer Relationship Management, it is important to make use of business dynamics; including company's image, activity qualities, etc., Unsatisfactory communication is the main obstacle in CRM in small and medium tourist enterprises.

Haenlein (2017) studied that the reason behind customs to change company was attitudinal loyalty and not habits or switching costs. It was also concluded that regular improvements in the products leads to attracting large number of customers.

Shetty & Basri (2018) revealed that factors including relationship quality, customer satisfaction and loyalty, customer commitment played positive in relation towards the salesperson attributes. There is also positive impact of contact intensity, contact frequency and knowledge of the client.

Marcos & Coehlo 2018) presented the relationship between factors of communication. They further concluded that there was a direct influence of communication on reputation , trust and commitment. On the other hand, it had an indirect influence on loyalty and word of mouth.

Valmohammadi (2017) in their study conclude that CRM practices have a low but positive effect on the performance of organization and capability of innovation in case of organizations indulge in manufacturing business in Iran.

Sota et. al (2018) presented that in the most searched area in customer relationship management was loyalty and most researches were empirical but there was a lack of studies relating to the dimensions- security and privacy issues in CRM.

Yadav &Singh (2018) elaborated that was a high commitment level of customers towards a firm or a brand when there was unavailability of same features in distinct products of other brand or firms.

Kalairasi & Mugunthan (2020) in their study concluded that for a successful customer management relationship it is necessary to have a proper communication channel and top level management issues must be solved at priority basis.

Significance of Customer Relationship Management in Modern Business Environment -

Essentially, Customer Relationship Management (CRM) encompasses all activities, strategies and technologies that companies use to manage their interactions with their current and potential customers. A saying that is often heard and said in many companies is "the customer is king". CRM helps companies build a relationship with their customers, which in turn creates customer loyalty and loyalty. Since customer loyalty and sales are characteristics that affect a company's sales, CRM is a management strategy that leads to higher profits for a company. Essentially, a CRM tool creates a simple data collection user interface that helps businesses discover and communicate with customers in a scalable manner. It provides business firms:

- Effective marketing.
- Improved profitability.
- ong term success.

- Decrease customer management cost.
- Win new customers.
- Retain customer through better customer experience.
- Relationship building.
- Understanding customer value.

Benefits of Customer Relationship Management for Customer-

Following are the benefits, customer relationship management provides for customers:

- Improve customer service.
- Increased personalized service or one to one service.
- Responsive to customer's needs.
- Customer segmentation.
- Improve customization of marketing.
- Multi-channel integration.
- Time saving approach.
- Improve customer knowledge.

Constituents of Customer Relationship Management-

- Analytics: It is the process of studying, handling and representing data in various graphical formats such as charts, tables, trends, etc. in order to observe market trends.
- Workflow Automation: It involves streamlining and scheduling various processes that run in parallel. It reduces costs and time, and prevents assigning the same task to multiple employees.
- Sales Force Automation: Sales force automation includes forecasting, recording of sales, processing, and keeping a track of the potential interactions.
- Marketing : It involves forming and implementing sales strategies by studying existing and potential customers in order to sell the product.
- Lead Management: It involves keeping a track of the sales leads and distribution, managing the campaigns, designing customized forms, finalizing the mailing lists, and studying the purchase patterns of the customers.
- HR Management: Human Resource Management involves employing and replacing the most eligible human resource at a required place in the business.
- Customer Services: It involves collecting and sending the customer related information to the concerned department.
- Business Reports: It involves accurate reports of sales, customer care, and marketing.

Evaluation of Customer Relationship Management in Business -

In order to realize the investment towards any CRM initiatives, it is crucial for businesses to have a CRM Evaluation methods or metrics in place. The prime concern of a customer relationship management system is to improve relationships with customers and generate higher revenue. Therefore, it is necessary if your CRM is intended to track the efficiency of the sales and marketing team, or it is to build a strong relationship with your customers? The answer to questions like this will help to determine the focus of customer relationship management performance. Once the objective of CRM implementation is clearly defined, you can go ahead evaluating the best customer relationship management for your business.

Following points will help you in evaluating the customer relationship management system at its face:

- Customer Relationship Management ROI (Return on Investment): Depending upon the type of implementation and strength of organization, CRM initiative can be a complex and costly venture. Thus, a selected customer relationship management system shouldProvide tangible and measurable ROI. It should be Helpful in calculating the real business benefitsEnable accurate budgeting and reduced resources.
- Ease of use: Implementing a CRM system shouldSimplify customer relationship and business processes. It must provide a user-friendly interface. It should allow ease of CRM

navigation.

• Simplified Workflow : A CRM system in place shouldPerform various tasks easily. It must Present simplified workflow logics. The system should encourage easy adoption by users.

• Customization : The real efficiency of any CRM implementation lies in flexibility to change the default CRM set-up. There must be a provision P to shape the CRM according to the business processes. It should have the provision to roll back the default CRM set-up.

• Integration : The drive to maximize the value of your customer relationship necessarily demands the CRM system. It must provide well-defined integration architecture. It should enable cross- application business process. The system should reduce implementation time for custom integration.

• Post- sales Support : No CRM system is complete without the end user help files. Besides, the tips and tricks to efficient performance, the CRM implementation should have reference documentation for users. There must be ready online support. There should be notes and tutorials to complement documentation.

As mentioned above, once a customer is aware of the customer relationship management system, it must ask the vendor for the obvious and see if they can explain the functionality in simple terms; for the CRM system is full of jargons and buzzwords. If the vendor, can't provide convincing explanations of the functionality of a product, the customer won't buy it.

Deploying Customer Relationship Management (CRM) solutions: Once the business have all the information, it becomes easy to choose the CRM vendor that meets all the needs. A business must introduce the system slowly so that users get comfortable with the new solution without being forced to complete a job.

Types of Customer Relationship Management Implementations -

The following are various types of customer relationship management implementations:

• *Strategic Customer Relationship Management.*

Those systems which are customer centric, based on acquiring and aims at wining and maintain profitable customer.

• *Operational Customer Relationship Management.*

These are those systems which simplifies the business interactions and are based on customer-oriented processes such as selling, marketing and customer service.

• *Analytical Customer Relationship Management.*

These systems are based on intelligent mining of the customer data and using tactically for future strategies.

• *Collaborative Customer Relationship Management.*

These systems are based on application of technology across organization boundaries with a view to optimize the organization and customers. “Good Management consists in showing average people how to do the work of superior people”.

Customer Relationship Management Programmes-

There are four types of Customer Relationship Management programmes that enables the company or business firm to win back customers who have defected or planning to create loyalty among existing customers. They are:

• **Win back or save:** This is the process of convincing a customer to stay with the organization while they are discontinuing service or convincing them to rejoin once they have left. Of the four categories of campaigns, win back campaign is four times more likely to succeed, if contact is made with in the first week following a defection that if it is made in the fourth week.

Selectivity is another aspect of a successful win back campaign. Leading organizations often filter prospects for contacting to exclude customers who have frequently switched, who have bad credit ratings or whose

usage is low.

To preserve the revenue stream and prevent the customer from becoming a traditional win back candidate, a few business enterprises are now including partial disconnects and reduced usage customers in their win back campaign. Following are the steps to win a customer back:

- Know who left and keep a record.
- Segment the people who left and know which people are high value customers.
- Offer a respectful and responsible apology.
- Providing them special discounts, deal incentives, targeted services etc.

• **Prospecting:** Prospecting is the effort to win new, first-time customers. Apart from the offer itself, the three most critical elements of prospecting campaign are segmenting, selectivity, and sources. It is essential to develop an effective need-based segmentation model that allows an organization to effectively target the offer without this focused approach, the organization fails to achieve an adequate acceptance on the offer or spends too much on promotions, advertising and concessionary pricing. Selectivity is as important to prospecting as it is to win back. Need-based segmentation defines what the customer wants from the organization and profit-based segmentation defines how valuable the customer is and helps the organization in deciding how much it is willing to spend to get the customer. Pre-scoring a customer credit rating is one of the techniques that organization can use to determine the latter.

• **Loyalty:** Loyalty is the third category in which it is most difficult to gain accurate measures, the organizations trying to prevent customers from leaving, uses three different elements: value-based segmentation, need-based segmentation and predictive models. Value-based segmentation allows the organization to determine how much it is willing to invest. Once the customer is determined to belong to the value-based segmentation screening, the organization can use need-based segmentation to offer customized loyalty program. Affinity programs such as airlines miles and hotel points are some of the most popular methods. However, the organization focus more on the needs of individual customers, they find that they are able to achieve the same loyalty with less investment.

• **Cross sell/ up sell:** the cross sell / up sell is also known as increasing the wallet share or the amount the customer spends. The purpose is to identify complementary offerings that a customer would like. For instance, a basic long-distance customer could be a candidate to buy internet access. Up selling is similar but instead of offering a complementary product, the organization offers an enhanced one. For example: if the customer has used his credit card a few times in apparel shop, customer relationship tool will enable the credit card company to send his customized mailers on apparel offers including special incentive schemes. Cross sell and up sell campaigns are important because the customers targeted already have relationship with the organization. In financial terms, when a customer accepts a cross sell or up sell offer, that organization begins to reap more profits.

Conclusion and Suggestions-

Customer relationship management strategy is a directed course of action to achieve intended set of goals of CRM i.e., for managing all business's relationships and interactions with the customers and potential consumers. It helps in the improvement of profitability of the business firms.

Customer relationship management is a broadly recognized and widely implemented strategy for maintain and nurturing a company's interactions with customer's clients and sales prospects. It involves using technologies to organize, automate and synchronize business process not only for sales activities, but also for marketing, customer services and technological support. When an implementation is effective, people, process and technology work in synergy to increase profitability and reduce operational costs.

According to Laurice Leitao, “Our greatest asset is customer! Treat each customer as if they are only one!”.

Customer relationship management entails all aspects of interaction of a business firm has with its customer, whether it is sales or service related, it starts with the foundation of relationship marketing. It is a systematic approach towards using information and ongoing dialogue to built long lasting mutually beneficial customer relationship.

Following are the suggestions business firms need to follow for an effective customer relationship management:

- CRM requires a cultural change with organization.
- CRM can be enabled by technology, but it alone will not deliver business benefits- change management is needed, vitally the customer experience needs to be consistently enhanced.
- Its an ongoing business process and will create sustainable competitive advantage. It is said “If you are not listening to your customers, your competitors will!”.
- The employees of a firm employing CRM would require rich information about their firm and customer base including -information about the market, information about the firm, the current segment, demographic distribution (age, gender, education, income etc.,), the firm's best customers and the segment they belong to, products they buy, preferences, habits and tastes of each segment.
- They also need to acquire individual level information consisting of customer personal details such as name, address, family details, education etc., the customer group segment to which the individual belongs, history of their past and present behavior, likes, dislikes, habits and preferences of customers, etc.
- The main purpose of CRM is to drive profit by helping companies effectively track the relationship with current and future customers. It can involve any or all customer-oriented process in a company, such as sales, marketing and technical support.

References

1. de Figueiredo Marcos, A. M. B., & de Matos Coelho, A. F. (2018). Communication relational outcomes in the insurance industry. *Asia Pacific Journal of Marketing and Logistics*.
2. Haenlein, M. (2017). How to date your clients in the 21st century: Challenges in managing customer relationships in today's world. *Business Horizons*, *60* (5), 577-586.
3. Meena, Priyanka & Sahu, Praveen. (2021). Customer Relationship Management Research from 2000 to 2020: An Academic Literature Review and Classification. Vision: The Journal of Business Perspective.10.1177/0972262920984550.
4. Özgener, S. & İraz, R. (2006). “Customer relationship management in small–medium enterprises : The case of Turkish tourism industry”, Tourism Management, Vol. 27, No.6, 356-1363.
5. Shetty, A., & Basri, S. (2018). Relationship Orientation in banking and insurance services- a review of the evidence. Journal of Indian Business Research, 10(3), 237-255. https://doi.org//10.1108/JIBR-10-2017-0176.
6. Sota, S., Chaudhry, H., Chamaria, A., & Chauhan, A. (2018). Customer relationship management research from 2007 to 2016: An academic literature review. *Journal of Relationship Marketing*, *17*(4), 277-291.
7. Valmohammadi, C. (2017). Customer relationship management: Innovation and performance. *International Journal of Innovation Science*.
8. Yadav, N. S., Gupta, M., & Singh, P. (2018). Factors affecting buying behavior & CRM in real estate sector: a literature survey. *Asian Journal of Research in Business Economics and Management*, *8*(6), 32-39.

RNI : UPMUL00620/24/1/2014-TC ISSN : 2394-4366

Received: 01 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

Threatening Effect of Neem dominated areas on the Biological Diversity of Herbs

- Dharni Dhar Pandey
Ph. D. (Botany)
Forest Research Institute,
Kanpur, U.P.

Email:
ddpandeybravgard@gmail.com

- Dr. Arun K umar Tewari
Assistant Professor -
Dept. of Zology,
D. A. V. (P. G.) College, Kanpur-208001 (U.P.)

Email:
aruntewari31@ gmail.com

Abstract

In the present study the emphasis is given to the study of herb diversity comparing its frequency, density and abundance in Random Forest Area and the area where single plant (Neem) is dominated in that particular forest area. An extensive survey has been co nducted to find out the various type of forest flora at Forest Research Institute Kanpur Uttar Pradesh. In the present investigation we have also concluded how the single species plantations hamper the proper distribution of flora which in term threaten the ecosystem on a large scale. In normal forest area total herb species were 19 while in Neem dominated area it was only 06 species.

Introduction-

The term biological diversity was used first by wildlife scientist and conservationist Raymond F. Dasmann ,1968 in the book A Different Kind of Country advocating conservation. The term biodiversity is of relatively recent origin, becoming widespread in usage only after the American National Forum on Biodiversity in 1986 (Wilson, 1992). Scientific definitions therefore have largely followed Wilson (1992), who defines biodiversity as: "...all hereditarily based variation at all levels of organization, from the genes within a single local population, to the species composing all or part of a local community, and finally to the communities them-selves that compose the living parts of the multifarious ecosystems of the world. " Defining biological diversity as "the total variability of life on earth" (Heywood et al., 1995) is not conclusive to put in practice. In practice it is defined as "number of species." A species is, in relatively informal usage, "a population whose members are able to interbreed freely under natural conditions".

Potentials of Neem under agro-forestry are well known and also it is planted frequently in agro-forestry system by the Indian farmers. Agro forestry represents the integration of agriculture and forestry to increase the productivity or sustainability of farming system and/or to increase the farm income. Agro-forestry, a combined agricultural and tree

Table-1 : Diversityof herbs in Random Forest Area (RFA)

Local/vernacular Name	Family	Habitat	Number of Individual (Quadrat Number) 1	2	3	4	5	Total No. of Indivi duals	No. of Quadrat of Occurance	Total No. of Quadr ats Studie d	Density	Abundance	frequency
Kanghi	Malvaceae	Wild	7	3	2	3	1	11	5	5	2.2	2.2	100
Adoosa/Kansha	Acanthaceae	Planted	2	1	0	2	1	6	4	5	1.2	1.5	80
American aloe	Asperagaceae	Planted	1	1	1	3	1	6	5	5	1.2	1.2	100
Aak/Madar	Asclepiadaceae	Common	0	1	0	0	0	1	1	5	0.2	1	20
Karil	Capparadaceae	Common	0	0	1	2	1	4	3	5	0.8	1.3	60
Amaltas	Caesalpiniaceae	Common	0	0	1	0	1	2	2	5	0.4	1	40
Chakunda	Caesalpiniaceae	Rare	1	0	0	1	0	2	2	5	0.4	1	40
Chakoda	Caesalpiniaceae	Common	1	1	1	0	0	3	3	5	0.6	1	60
Sanai	Fabaceae	Common	1	2	0	1	1	5	4	5	1	1.25	80
Bhringraj	Asteraceae	Common	4	3	5	2	2	16	5	5	3.2	3.2	100
Dudhia	Euphorbiaceae	Common	2	2	1	1	2	8	5	5	1.6	1.6	100
Shankhapushpee	Convolvulaceae	Common	3	2	1	2	1	9	5	5	1.8	1.8	100
Chuimui	Caesalpiniaceae	Common	3	2	1	1	1	8	5	5	1.6	1.6	100
Tulsi	Lamiaceae	Common	2	1	2	2	1	8	5	5	1.6	1.6	100
Bhatkataiya	Solanaceae	Common	3	4	2	2	1	12	5	5	2.4	2.4	100
Makoi	Solanaceae	Common	2	1	2	1	2	8	5	5	1.6	1.6	100
Ghamira	Boraginaceae	Common	3	4	2	2	1	12	5	5	2.4	2.4	100
Petera	Typhaceae	Wild	1	1	0	1	1	4	4	5	0.8	1	80
Jungle pyaj	Liliaceae	Common	0	0	0	0	1	1	1	5	0.2	1	20

ISSN : 2394-4366

Table 2: Density, Abundance and Frequency of floral species observed in Neem Dominated Area (NDA)

S. NO.	Botanical Name	Local/ vernacular Name	Family	Habitat	Number of Individual (Quadrat Number) 1	2	3	4	5	Total No. of Individuals	No. of Quadrat of Occurance	Total No. of Quadrats Studied	Density	Abundance	frequency
1	*Calotropis procera (R. Br.)*	Aak/Madar	Asclepiadaceae	Common	2	1	1	0	1	**5**	4	5	1	1.25	80
2	*Cassia occidentalis (L)*	Chakunda	Caesalpiniaceae	Rare	2	1	1	0	1	**5**	4	5	1	1.25	80
3	*Cassia tora (L)*	Chakoda	Caesalpiniaceae	Common	2	1	0	1	1	**5**	4	5	1	1.25	80
4	*Euphorbia hirta (L)*	Dudhia	Euphorbiaceae	Common	2	1	0	1	0	**4**	3	5	0.8	1.33	60
5	*Solanum xanthocarpum (Linn)*	Bhatkataiya	Solanaceae	Common	0	1	1	0	1	**3**	3	5	0.6	1	60
6	*Solanum nigrum (Linn)*	Makoi	Solanaceae	Common	0	1	1	0	1	**3**	3	5	0.6	1	60

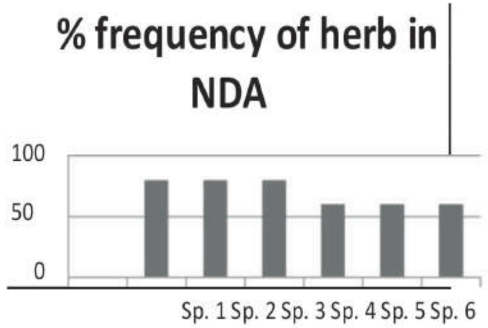

Fig. 1 Herbs in relation to frequency

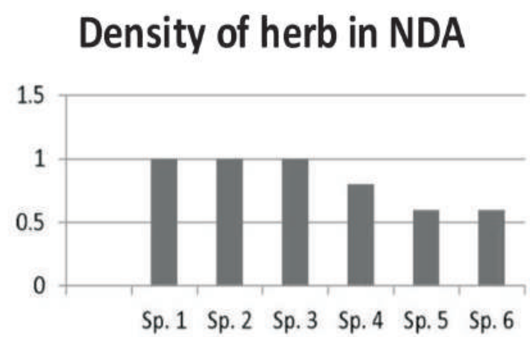

Fig. 2 Herbs in relation to density

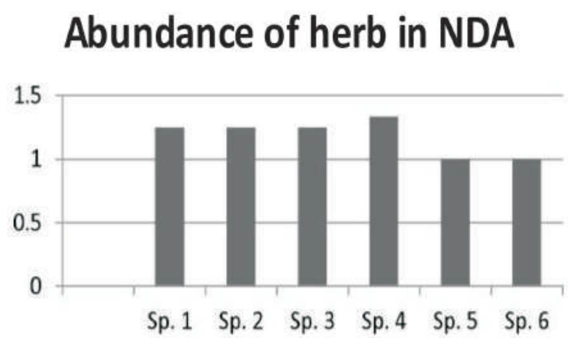

Fig. 3 Herbs in relation to Abundance

$$F = \frac{\text{Number of sampling units in which plant species occured} \times 100\ \%}{\text{Total number of sampling units studied}},$$

$$\text{Density} = \frac{\text{Total number of individuals of a plant species in all sampling units}}{\text{Total number of sampling units studied}}$$

$$\text{Abundance} = \frac{\text{Total number of individuals of plant species in all sampling units}}{\text{Total number of sampling units of occurrence}}$$

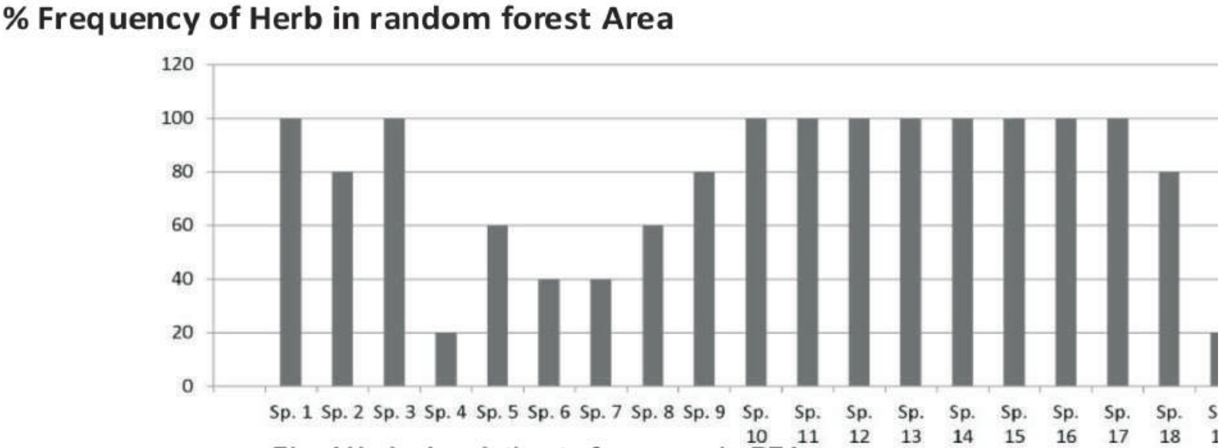

Fig. 4 Herbs in relation to frequency in RFA

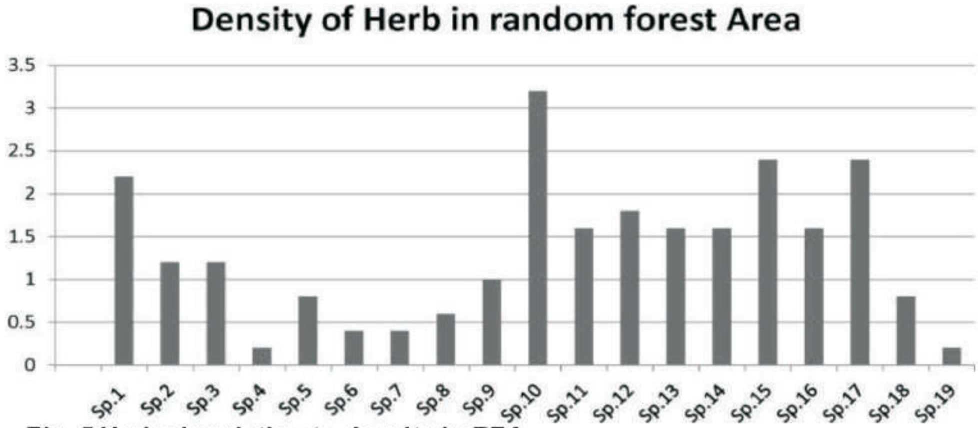

Fig. 5 Herbs in relation to density in RFA

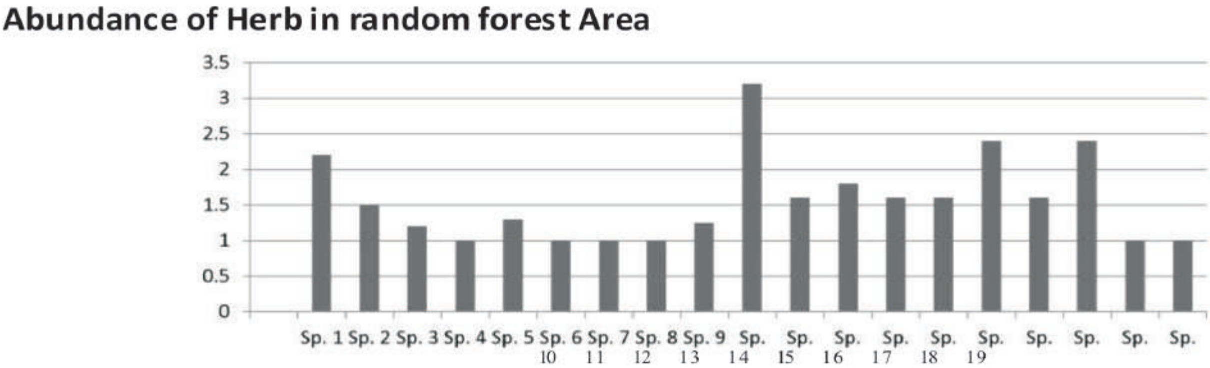

Fig. 6 Herbs in relation to Abundance in RFA

production system has been traditionally practiced since time immemorial in rural India on farm lands, grazing grounds, as home gardens and windbreak and shelterbelts etc. Neem possesses a large number of biological activities such as insecticidal, bactericidal, antiviral and antipyretic. The Neem seed 'Kernel' is one; from which azadirachtin is produced that acts as antifeedant, repellent, insect growth regulator and having toxic effects on pests of agricultural crops. Such insecticide and pesticide property of Neem also affects the biodiversity in particular area of plantation. It is interesting to know that how this wonderful tree conserve or regulate the faunal diversity of particular region, (Dimetry and Nelson et al 1993).

Aim/Purpose -

1. Identification of herb species of Random forest areas at Kanpur a nd Neem dominated areas at the same forest.

2. To study of the herb diversity at Random forest areas, at Kanpur Forest.

3. To study the floristic composition of particular. Forest Area at Kanpur.

4. Identification of endangered herb species which is of high promising value.

5. To enlist the ethno botanical uses of herb specifically helping the health and livelihood security.

Materials and Methods -

The site selection and survey for the study has been carried out to compare the herb diversity with and without Neem tree areas at Kanpur. The selected sites have been named as Random forest area and the Area where the neem tree are dominating. A systematic study has been conducted to enumerate the flora along with fauna separately with proper statistical analysis of the collected data. Following methods have been adopted for different s tudies.

Study Area -

The entire study was conducted during the years 2016-2018. Two areas were selected at Kanpur to conduct the study. Kanpur is located at 26°. 46' North latitude and 80°.35' East longitude, and at an altitude of 126 meters above sea level. Kanpur is one of the most populous city of Uttar Pradesh. It is located on th e bank of river Ganges and is an important industrial center. It has an area of over 1000 km2 and is situated about 80 kms from Lucknow, the capital city of Utter Pradesh. **(See Table-1, 2 & 3)**

Climate and Temperature -

Kanpur experiences mainly three seasons i.e. Summer {March, April May, June), Rainy (July, August, September, October) and Winter {November, December, January, February) in summer the average maximum temperature goes up to 47.5°c, accompanied by dust storms and heat-waves. Temperatures during cold weather drop down with minimum of almost 12- 140C. Kanpur experiences severe fog in December and January almost every year.

Result and Discussion -

Total herbs found in Random forest area were 19, herbs were second dominating group in habitat wise. Herb like Cassia tora (L) and Cassia occidentalis (L) were in same density and abundance as found in NDA. It was the only herb species which have same growth pattern (Vegetative growth) in NDA and Random forest area. In NDA another grass named wire grass (Eleusine indica) was dominating with good growth with flowering and fruiting during September, total six herb were found in NDA while in Random forest area nineteen herb species were found. In NDA very common herb category also include Solanum xanthocarpum, Solanum nigrum and Calotropis procera. In NDA in all the category the flowering was best obtained in Calotropis procera.

A native of India Neem (Azadirachta indica) can grow easily in degraded land without competing with food crops (Anon, 1980). It is cultivated in most parts of India except in high and cold regions and dumpsites. It can be easily propagated from seed with the introduction of fast growing exotic tree species like Eucalyptus, Poplar etc.

Distribution of herbs -

In Random forest area total herb species were 19 while in NDA it was only 06. Caesalpinia- ceae is the first largest dominant family with 04 members and solanaceae was the second dominant family with 2 members. Acanthaceae, Asclepiadaceae, Asperagaceae, Asteraceae, Boraginaceae, Capparadaceae, Convolvulaceae, Euphorbiaceae, Fabaceae, Lamiaceae, Liliaceae, Malvaceae and Typhaceae each has only one member.

1. % Frequency of Herb - % frequency determination was estimated for 19 plant species in the range of 20-100%. 02 plant species in the range of 20%, 02 plant species in the range of

40%, 2 plant species in the range of 60%, 3 plant species in the range of 80% and The maximum % frequency 100% was determined for the 10 plant species. Maximum 100 and Minimum 20% of frequency observed in the field experiment.

While Studying in NDA the total herb species were 6 in which 03 plant species in the range of 60% and 3 plant species in the range of 80%.No any species was in the range of 100 % in NDA.

2. Density of Herb - Density was determined for the 19 plant species in the range of 0.2 to 3 .2. 8 plant species in the range of 0.2 to 1.00, where as 7 plant species in the range of 1.2 to 1.8 and 3 plant species in the range of 2.2 to 2.4 and 1 plant species has the range of 3.2 which is the maximum density belongs to Eclipta prostrata.

While Studying in NDA the total herb species were 6 in which 02 plant species in the range of 0.6 and 1 plant species in the range of 0.8 and 3 plant species has the maximum density in the range of 1 namely Cassia tora, Cassia Occitentalis and Calotropis procera.

3. Abundance of Shrub - The abundance was calculated for the 19 plant species under the range of 1.00 to 3.2, 06 plant species in the range of 1.00. 09 plant species in the range of 1.2 t o 1.8 and 03 plant species in the range of 2.2 to 2.4. The maximum abundance (3.2) was determined for the plant species Eclipta prostrata minimum abundance (1) for Calotropis procera (R. Br.), Cassia fistula (Linn), Cassia occidentalis (L), Cassia tora (L), Typha elephantine (Roxb.), Urginea indica (Roxb.).

While Studying in NDA the total herb species were 6 in which 02 plant species in the range of 1 and 3 plant species in the range of 1.25 and 1 plant species i.e., Euphorbia hirta (L) has the maximum abundance range 1.

Conclusion -

It is clear from the present study that random forest area has maximum diversity in respect of Floral form. In RFA the diversity of herb which we have studied with respect to density, abundance and frequency, maximum as compare to the Neem dominated area. It is clear from the above calculated data in RFA the frequency is 100% for 10 plant species namely Abutilon indicum, Agave americana, Eclipta prostrata, Euphorbia hirta, Evolvulus elsinoides, Mimosa pudica, Ocimum sanctum, Solanum xanthocarpum, Solanum nigrum and Tricodesma indicum.

While in NDA the maximum frequency is 80 for the three plants namely Calotropis procera, Cassia tora, Cassia occidentalis. Which is highly reduced number.

As we compare the density in RFA and NDA we found in RFA the maximum density is 3.2 for Eclipta prostrata and the total density range 0.2 to 3.2 while in NDA the maximum density in 1 for the three plants i.e., Calotropis procera, Cassia tora, Cassia occidentalis. Which is highly reduced number.

The abundance range in random forest area is 1 to 3.2 while in neem dominated area it is 1 to 1.25 which is also highly reduced.

It is clear from the above investigation that the neem dominated eco system is the cause of depletion of local biodiversity reducing herb species diversity drastically.Thus it can be-clearly observed that a random forest area can easily support and satisfy the various floral groups belonging to different categories whether herb, shrub, grasses, climber or tree species.

Reference

1. Anonymous 2004-2005 Annual Report 2004-2005 (Ministry of Environment &Forest, India).
2. Arunachalam, A., Adhikari, D., Sarmah, R. Majumder, M. and Khan, M. L. 2004. Population and conser-vation of Sapria himalayana Griffith in Namdapha national park Arunachal Pradesh In-dia. Biodiversity and Conservation: 13(13) 2391-2397.
3. Board of science and Technology for International Development (1992) Neem : A Tree for Solving global Problems. National Academy Press, Washington, D.C.,pp: 1-14.
4. Bratton, S.P. (1992) The Effects Of Exotic Plant and Animal Species On Nature Preserves. Natural Areas

Journal. 2:3-12.
5. Brook, Barry W., Navjot S. Sodhi, and Corey Bradshaw JA. 2008. Synergies among extinction drivers un-der global change. Trends in ecology and evolu-tion 23, no. 8: 453-460.
6. Carlkton, J.T. (1989}Man's Role in Changing the Face of the Ocean : Biological Invasions and Implication for Conservation of near Shore Environments. Conservation Biology. 3:265-273.
7. Champion, H.G. and Seth, S.K. (1968}Revised Survey of Forest Types of India Delhi Publishing Co.
8. Elton, Ramakrishnan and Vitousek, 1989; Carlton, 1989; Ecology of Invasions by Animals and Plants. Methven, London.
9. Gadgil, M. 1991. Conserving India's biodiversity: the societal context. Evolutionary Trends in Plants, 5 (1), 38.
10. Ghilarov A. (1996) What Does "Biodiversity", Mean-Scientific Problem or Convenient Myth ? Trends Ecol. E Vol., 11: 304-306.
11. Hanneberg, P. (1992) Biodiversity a Key Resource for Development, Environ. 14: 7-9.
12. Huston, M.A. (1994) Biological diversity : The Coexistence of Species on changing Landscapes. Cambridge University Press, Cambridge.
13. IUCN (2004) A Global Species Assessment. ISBN 2-8317-0826-5.
14. IUCN (2006) Red List Statistics.
15. Jain, S.K. 1991. Dictionary of Indian Folk Medicine and Ethno botany. Deep Publication, New Delhi.
16. Krishnamurthy, S.V. 2003. Amphibian assemblages in undisturbed and disturbed areas of Kudremukha National Park central Western Ghats India. Environmental Conservation, 30(03) 274-282.
17. Kumar, Updesh, and Mahender J. A. 2000. Biodiversity : Principles and Conservation. Agrobios.
18. Lovejoy, T.E. (1980 b) Changes in Biological Diversity In : The Global 2000 Report To The President (G.0. Barney ed.) Vol. 2 (The Technical report). Penguin Books, Harmondsworth.
19. Lovejoy, T.E. (1995) In Biodiversity Measurement and Estimation, Chapman And Hall, London 1995, pp : 81-87.
20. Mehrotra, J.K. {1989}Collection and Processing of Plants for Biological Screening In : Methods and Approaches in Ethnobotany {ed, S.K. Jain}. Society of Ethonobotanists, Lucknow, India.
21. Nair, N.C. and Daniel, P. (1986} The Floristic Diversity of The Western Ghats And Its Conservation : A Review. Proceedings of Indian Academy of Sciences (Animal Sciences/Plant Sciences, Supplement}, 127-163.
22. Nayar, M.P. (1996) Hotspots of Endemic Plants of India, Nepal and Bhutan. Tropical Botanical Garden Research Institute, Trivandrum, 252 pages.
23. Raunkiaer, C. (1934) The life Forms of Plants And Statistical Plant Geography: being the collected papers of C. Raunkiaer Clarendon Press, Oxford, England.
24. Wilson, E.O. 1992.The Diversity of Life. Cambridge MA: Belknap press, 424 pp.

◈◈

Received: 01 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

India's Foreign Policy Since Modi Government

- Dr. A. M. Tripathi
Associate Professor -
Dept. of Defence Studies,
K. G. K. College, Muradabad - 244001 (U. P.)

E-mail:
amt11@gmail.com

- Dr. Vinod Mohan Mishra
Associate Professor-
Dept. of Defence Studies,
D.A-V. College, Kanpur-208001 (U.P.)

E-mail:
vmmishradav@gmail.com

Abstract

The nationalist in Modi would like to revive India's "civilizational role" and restore its ancient glory. To that end, India must assume a larger role in the shift of global power toward Asia. This can only be achieved on the basis of domestic strength. Modi's pre-election statements suggested he would eschew any exaggerated portrayal of India's power. As he said, "we have to put our own house in order so that the world is attracted to us."[1] For him, membership in international clubs or regional groupings does not in and of itself make India a serious contender for a seat at the high table of global power. Its path there begins with real changes in the economy, governance, and national power. "India first," oft repeated during the election, is his clarion call. Modi's push to strengthen India's domestic core is not merely governed by his own beliefs but also the country's recent economic deceleration.

Modi's foreign policy is likely to be a mix of nationalist-led geopolitics and expedient geo-economics. These twin foci mean that democracy and human rights issues will become second order issues. However, Modi may push international democracy more than the previous Congress-led government as part of his geopolitical agenda to extend Indian global power.

The nationalist in Modi would like to revive India's "civilizational role" and restore its ancient glory. To that end, India must assume a larger role in the shift of global power toward Asia. This can only be achieved on the basis of domestic strength. Modi's

pre-election statements suggested he would eschew any exaggerated portrayal of India's power. As he said, “we have to put our own house in order so that the world is attracted to us.”[1] For him, membership in international clubs or regional groupings does not in and of itself make India a serious contender for a seat at the high table of global power.

Its path there begins with real changes in the economy, governance, and national power. “India first,” oft repeated during the election, is his clarion call. Modi's push to strengthen India's domestic core is not merely governed by his own beliefs but also the country's recent economic deceleration. Following the global economic downturn and prolonged domestic policy paralysis, India's “tiger economy” has been stuttering below 5 percent growth (although recent figures suggest a slight upturn). India barely survived a major credit rating downgrade by Standard & Poor's in 2013, [2] which claimed its budget deficit was too high. These economic woes have greatly diminished Brand India, the campaign to bring business to the country. This has combined with significant domestic political change and an accumulated drift in foreign policy to reduce India to a local player that even the tiny Maldives can afford to snub, as it did during its 2013 election by rejecting the pro-India candidate.[3] At its current pace, the Indian economy lacks the dynamism and depth to absorb the 12 million youth who join the labor market every year.[4] Given the enormity of the economic challenges, the new government will necessarily emphasize trade and commercial relations. It will prioritize economic diplomacy to facilitate India's economic revival. Modi stated recently that “I believe a strong economy is the driver of an effective foreign policy.”

To achieve this Modi will have to ensure peaceful external conditions in India's immediate neigh-borhood. He is aware that an unsettled neighborhood with various failed and failing states puts considerable strain on the economy. And he has signaled his aim to reset India's relationship with its neighborhood by taking strong action, such as imaginatively securing the participation of most South Asian Association for Regional Cooperation leaders, including Pakistani Prime Minister Nawaz Sharif, at his swearing-in ceremony and by choosing Bhutan as his first foreign destination after becoming prime minister. Yet Modi's regional engagement cannot just be based on visits; it will require efforts to harness the trade and economic potential of the neigh-borhood. As the long-serving chief minister of Gujarat, a state bordering Pakistan, Modi knows the transformative potential of international trade in goods and services. More than once, Modi has made clear his intention of turning border regions into porous business hubs by easing restrictions, strengthening infrast-ructure connectivity, and genuinely integrating common markets. Trade could fundamentally alter the region's conflict-

ridden history.

When it comes to dealing with big powers, geo-economics (or neo-mercantilism as some analysts would describe it) will likely guide Modi's foreign policy. The prime minister is an unabashed pioneer of trade and economic diplomacy. As chief minister of Gujarat, he made several trips to China, Japan, and South Korea, cultivating a personal rapport with leaders like Japanese Prime Minister Shinzo Abe. Modi plans to expand his Gujarat template to all of India. He will seek trade routes to deepen relations with big powers that matter to India's economic revival and geopolitical rise.

For instance, geo-economics will play a central part in driving Sino-Indian relations. Modi is well aware that China needs the big Indian market, while India desperately seeks large Chinese investments to build transit and other infrastructure critical to its economic revival. Acrimony over borders and geopolitical rivalry in the region notwithstanding, trade will be the centerpiece of India's policy toward China. Geo-economics will also set many of Modi's policy choices vis-à-vis the rest of East Asia and Southeast Asia, especially concerning India's growing relationship with Japan. Japanese firms that are facing growing hostility in China increasingly see India as a better destination for investments. Given his rapport with Abe, this could be fertile ground for Modi.[5] And the Modi government will deploy geo-economics to strengthen India's most critical relationship: with the United States. The Indo-U.S. relationship has suffered in recent years from stagnation on trade negotiations, disputes over intellectual property, sluggish economies, and the Obama administration's preoccupation with Afghanistan and Syria. The once-blossoming relationship recently fell to a new low after the arrest of an Indian diplomat in New York.[6] Aware of this, Modi has already taken important steps to facilitate a turnaround. The bold announcement to open India's $250 billion defense sector to private participation[7] which of course will include U.S. firms, could revitalize Indo-U.S. economic relations. Trade will also be the cornerstone of Modi's foreign policy with the EU, much of the Middle East, and Eurasia. With Modi eager to make India a manufacturing hub,[8] trade with Germany, India's biggest partner in Europe, assumes greater importance. In all likelihood, Modi will highlight issues relating to trade, investment, infrastructure, and the other economic and development inputs necessary to revive economic growth. In short, his government's priority is to bridge the gap between the country's development goals and its foreign policy.

Democracy is likely to be a second-order issue in Modi's foreign policy. But it still offers opportunities for the new government, and Modi's nationalist perspective on geopolitics and national power could mesh well with democracy promotion. Even as the BRICS forum

builds momentum, what sets India apart from those countries are its long-standing democratic credentials. For many countries striving to be democracies, India remains an inspiration. As Modi said in his first speech after assuming office, the world should understand the strength of India's democracy so the country gets the respect and status it deserves.[9] The prime minister reiterated this during his Independence Day address when he referenced the power of democracy in his own rise from a boy selling tea to the office of prime minister.[10] This is not out of character for a leader from Modi's party—it was a previous BJP prime minister, Atal Bihari Vajpayee, who took an unprecedented departure in 1999 from the tradition of nonalignment and nonintervention to dedicate funds to the Community of Democracies, former U.S. president Bill Clinton's initiative to encourage democratic norms and institutions.

The India-West rapprochement on democracy issues has taken a beating during the last ten years of the United Progressive Alliance government, a coalition led by the Congress party. This has been largely due to the government's ambivalence toward democracy support, which it considered interventionist in nature,[11] and a series of high-profile scams and scandals that overwhelmed the government in its second term and left little time for external engagement with democracy promotion and human rights protection. This may change under Modi. While the prime minister will personally push the BRICS through geo-economics, Modi will also push for the democracy club IBSA-India, Brazil, and South Africa-to get its due.

On the margins of the BRICS summit in Brasilia this July, Modi secured hosting the next IBSA meeting in 2015. He is keen to build on India's soft power. However, his natural playfield for democracy promotion will be in South Asia. With Nepal, Myanmar, Pakistan, Bhutan, the Maldives, Bangladesh and Afghanistan experiencing political upheavals and needing support to secure or achieve democracy, India's democratic experience can be of considerable help. Modi did well in this regard during his recent visit to Kathmandu. Not only did he praise the Nepalese population for shunning violence and embracing democracy, he applauded their efforts to prepare a constitution and promised to provide the interim government all possible help in its journey toward democracy. Modi's conviction that the "democracy glue" will eventually bind South Asia together serves the cause of democracy promotion well. Other than its normative importance, democracy offers Modi the opportunity to consolidate and expand India's power in the rapidly changing geopolitics of the Asia-Pacific.

China's swift rise and the uncertainties over its ambitions have generated considerable momentum among the major powers of the region to create a democratic hedge against the

authoritarian power.[12] Pro-democracy platforms that could drive realignment in Asia, such as the quadrilateral initiative between the four major democracies of Australia, India, Japan, and the United States, as well as an "axis of democracy" between Japan and India, could provide immense strategic value to India against a rising China. As India's own development budget increases, there will be additional resources for projects relevant to democratic reform. However, only time will tell to what degree Modi can overcome the country's traditionally low-key posture on democracy promotion.

The new government of Narendra Modi has raised huge expectations for India's foreign policy. Every move the government makes is being keenly watched, and there are indications that Modi's foreign policy will be significantly different from that of his immediate predecessors. With his known aversion to the Nehruvian worldview, the most significant change will be the gradual abandonment of nonalignment for neo-realism. While expediency will demand that most foreign policy engagements be cast in terms of geo-economics, the nationalist in Modi may push toward geopolitics and major power politics. He has long and frequently exhorted India's ancient glory and former global role, so he is likely to drive the country's geopolitical ambitions forward, particularly in Asia.

In addition, his personality and ideological background suggest a muscular foreign policy. His strong conviction that India is not proud enough of its democratic successes is good news for democracy supporters. In short, Modi's foreign policy engagement is going to be active and full of surprises. Yet, one does not know for sure how different triggers will shape the foreign policy of this ambitious new Indian leader. Although his comfortable election victory potentially frees his foreign policy from being held hostage by domestic politics, this could also lead to adventurism and over ambition. The recent cancellation of foreign secretary talks with Pakistan is a reminder of this. Modi can be impulsive and unpredictable. Finally, it remains to be seen how he addresses some of the key structural bottlenecks constraining India's foreign policy. For a country and society as diverse and as complicated as India, foreign policy should not be made in a straitjacket. The biggest challenge will likely not come from Pakistan or China; it will be internal, coming from India's ambitious regional leaders and from Modi's own backers in the BJP and its affiliates. Interesting times lie ahead for India's foreign policy.

References

1. Dhruva Jaishankar, "Eeny, Meeny, Miney, Modi," Foreign Policy, May 19, 2014, http://www.foreignpolicy.com / articles/2014 / 05/19/does_narendra_modi_have_a_foreign_policy_india_pakistan_china.
2. Suvashree Dey Choudhury and Shamik Paul, "In Blow for India, S&P Affirms Negative Ratings Outlook," Reuters, May 17, 2013, http://in.reuters.com/ article/2013/05/17india-ratings-sp-idINDEE94G06Y20130517.
3. For an excellent account of how the Maldives has been ignoring India's counsel on a range of issues including democracy and electioneering, read Harsh Pant,

"India Marginalised in Backyard", the New Indian Express, November 26, 2013, http://www.newindianexpress.com/columns/India-marginalised-inbackyard/2013/11/26/article1910865.ece.

4. See "A Modi-led Government Likely to Boost Job Market in India: Experts," Press Trust of India, May 14, 2014, http://profit.ndtv.com/news/ economy/article-a-modi-led-government-likely-to-boost-job-market-in-indiaexperts-388338.
5. As expected, Modi's visit to Japan in summer 2014 proved to be a huge success as the two countries upgraded their relationship to "Special Strategic Global Partnership." Japanese companies promised to invest a record $34 billion in India's crumbling infrastructure sector, among other industries. Moreover, the Modi-Abe relationship climbed to new heights as the Japanese prime minister flew to personally receive Modi in Kyoto. "PM Narendra Modi's Japan Visit: 10 Key Takeaways," the Economic Times, September 2, 2014, http://articles.economictimes.indiatimes.com/2014-09-02/news/53479892_1_india-and-japan-bullet-trains-pm-narendra-modi.
6. Vibhuti Agarwal and Niharika Mandhana, "Obama and India's Modi to Meet in Washington," the Wall Street Journal, June 6, 2014, http://online.wsj.com/articles/obama-and-indias-modi-to-meet-in-washington-in-september-1402056996.
7. Tommy Wilkes, "Indian Firms Tool Up for Defense Order on Modi's 'Buy India' Pledge," Reuters, August 20, 2014, http://www.reuters.com/article/ 2014/08/20/us-india-defence-idUSKBN0GK2AQ20140820.
8. Rama Lakshmi, "India's Modi Takes on Rape Issue in His First Independence Day Speech," the Washington Post, August 15, 2014, http://www. washingtonpost.com/world/indias - modi - calls - for-more - toiletsless - trash-and-chinese-style-manufacturing / 2014 /08/15/ 4e024c91-b1e8- 4d5b-90ab-851391811e29 _ story.html.
9. Reported in "World Should Realize the Strength of India's Democracy: Narendra Modi," the Siasat Daily, June 2, 2014, http://www.siasat.com/ english / news/world-should-realize-strength-india%E2%80%99sdemocracy-narendra-modi.
10. Full transcript of speech available from the Hindu, August 21, 2014, http://www.thehindu.com /news/resources/prime - minister - narendramodis - independence - day-address/article6338687.ece.
11. Shiv Shankar Menon, "India and the Global Scene," (lecture, Prem Bhatia Memorial Trust, August 11, 2011), http://www.maritimeindia.org/Archives/INDIA-AND.html.
12. China's rising ambition and the uncertainties it has created, as seen in the East China Sea concerning Japan (over the Senkaku Islands, known as the Diaoyu Islands in China) and in the South China Sea concerning the Philippines and Vietnam (over the Spratly Islands), has unnerved this once-stable region and led to plenty of power realignment. For a quick update on China's rise, see "What China Wants," the Economist, August 23, 2014. http://www.economist.com/news/leaders/21613263 - after - bad - couplecenturies - china-itching-regain-its-place-world-how-should?spc = scode & spv = xm & ah= 9d7f7ab945510a56fa6d37c30b6f1709.

◈◈

विज्ञापन एवं निवेदन

रिसर्च जर्नल में विज्ञापन के संदर्भ में जानकारी प्राप्त करने हेतु प्रबन्ध सम्पादक के पते पर सम्पर्क करें। **'अभिनव गवेषणा'** (मल्टी डिस्प्लनरी क्वाटरली इण्टरनेशनल रेफ्रीड/पियररिव्यूड रिसर्च जर्नल) आप सभी की एक स्ववित्त पोषित पत्रिका है, अतः पत्रिका के लिए किसी भी प्रकार का आर्थिक सहयोग सराहनीय होगा। कृपया अपनी सहयोग राशि चेक, ड्राप्ट अथवा आर टी जी एस के माध्यम से निम्नलिखित पते पर प्रेषित करें। - सम्पादक - **'अभिनव गवेषणा'**

के-444, 'शिवराम कृपा' विश्व बैंक बर्रा,
कानपुर-208 027 (उत्तर प्रदेश, भारत)

प्रबन्धन एवं सम्पादन

'अभिनव गवेषणा' (मल्टी डिस्प्लनरी क्वाटरली इण्टरनेशनल रेफ्रीड/पियररिव्यूड रिसर्च जर्नल) में अपने शोध पत्रों को प्रकाशित कराने हेतु नियमित स्थान प्रदान करने के लिए कृपया फुल स्केप कागज पर टाइप किया हुआ अथवा मेल किया हुआ शोध लेख अपनी स्वीकारोक्ति के साथ भेजें। भेजने का पता - सेक्टर के - 444, 'शिवराम कृपा' विश्व बैंक बर्रा - कानपुर-208 027 (उत्तर प्रदेश, भारत) मोबाइल नं0 8896244776, 9335597658 **E-mail super.prakashan@gamil.com** पर सम्पर्क करें। मिलने का समय- सप्ताह में 6 दिन 10.00 से 6.00 (रविवार अवकाश)।

RNI : UPMUL00620/24/1/2014-TC ISSN : 2394-4366

Received: 02 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

India Israel Defence Relationship in the Present World Order

- Vikram Mani Tiwari
Research scholar,
Dept. of Political Science,
C. S. J. M. University,
Kanpur-208017 (U. P.)

E-mail:
drnptiwari8@gmail.com

Abstract

This research paper will emphasise upon the changing dynamics in India's relations with Israel in the present world order. With the emphasis of the current Indian government on indigenously manufactured weapons a strong defence partnership with Israel is being considered as the need of the hour. Israel has also understood the need to engage with India as it finds in India a reliable partner especially when it comes to issues of terrorism. Therefore India-Israel Defence Partnership is the most defining partnership when it comes to mutual cooperation on the issues of regional and global concern. Thepaper will also discuss important issues in Indian neighbourhood and how Israeli strategic partnership will influence the issues in the near future.

Keywords Used: ***JCPOA, NAM,LIDAR, BARAK, HAROP, PYTHON, SPICE 2000, GRIFFIN.***

Introduction-

"India Israel ties are a marriage made in heaven practised on Earth." - Benjamin Netanyahu (former PM Israel)

India Israel relations have their roots deep into the history. Israel has been the region of the Jewish and India has long been visited by Jews for trade and other purposes. Geographically located in the Middle East with the Arab world in the neighbourhood, Israel has its own share of history with many ups and downs. Primarily Israel faced issues on religious grounds also wherein the tussle was over, the claim for land around which the Temple Mount and Al Aqsa Mosque, are built. Israel and the Arab world have been into constant war over this issue. The famous Intifada was a result of this which took the form of Palestinian Israeli conflict that continues even today. Israel was always looking to protect its identity in the region, while the other countries considered Israel as a challenge to their customs and ideology. This escalated when it

was said that Israel has acquired the nuclear arms in a clandestine manner, and that Iran and Saudi Arabia are also trying to do the same. As per the western news reports we know that Iran was found to test its nuclear capacity in guise of civilian use. This was checked by the USA and Europe and hence a series of sanctions were imposed on Iran under JCPOA. Simultaneously, USA has always supported Israel to keep its arms strong enough in the Middle East region. Here comes India into the picture as India gave recognition to Israel in 1950. India is close to USA also and with Pakistan in its neighbourhood supporting separation of Kashmir backed by some Middle East countries, India supports Israel as Israel was helpful during the Kargil War when India needed weapons to fight the war. All these issues hence led to the importance of India Israel Defence Partnership.

India, Israel relations - status at present -

"We are continuing with our policy of connections, and we have seen in India a very important ally for many years. India also brings with her new opportunities for cooperation," Israel's Foreign Minister YairLapid.

India Israel relations saw new heights when in 2017 it was elevated to the category of Strategic Partnership. Having got independence in about same time period, their journey towards development began together. Who donations were prone to face challenges in their neighbourhood and continue to do so even today. As we have already learned about the Palestinian issues with Israel, India has always advocated for a two-state solution.

There are three aspects to the India Israel relationship -

1. India's past of playing safe on the regional issues of Israel due to minority concerns back home.

2. India has been heavily dependent on the oil import from Arabic region and hence India had to be cautious of any issue involving Israel which would concern its interest in the Middle East.

3. The consequences of Cold war and the India's stand for NAM kept India away from West and Israel on the other hand was pro-West. This further distanced India from engaging with Israel. But as the Former Israeli PM Benjamin Netanyahu rightly put "Just one negative vote at UN cannot change the dynamics between the two nations."

Diplomatic Relations -

With the India's establishment of an Israeli embassy in Delhi on 1st February 1992 the diplomatic relations took a new direction. India and Israel portray a defining partnership owing to the regional politics. The commonalities may be understood in the best form as the troubled neighbourhood of both the nations. Israel since very beginning had to deal with Arab world on issues primarily concerning the place of worship and land surrounding it.

India, on the other hand had issues with Pakistan, as Pakistan has proved to be the safe haven for terrorists. Time and again, terrorism is the threat posed to India. Therefore, here the two countries engage with each other, firstly to come to the same thought of eliminating terrorism from their country and secondly, building a diplomatic environment in the region to prevent any such non state actor activities.

1. India Israel defence partnership

2. Air defence system

4. SEARCHER

Multi Mission Tactical UAV for surveillance, reconnaissance, target acquisition, artillery adjustment and damage assessment. Capable of real time gathering of data transmission, it can continuously fly for up to 20 hours within a range of 300 kilometres. In December 2018, Adani defence and ELBIT Systems inaugurated First India Israel joint venture in defence at Hyderabad.

Hermes 900 to be deployed in all-weather terrains is also a multi-use MALE UAV.

BARAK -

Surface to air missile also known as

BARAK 8 (for naval vessels) or MRSAM(for land based launchers).These are to be jointly developed by Israeli Aerospace Industries and DRDO in a boost to Make in India in defence.

PYTHON 5 -

It is a full sphere, infra-red air to air missile, which is complemented by Derby an Active Radar air to air missile which can be used for both short ranges and Beyond Visual Range (BVR) interceptions.

SPICE 2000 and GRIFFIN -

They are the Israeli guided bombs that IAF combat squadrons are using.

HAROP -

It is an electro optically guided weapon that is highly suited to shoot down moving targets.

Crystal Maze - It is an Indian variant of air to surface Missile AGM 1428 Popeye which was used in Balakot air strikes. India imported 30 Crystal Maze from Israel in 2010.

SENSORS -

EL/M - series is radars constructed by ELTA systems with IAI.

EL/M 2248 MF - STAR is a digital Active Electronics Scan Array (AESA) multi-functional radar used for maritime surveillance.

EL/M 2221 STGR (Search Track and Guidance Radar) is a fire control radar that guides the warhead to air or sea-based targets.

EL/M 2075 Phalcon (AWACS)IAF's “Eyes in Skies” first inducted in 2009 as a result of US $1.1 billion deal with IAI.

Importance of India-Israel diplomatic relationship with respect to regional challenges in India's neighbourhood:

With respect to China-

It is a rule in international politics that the politics of one nation is always influenced by the regional heavyweights in the neighbourhood of that country. This is the case with India, where China, already a global power influences Indian geopolitics via a vis India's foreign policy. Since 1949 when started the rapid development plans designed and put forward by Mao Zedong, China started on its journey to become a powerful economy along with its permanent membership of UN. China has very carefully moved forward with a constant eye on India. China has left no stone unturned to downplay India's interest in the region as well as globally. After the bitter experiences of 1962 war with China, India also understands that China in all sense needs to be handled pragmatically and there exists no thought to go with any kind of idealism in the relationship. Time and again, China has made all efforts to check India and counter Indian interest on important international platforms. A very prominent example of this was the UNSC resolution moved by India to blacklist Masood Azhar that has been constantly blocked by China as it has to prove itself a very firm supporter of Pakistan. Second one being the procedure for India to become a member of NSG. Here also China wants to support Pakistan and reject India's arguments. Apart from above concern for India, the most significant one in the near future. Is there grand strategy of China to make its global presence in the form of BRI. The OBOR plan of China in South Asia is seen by India to contain it on land as well as on the seas. To make it a reality China has already made its presence in the neighbourhood of Pakistan at Gwadar Port and is trying all options to start CPEC with their help of Pakistan. CPEC is again a bone of contention for India as its territorial sovereignty is being challenged here. CPEC has to pass through PoK, which is a disputed region between India and Pakistan ,an issue that still needs to be settled. On the seas, China has already stationed itself at Hambantota in Sri Lanka and is eyeing for more stations right up to Africa, encircling India through the Indian Ocean.

Not only that, China has made its plan to contain India geopolitically it has also made its plan to meddle with India's cybersecurity. In the last decade there have been many major incidents of cyberattacks coming from China in the form of banking data leaks, phishing and threats to digital

security systems of Indian institutions. Though China has always rubbished India's allegations over this, India has solid proofs that China is doing all this through its organisations spread across the world.

At this very juncture comes, Israel whose partnership is important for India as we have already known that Israel has a robust system of cyber security and it has proven its expertise regarding this in its fight against terrorism in the Middle East. The INCD has prepared elaborate sophisticated network to deal with cyber issues threatening Israel. Therefore, India's collaboration with Israel in this regard will be of great help to India in two ways. Firstly, it would strengthen Indian security systems and secondly it would pave the path for further R&D in cyber security systems and their advancement as per future challenges.

With respect to Pakistan -

India has already been a recipient of Israeli weapons in the Kargil War. India faces challenges of infiltration from Pakistan borders and the newly devised technique of terrorists using drones to challenge Indian border security. India is already improving its border security by deploying smart fencing using LIDAR technology on its borders that will check any nefarious activities of infiltrators in future. Further, the advance UAVs have already proven their strength in previous strikes by India over Pakistan based terrorist camps.

Regime change in Afghanistan and its implications on India-

India has conveyed its stand very clearly over the recent regime change in Afghanistan with Taliban having control of the government there. India is in no case is going to tolerate any kind of extremist activity that find it is spread towards India from the land of Afghanistan. Since Israel has the expertise of dealing with terrorists activities in the Middle East, India in partnership with Israel is assumed to be of sufficient deterrence for the non state actors to threaten India's security. With its military hardware and air defence systems, Israel will always be a partner in strengthening India security.

Joint Exercises -

Blue Flag Exercise- It was the first time in 2017 that IAF took part with C- 130J special operations aircraft and Garuda commandos. In October 2021 also India participated in the Blue Flag exercises.

Cyber Security-

After the 2017 visit of PM Modi to Israel, this aspect of security was heavily touched upon and hence the result was the signing of MoU in July 2020 between CERT-In (Computer Emergency Response Team India), a unit of Ministry of Electronics and Information Technology and INCD (Israel's National Cyber Directorate). Following were the important points of the MoU:

1. Agreement will enhance in-depth operational cooperation between two sides.
2. Two establishment of dialogue framework.
3. Cooperation and capacity building
4. Facilitating regular exchanges
5. Expansion in the exchange of information on cyber threats to increase the level of protection.

Conclusion -

India and Israel are in the phase of defining a very strong bond intheir relationship, like never before. In this regard, the engagement between the two countries should be viewed as an important relationship, which is required for a progressive future for both the nations. Both India and Israel have at one point of time gone through dealing with the protection of their nation's security in their respective regions. Hence the defence aspect of relationship is much more dominantin their engagement. Israel is a firm supporter of India's interest in UN in the form of UNSC resolutions over counter terrorism efforts. Also Israel wants India to portray its leadership on all important matters be it environment, world

trade, space technology, poverty alleviation, education, health, and other important challenges. Therefore it is in the interest of both India and Israel to get along together and work upon the issues not only concerning themselves but also the world as a family.

References

1. "PM Netanyahu's State Visit To India", Israel Ministry of Foreign Affairs, 2018.
2. Abhyankar, R. (2012). The evolution and future of India-Israel relations. Aspen Institute
3. Yaakov Katz and Amir Bohbot, The Weapon Wizards: How Israel Became A High-Tech Military Power (New York: St. Martin's Press, 2017).
4. "Report: Indian, Israeli Elite Units to Hold Joint Military Drill," Algemeiner, October 12, 2015, http://www.algemeiner.com/2015/10/12/report-indian-israeli-elite-units-to-hold-joint-military-drill.
5. "Government Approves 54 Killer Drones From Israel For Indian Air Force", The Economic Times, February 13, 2019.
6. "India Begins $2.2-billion QR-SAM Procurement Effort," LIVEFISTDEFENCE.com, June 23,2012, accessed October 23, 2015, http://www.livefistdefence.com/2012/06/india-begins-22-billion-qr-sam.html.
7. SIPRI Arms Transfer Database – Importer/Exporter TIV values, Armstrade.Sipri.Org., 2019 .
8. P. R. Kumaraswamy, India's Israel Policy. (New York: Columbia University Press, 2010), 188-190.
9. Pant, H. V. (2019). Israel's arms sales to India: Bedrock of a strategic partnership (Issue Brief). Observer Research Foundation.
10. The Wire. (2017, July 5). As Modi arrives in Israel, promises of economic and security cooperation. https : // thewire.in/diplomacy/narendr a-modi-benjamin-netanyahu-indiaisrael.

◈◈

सुपर प्रकाशन

(विश्वविद्यालय स्तरीय लाइब्रेरी पुस्तकों के प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता)

हम पुस्तकों को स्पष्ट शब्द सज्जा, डिजाइन एवं उत्तम कोटि की छपाई व अत्याधुनिक बाइंडिंग के साथ प्रकाशित करते हैं। विभागाध्यक्ष, एसोसिएट प्रोफेसर, प्रवक्ता, कवि, लेखक, रचनाकार - कहानीकार अपने संस्मरण, गीत, ग़ज़ल एवं कृतियाँ या अन्य किसी भी विधा पर उत्कृष्ट ग्रन्थ अथवा रिसर्च स्कालर (शोध कर्ता) थीसिस प्रकाशन हेतु तैयार हो तो मूल प्रति (Script) भेजकर एक माह में ही अपनी प्रति को पुस्तक के आकार में प्राप्त करें।

सुपर प्रकाशन देश-विदेश के समस्त शिक्षा जगत् से जुड़े डिग्री कालेजों (Higher Education) में यू जी सी के द्वारा उपलब्ध निर्धारित मानकों के अनुसार नेशनल एवं इन्टरनेशनल पियर रिव्यूड रिसर्च जर्नल में अपने शोध लेख (Research Paper) को **'दि गुँजन'** एवं **'अभिनव गवेषणा' (मल्टी डिसिप्लिनरी क्वार्टरली इण्टरनेशनल रेफ्रीड/पियर रिव्यूड रिसर्च जर्नल)** के द्वारा प्रकाशित कराने का अवसर उपलब्ध कराता है।

सुपर प्रकाशन द्वारा हिन्दी साहित्य - कला संकाय, कामर्स संकाय एवं विज्ञान संकाय तीनों फैकल्टी की पुस्तकों एवं इनसाइक्लोपीडिया का प्रकाशन एवं विक्रय विश्वविद्यालय लाइब्रेरी स्तर पर किया जाता है। हमें एक बार सेवा का अवसर अवश्य प्रदान करें।

- सर्वेश तिवारी 'राजन'

(प्रबन्ध संपादक - 'दि गुँजन' एवं 'अभिनव गवेषणा'

(मल्टी डिसिप्लिनरी क्वार्टरली इण्टरनेशनल रेफ्रीड/पियर रिव्यूड रिसर्च जर्नल)

के-444 'शिवराम कृपा' विश्व बैंक बर्रा, कानपुर-208 027 (उत्तर प्रदेश)

मो0- 09335597658, 08896244776 E-mail:super.prakashan@gmail.com

Received: 02 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

A Sociological Study of Suicide in India

- Dr. Susheel Kumar
Department of Sociology, Government Girls Post-Graduate College, Bindki, Fatehpur-212635 (U.P.)

E-mail: susheelvrm4@gmail.com

Abstract

As we know, Suicide has been a topic of an extreme altercation, whether the nature of it intrigues the sociologist or the factors impacting the act, we'll be looking to explore the various factors causing a person to commit suicide whilst assigning the type of suicide according to Durkheim's theory, also analyzing if the ongoing pandemic has caused any shift in the act itself.

Keywords- ***COVID-19, Suicide, India, Sociology of suicide.***

Introduction -

We can shed some light on suicide and understand the sociological factors for the same through Durkheim's Study of suicide, as he was the first ever to state that suicide is caused by societal causes and hence it is a social problem. In his book, 'The Suicide'. Durkheim has explained that suicide is a social phenomenon that is committed by a person being influenced by societal causes and these causes always exist in the social environment due to various actions and reactions [1]

According to Durkheim, there are three types of suicide- anomic suicide, egoistic suicide, and altruistic suicide, we can assign the factors into one of three types of suicide due to societal impact. "*Suicide is considered a preventable cause of death* and does not always involve a history of mental illness. Societal and global issues can wear down on us and affect our *mental and physical health*" [2]. Moreover, it has been found in another study that various factors affecting risk like social isolation, fear of unemployment, economic loss due to lockdown, death of family members, and other factors have compelled and are compelling individuals to commit suicide during this pandemic crisis [3]

Objective of the Study -

The objectives of the present study are:

To understand the nature of suicides in Indian society and explore the factors affecting suicides.

Methodology -

The Data collected is Secondary and is collected via authentic newspapers and websites along with the official

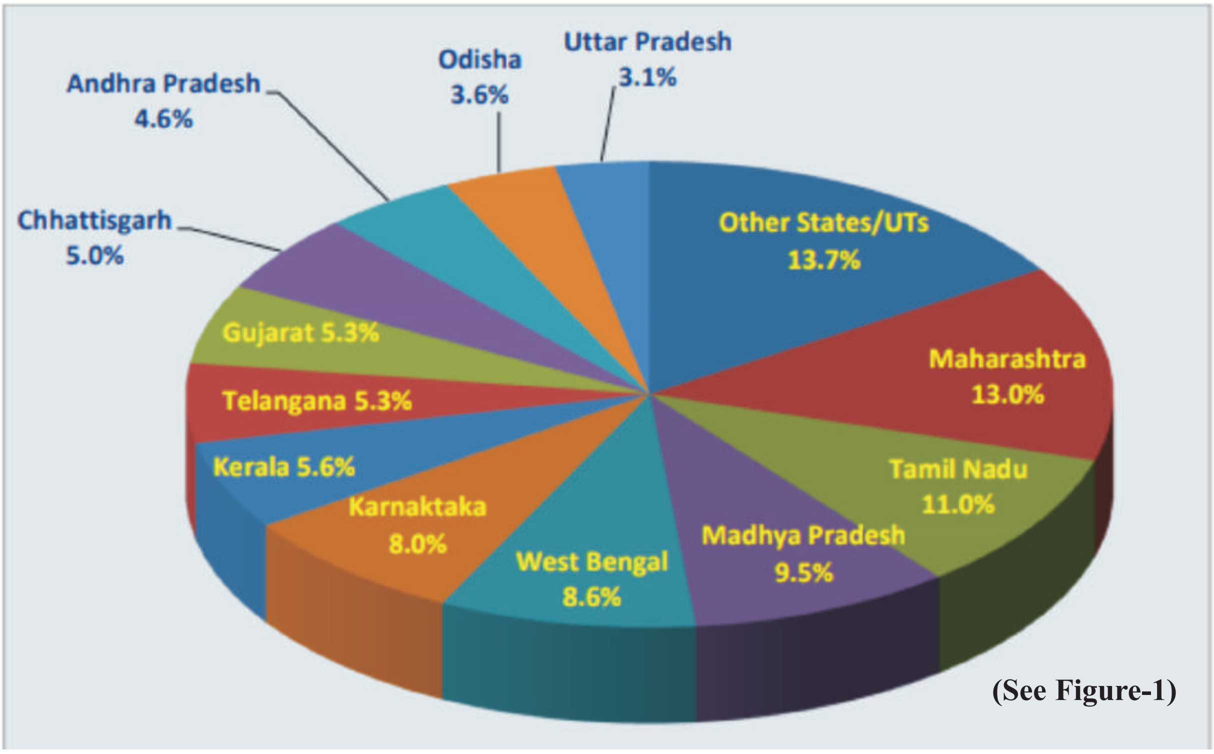

(See Figure-1)

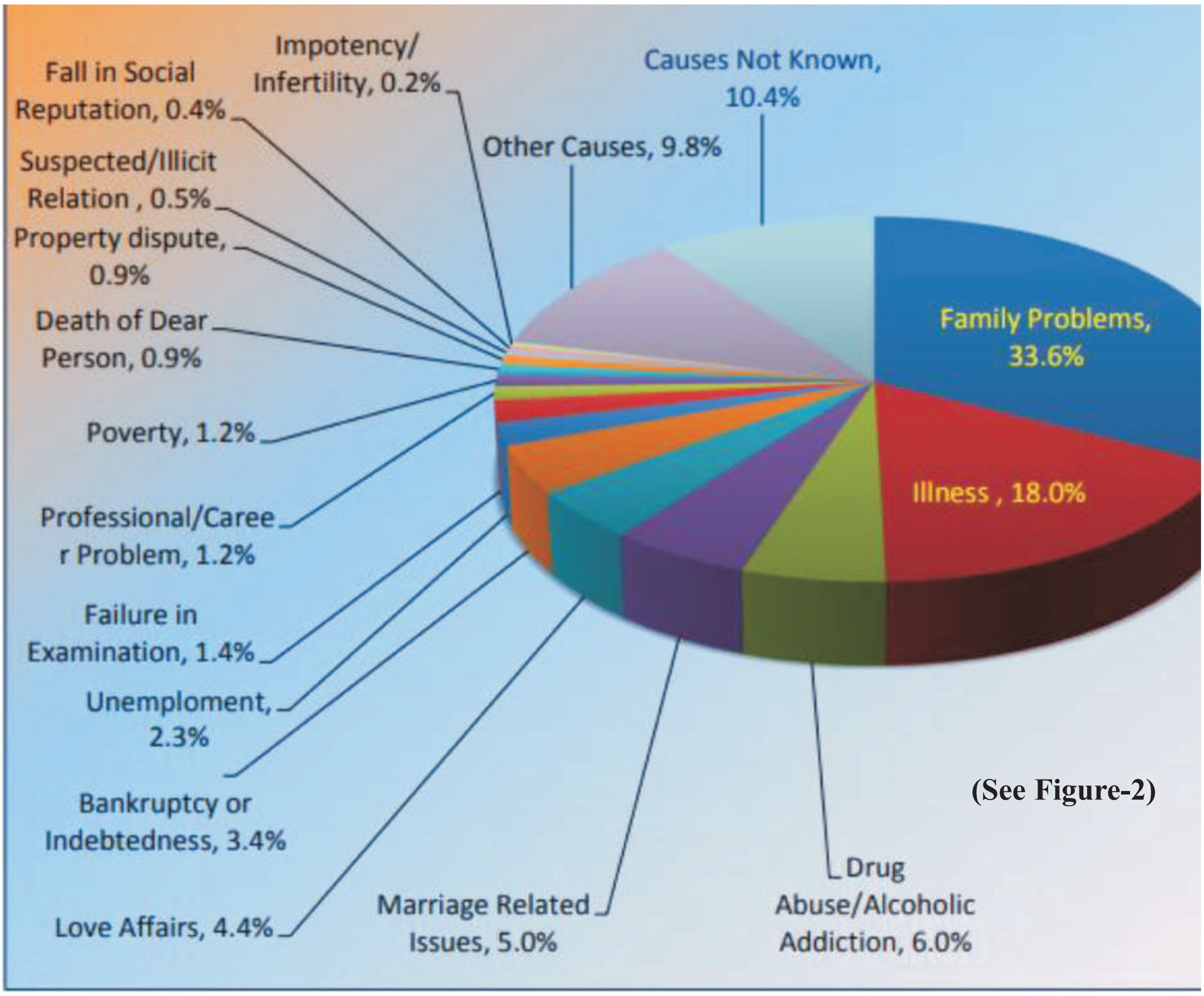

(See Figure-2)

databases of the Indian Government, data.gov.in, and NCRB annual released data on suicides.

Analysis -

First, let's have a look over the general statistics of suicides in India over the year 2020, this is on the account of Annual Suicide data released by the Indian Government, 'Accidental Deaths and Suicide in India', [4] Maharashtra, Tamil Nadu and Madhya Pradesh lead the contribution to suicides in India with nearly or over 10 percent of the total suicides happening in these states. **(See Figure-1 & 2 on back page).**

When talking about the major causes of suicides, according to ADSI, Family Problems' and 'Illness' were the major causes of suicides which accounted for 33.6% and 18.0% of total suicides respectively during 2020. 'Drug Abuse/ Addiction' (6.0%), 'Marriage Related Issues' (5.0%), 'Love Affairs' (4.4%), 'Bankruptcy or

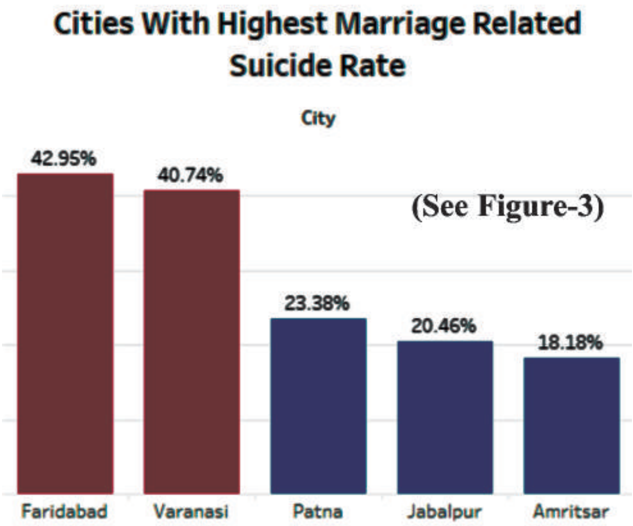

(See Figure-3)

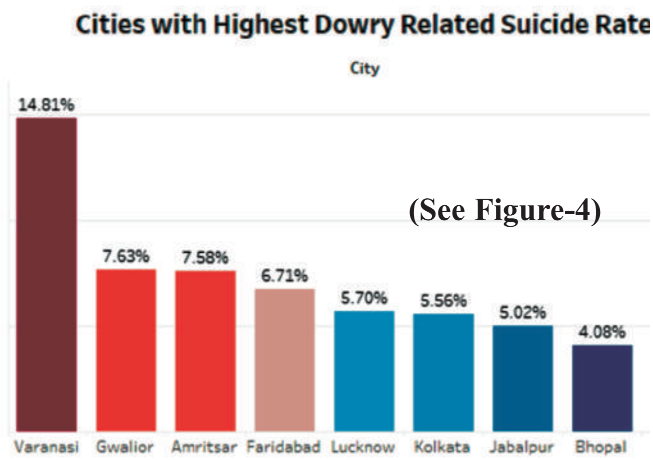

(See Figure-4)

Indebtedness' (3.4%), 'Unemployment' (2.3%), 'Failure in Examination' (1.4%), 'Professional / Career Problem' (1.2%) and 'Poverty' (1.2%) were other causes of Suicides [4], this proves the analogy of Durkheim furthermore that suicide indeed is influenced by societal causes and these causes always exist in a social environment, as in one way or the another, family issues and illness leads to a person experiencing social pressure which becomes the societal cause. **(See Figure-3)**

According to the Data Released on [5], the cities with the highest suicide rate due to dowry are being shown above, Varanasi, Faridabad, Amritsar, and Gwalior are the cities to look at in category, they have the highest suicide due to dowry related issues to total suicides ratio. It can be categorized as a fatalistic type of suicide where a person commits suicide to excessive pressure being put on them by the norms of society.

When it comes to suicides due to marriages, we see a repeated pattern, where cities like Varanasi, Faridabad, and Amritsar are visible again. Whereas we see a new entrant, 'Patna', this can be accounted to the forced marriage culture of the city.

The division of Gender gives us more insights into the societal impact of things, when it comes to Suicides due to dowry, males account for less than 7 % of the suicides in India, while females account for a staggering 93%, this goes to show that the fatalistic practice of dowry is contributing to a major number of female suicides. Whereas Divorce shows altering numbers, where females account for 45 % of the suicides but 55% of suicides reported due to divorce are of males. This expands on the theory of Edward Royce who states "because the marital relationship benefits the mental health of husbands more than wives, Durkheim argues, the destabilization of marriage is more harmful to men than to women. Men are more in need of the constraint marriage provides, and women are more in need of freedom" [6]. **(See Figure-4 & 5 on next page)**

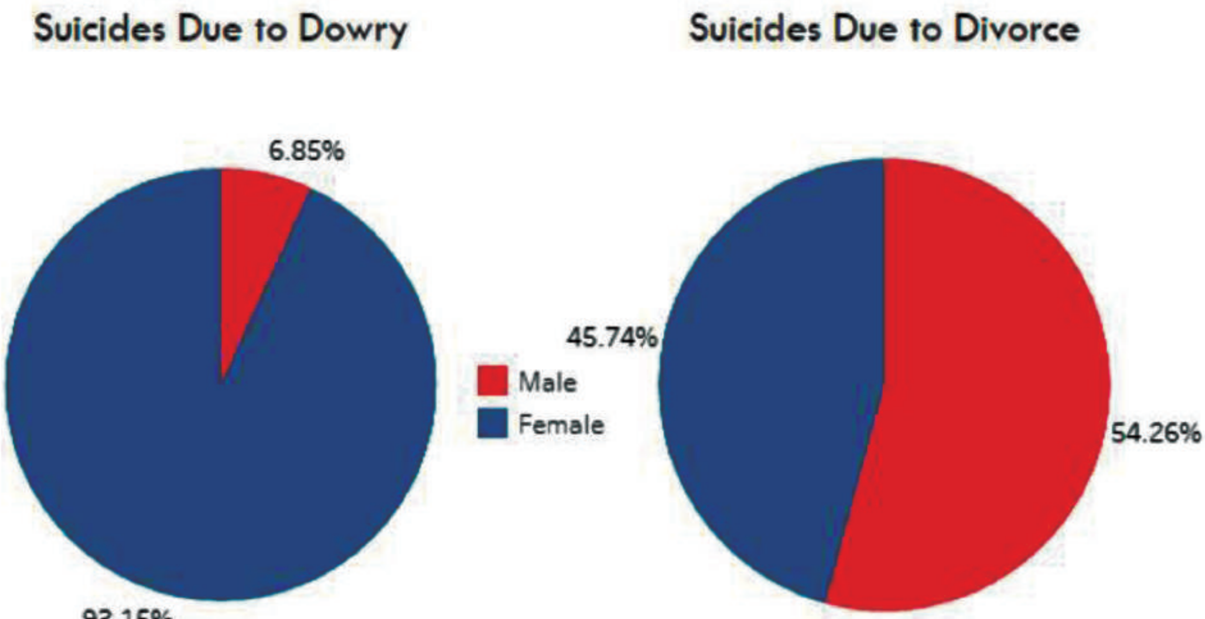

(See Figure-5)

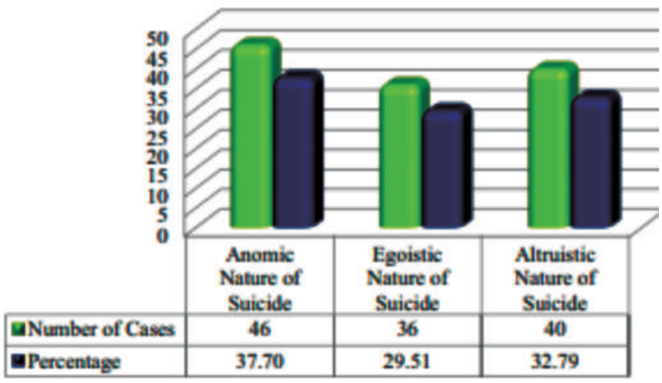

(See Figure-6)

In Paper [7], the authors aimed to divide the type of suicide in the suicides which occurred due to COVID- 19 in the pandemic's Tenure, they divided the suicides into the 3 given types, the results showed that the Anomic type of suicide is most common accounting for 37.7% of the suicides, followed by Altruistic and Egoistic nature of suicides with 32.79 % and 29.51% respectively.

Conclusion -

This study concludes that the nature of committing suicide is anomic, egoistic, and altruistic in nature and every type of suicide is a result of societal factors proving Durkheim's concept and its successful application on Indian Society. This study also reveals some great insights on the Gender division and the suicides related to factors only present in India, e.g. – Dowry.

References

1. Durkheim, E. (1951), Suicide: A Study in Sociology, Free Press, New York, NY.
2. Saraff, P. (2020), "Suicide, the epidemic we are overlooking", The Indian Express, 24 June, available at: https://indianexpress.com/article/opinion/suicide-the-epidemic-we-are-overlooking-6472617.
3. Sahoo, S., Rani, S., Singh, P.S., Pal, A., Mehra, A., Chakrabarti, S. and Grover, S. (2020), "Self-harm and COVID-19 pandemic: an emerging concern – a report of 2 cases from India", Asian Journal of Psychiatry, Vol. 51, pp. 1-2.in Education Conference, Rapid City, SD, pp. F2A-1 – F2A-3.
4. https:// ncrb.gov.in / sites / default / files / adsi2020 _ Chapter- 2 -Suicides.pdf.
5. https://data.gov.in.
6. Classical Social Theory and Modern Society: Marx, Durkheim, Weber by Edward Royce.
7. A sociological study of suicide during COVID-19 in India ISSN: 2042-8308, Article publication date: 12 December 2020, Issue publication date: 23 February 2021.

◈◈

Received: 02 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

A Linear Model for Estimation of Force of Mortality

- R. B. Tiwari
Assistant Professor -
Department of Statistics,
D.A-V. College, Kanpur-208001

Email:
dr.rbtiwari@gmail.com

Avstract

In demographical studies several models have been defined for laws of mortality experienced by human and animal populations. De Moivere has given a model for describing the force of mortality in the year 1725, followed by Gompertz in the year 1825. Important contributions in studies on force of mortality have been made by Makeham in the year 1860. Both the linear as well as non-linear models have been proposed for studying the force of mortality. In the present study a linear model has been proposed to describe the law of force of mortality in demographical studies. The appropriateness and superiority of the proposed linear model has been verified with the help of different data sets and comparison chart has also been made between the proposed model and Makeham's model.

Key words: ***demography, force of mortality, linear model, Makeham's law.***

1. Introduction -

Several models have been used for defining laws of mortality experienced by human or animal populations. Some of the important mortality models are listed below. We are listing only the deterministic component of the models.

(a) De Moivere's mortality Model -

In the year 1725, De Moivere has given a mortality model as

$$\mu(X) \text{ or } s(X) = k(w-X), \qquad X \geq 0 \qquad \dots(1)$$

where $\mu(X)$ or $s(X)$ represents force of mortality at age X, k and w are constants.

(b) Gompertz mortality Model -

In the year 1825, Gompertz has given mortality model as

$$\mu(X) = b.c^X, \qquad X \geq 0 \qquad \dots(2)$$

where b and c are constants.

(C) Makeham's Model -

Another important contribution for defining mortality model was due to Makeham W. M. in the year1860. He has

described force of mortality as

$$\mu(X) = a + b.c^X, \qquad X \geq 0 \qquad \ldots.(3)$$

The constant 'a' represents the mortality due to accident and term

$$b.c^X$$

represents themortality due to aging. When c =1, Makeham's law assumes a constant force of mortality.

Luther (1984) has described a Linearization procedure for estimation of cumulative age specific fertility per woman at the age X. His procedure provides a check for fit of Makeham's model to cumulative age specific fertility. Taylor and Worcester (1978) have assumed themethods of performing mortality graduation in Makeham's formula for graduation of mortality. Dukas (2008) has studied mortality rate in a wide range of animals including a variety of insects. He has used Makeham's model for his study on mortality rate.

The Makeham's law described by relation (3) is a non linear model. Draper and Smith (1998) have classified such type of a model as intrinsically non-linear model. The application of classical least squares method of estimation is not directly applicable to estimate its parameters. The estimation of parameters involves complicated iterative procedures and obtaining intelligent guess values. Draper and Smith (1998) and Ratkowsky, D A (1983) have given a detailed description of various problems in non linear least square estimation.

In the present investigation a linear model is proposed for estimation of force of mortality in demographic studies. Its appropriateness has also been examined with the help of data sets obtained from various authentic sources. The proposed linear model has been found to fit better in all data sets, as compared to Makeham's model.

2. The Proposed Linear Model and Estimation of its Parameters -

A statistical model which is linear in its parameters is proposed for studying the force of mortality law.

$$Y_i = a + bX_i + \frac{c}{X_i} + dX_i^2 + \frac{e}{X_i^2} + U_i, \qquad \ldots(4)$$

$$where \quad X_i > 0, \qquad i = 1,2,\ldots,n,$$

and $n > 6$.

Also

$$E(U_i) = 0, \qquad \forall i = 1,2,\ldots,n$$

$$E(U_iU_j) = \begin{cases} 0 \; for\; i \neq j; & i,j = 1,2,\ldots,n. \\ \sigma^2 \; for\; i = j; & i,j = 1,2,\ldots,n. \end{cases} \qquad \ldots(5)$$

Yi represents force of the mortality μ (X) at the age Xi.

The parameters of the model (4) are a, b, c, d and e. U's are independently and identically distributed random variables with mean zero and fixed variance σ^2 . U's are also uncorrelated. For obtaining maximum likelihood estimates of parameters, U's are assumed to be normally distributed. n is number of observations on variables Y and X. The model (4) has been used by Misra (1992) for his studies on asymptotic regression models and its utility in studies on force of mortality in demography has been examined by Tiwari (2010).

The model (4) can also be written in matrix form as

$$Y = X.B + U \qquad \ldots. (6)$$

$Y = [Y_1\ Y_2 \ldots\ldots Y_n]'$,

$$\text{Where } X = \begin{bmatrix} 1 & X_1 & \frac{1}{X_1} & X_1^2 & \frac{1}{X_1^2} \\ 1 & X_2 & \frac{1}{X_2} & X_2^2 & \frac{1}{X_2^2} \\ \ldots & \ldots & \ldots & \ldots & \ldots \\ \ldots & \ldots & \ldots & \ldots & \ldots \\ 1 & X_n & \frac{1}{X_n} & X_n^2 & \frac{1}{X_n^2} \end{bmatrix} \quad \ldots.(7)$$

$B = [a\ b\ c\ d\ e]'$

$U = [U_1\ U_2 \ldots\ldots U_n]'$.

The least square estimates of parameters of model (4) can be obtained by adopting standard procedures as described in Montgomery (2003).

The least squares estimators of parameters of model (6) are

$$\hat{B} = [\hat{a}\ \hat{b}\ \hat{c}\ \hat{d}\ \hat{e}]' = (X'X)^{-1} X'Y$$

And the variance covariance matrix of the parameter estimators is

$$Var(\hat{B}) = (X'X)^{-1}\sigma^2 \quad \ldots.(8)$$

The least squares estimators defined in (7) are Best Linear Unbiased Estimators (BLUE). If U's are normally distributed, the maximum likelihood estimates of B can also obtained which are identical to (7) along with same variance-covariance matrix as in (8). It is to be noted that for fitting model (4) requires at least six observations on X and Y. The expression for residual mean square is

$$S^2 = \frac{1}{(n-5)} \sum_{i=1}^{n} (Y_i - \hat{Y}_i)^2 \quad \ldots(9)$$

where $\hat{Y}_i$ is estimated value of Y_i and

$$\hat{Y}_i = \hat{a} + \hat{b}.X_i + \frac{\hat{c}}{X_i} + \hat{d}.X_i^2 + \frac{\hat{e}}{X_i^2}$$

The values of coefficient of determination R^2, and Mean Absolute Errors were also calculated and described in Montgomery (2003).

1. Fitting of Proposed Model to Data Sets -

The appropriateness of the proposed model (4) has been examined with the help of data sets obtained from Tenenbein and Vanderhoof (1980).The following Table - 1 gives least square parameter estimates, Coefficient of determination R^2, Residual mean squares s^2 and Mean Absolute Error for model (4) . For comparing proposed linear model (4) with Makeham's model (3), the residual mean squares s^2 values of Makeham's model (3) are also given.

Table-1

Estimates	Data Set-1	Data Set-2	Data Set-3	Data Set-4
$\hat{a}$	21503.2	35208.2	12948.7	16894.4
$\hat{b}$	-254.184	-398.557	-162.548	-205.411
$\hat{c}$	-810159.00	-1.375×10^6	-457538.0	-611790.0
$\hat{d}$	1.13634	1.68773	0.768917	0.931074
$\hat{e}$	1.143×10^7	1.999×10^7	6.03×10^6	8.2188×10^6
R^2	99.9864	99.9463	99.9465	99.802
M.A.E.	0.79919	1.62232	0.977936	1.43546
s^2 for model(4)	2.09069	6.13798	2.80649	5.77596
s^2 for model(3)	28.57095	14.74978	2.98055	27.68562

Source of the Data: Tenenbein and Vanderhoof (1980).

It is observed that for the proposed model, values of coefficient of determination R^2 are very high for all data sets and M.A.E. values are negligible in all the data sets. It is interesting to note that residual mean squares s^2 values for proposed model (4) are much smaller than those of Makeham's model (3) for all the four data sets.

It leads to the conclusion that model (4) performs better than model (3). Thus the proposed linear model not only fits better to all data sets but also more efficient than Makeham's model (3).

Conclusions -

The analysis of the data sets reveal that the proposed linear model (4) can be considered as a good alternative to Makeham's law as it describes the data sets in a much better way as compared to Makeham's model. The proposed model is linear in its parameters and method of least squares of parameter estimation is directly applicable which gives best linear unbiased estimators of the parameters. The Makeham's model is intrinsically non-linear model and estimation of its parameters is also complicated. It has also been observed in all data sets that the values of residual mean square for Makeham's model are very high as compared to values of residual mean square of proposed linear model (4). Thus, the model (4) is more efficient thanMakeham's model (3). It is strongly recommended that proposed linear model (4) should also be used in studies relating to force of mortality in demography.

References

1. Draper, N.R. and Smith, H. (1998). Applied Regression Analysis, 3rd ed. John Wiley.
2. Dukas R, 2008, Mortality Rates of honey bees in the Wild, Insectes Sociaux, Basel.
3. Luther N Y, 1984, Fitting age specific fertility with the Makeham curve, Asian Pac Cens Forum, 1984, 10(3):5-12.
4. Misra G C (2020). “Some Estimation Precedures in Non-Linear Statistical Models”. The Unpublished Thesis of Ph. D., Kanpur University, Kanpur.
5. Montgomery D C, Elizabeth A P and Vining G G (2003),. Introduction to Linear Regression Analysis,3rd Edition. John Wiley & Sons, Inc. New York.
6. Ratkowsky, D.A. (1983). Non-Linear Regression Modeling. Marcel Dekker INC, New York.
7. Taylor G C, 1978, Concerning Hardy's method of performing a Makeham graduation, JSS 22 (1978) 217-224.
8. Tenenbein A and Vanderhoof I.T.,1980, New mathematical laws of select and ultimate mortality, Transactions of Society of Actuaries 1980, vol. 32.
9. Tiwari R.B. 2010, Some contribution in use of linear approximation in estimation of non linear statistical models, The Unpublished Thesis of Ph. D.,C.S.J.M. University, Kanpur.

Received: 02 Jun3., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

Evaluation of Phenotypic and Genotypic Variation among different Candidate Plus Clumps of *Dendrocalamus Strictus*

- Dr. Pradeep Singh
Assist. Professor - Dept. of Botany, D. B. S. College, Kanpur-208006 (U.P.)
E-mai : singhpradeep2003@gmail.com

- Satyendra Kumar Srivastava
Assist. Professor-Dept. of Botany, D. B. S. College Kanpur - 208006
E-mail: satyendradbs@gmail.com

- Narendra Kumar Shukla
Assist. Professor-Dept. of Botany, D. A. V. College Kanpur-208001
Email: narendra71dav@gmail.com

Abstract

Dendrocalamus strictus is a bamboo species belonging to sub family Bambusoideae of family Poaceae. It is monocarpic and multipurpose species, plays a vital role in socio-economic condition of the rural communities. A study was carried out to find out the genetic diversity of different traits like diameter of culm, height of culm, no. of internodes and length of internode of Dendrocalamus strictus at 30 months growth. The analysis of variance showed highly significant differences for all the traits studied. The present study will be useful in screening and collection of best germplasm of Dendrocalamus strictus for improvement and multiplication of good quality bamboo vis a vis enhancing the productivity.

KeyWords:*Dendrocalamus strictus, Genetic diversity, Germplasm, Analysis of Variance.*

Introduction-

Dendrocalamus strictus is a bamboo species belonging to sub family *Bambusoideae* of family Poaceae. It is monocorpic and multipurpose species in India, their are 125 indigenous is well as exotic species of bamboo distributed in 23 generas in Uttar Pradesh. Bamboo provide basic necessities of life *viz.* fuel, food, shelter, furniture and play a significant role in national economy. It has the potential to grow on varied soils in different climatic zones of Uttar Pradesh. *Dendrocalamus strictus* is the main bamboo species occurs in deciduous forests of all over India except in North-west Bengal, Assam and most region of the west coast (Troup, 1921). The present study will be useful in screening and collection of best germplasm of *Dendrocalamus strictus* from different forest divisions of Vindhyan region of Uttar Pradesh.

Material and Methods-

An extensive survey was conducted in plantation and natural forest of Bamboo. 30 CPCs (Candidate Plus Clumps)

**** This work is the part of Ph.D. Thesis of First Author***

were selected from different forest divisions of Vindhyan region. (The details of the site are given in Table – 1). Five random rhizomes were collected from each CPCs (Candidate Plus Clumps) as selected during 1998. The selected rhizomes were planted in research nursery at Kotwa (Geographically lies between latitude 24° 28' - 25° 31' North and longitude 82° 36' - 83° 36' East and altitude 205 meter above sea level), Mirzapur forest division during the month of July/August 1998 in Randomized Block Design with four replications in raised bed (size 10.0 m x 1.0 m and raised upto 20 cm. from ground level). The beds were prepared with the mixture of soil, sand and well-rotted sieved Farm Yard Manure (F.Y.M.) in 1:1:1 ratio. Before planting in beds, the rhizomes were treated with Bavestine fungicide (Carbendazim 50% WP) and then planted at the spacing of 1.0m x 1.0m. The beds were irrigated by flooding as and when required.

The observations recorded on various growth parameters were subjected to statistical analysis Snedecor and Cochran (1967). **(See Table-1).**

Result and Discussions-

Data pertaining to the correlation coefficient between different morphological traits under study (Table-2) Analysis of variance indicates the significant difference among all the traits under study *viz.* diameter of culm, height of culm, number of internodes and length of internode. The CPCs No. 21 attained the maximum height (530.50 cm.) and minimum (163.75 cm.) was recorded for CPC no. 9. The maximum diameter (2.98 cm.) was recorded in case of CPC no. 21 and minimum (0.75 cm) for CPC no. 9, Maximum number of internodes (34.50) was recorded in case of CPC no. 21 and minimum (13.25) for CPC no. 9. The maximum length of internode (18.75 cm) was recorded in CPC no. 21 and minimum (10.35 cm) for CPC no. 10.

Standard Error (SE) calculated for diameter of culm, height of culm, number of internodes and length of internode was observed 0.14, 28.61, 1.85 and 1.21 respectively. Similarly critical difference (CD) at 5% level was observed 0.31 for diameter 56.84 for height, 3.76 for number of internode and 2.36 for length of internode. The coefficient of variation (CV) calculated was 27.11, 28.07, 20.14 and 12.65 for diameter, height, number of internode and length of internodes of *Dendrocalamus strictus* respectively.

The extent of variability is also assessed by genotypic and phenotypic coefficient of variation, the highest phenotypic coefficient of variation was observed (29.68) for height and it was found to be lowest (16.06) for length of internode and the highest value of genotypic

Table – 1.
Site details of *Dendrocalamus strictus* CPCs (Candidate Plus Clumps) selected from different forest Divisions of Vindhyan Region

Location (Forest Divisions)	Forest Type	Latitude (°N)	Longitude (°E)	Average Annual Rainfall (mm)
Renukoot	Tropical dry deciduous	23° 52' - 24° 21'	82° 40' - 83° 24'	1254.00
Mirzapur	Tropical dry deciduous	24°28' - 25°13'	82° 36' - 83° 31'	875.50
Obra	Tropical dry deciduous	24° 17' - 24° 14'	82° 42' - 83° 31'	1200.00

Table – 2

Phenotypic and Genotypic coefficients Variation among Different Morphological Traits of *Dendrocalamus Strictus*

CPC No.	Diameter (cm.)	Height (cm.)	Number of Internodes	Length of Internodes (cm.)
1.	1.62	217.50	19.25	9.58
2.	2.04	397.75	22.00	13.13
3.	2.15	345.50	25.00	14.75
4.	2.21	373.25	24.50	12.00
5.	1.34	198.75	17.00	11.25
6	2.00	330.00	23.75	13.75
7	2.15	413.75	25.00	15.63
8	2.75	326.25	23.50	15.13
9	0.75	163.75	13.25	16.00
10	2.24	320.00	23.50	10.35
11	2.09	338.75	25.00	13.63
12	2.15	327.50	26.50	12.63
13	1.77	255.00	20.00	12.30
14	1.85	277.50	20.50	14.50
15	0.84	178.75	14.75	10.63
16	1.65	272.50	23.25	12.63
17	2.40	475.00	26.75	14.25
18	2.91	425.75	28.50	16.55
19	2.01	343.75	24.75	14.25
20	0.93	177.50	15.75	11.00
21	2.98	530.50	34.50	18.75
22	2.70	425.75	32.25	15.00
23	2.72	415.50	32.00	15.38
24	2.03	342.50	24.25	15.00
25	2.36	357.97	28.75	16.50
26	2.63	492.50	26.25	16.25
27	2.35	435.00	28.00	14.75
28	2.85	440.00	30.50	16.75
29	2.35	447.00	30.00	13.25
30	2.02	447.50	24.50	15.38
Mean	**2.09**	**349.75**	**24.45**	**14.031**
SE ±	**0.14**	**28.61**	**1.85**	**1.21**
F Test	**	**	**	**
CD at 5%	**0.31**	**56.84**	**3.76**	**2.36**
CV	**27.11**	**28.07**	**20.14**	**12.65**
PCV	**28.75**	**29.68**	**22.12**	**16.06**
GCV	**26.65**	**26..57**	**19..40**	**11.32**

* Significant at 5% level
**Significant at 1% level

coefficient of variation was observed (26.65) for diameter where as it was lowest (11.32) for length of internode. The results are in accordance with earlier reports of Rathinum *et al*. (1982) and Subramanian *et al*., (1995). The results are in accordance with Seethalakshmi *et al*., (1983), Kumar *et a*l., (1988) and Singh *et al*., (2008) described various methods of propagation of bamboo at nursery stage. Comparative study of planting methods of culm cutting by Nduwamungu (2018), Correlation Coefficient among different morphological traits of *Dendrocalamus strictu*s have also studied by Singh and Srivastava (2020). Lal *et al*., (1998) studied on the vegetative propagation of *Dendrocalamus strictus*, *Dendrocalamus hamiltonii, Bambusa tulda* and *Bambusa bambos* through macro proliferation by raising the rhizomes in nursery beds.

The present study provides a clear cut indication for good selection of CPCs for cultivation in Vindhyan region of U.P. for improvement and multiplication of good quality bamboo *Vis-a-Vis* enhancing the productivity. **(See Table-2 on Back Page).**

References

1. Kumar, A., Gupta, B.B. and Negi, D.S., 1988. Vegetative Propagation of *Dendrocalamus strictus* through macro-proliferation., *Indian Foreste*r, 114(9): 586 – 568.
2. Lal, Pyare, Rawat, G.S. and Bist, N.S., 1998. Nursery Techniques of Bamboo-standardization of planting method. *Indian Foreste*r, 124(3): 184 – 191.
3. Nduwamungu Jean, 2018. Bamboo (*Bambusa vulgaris*) Regeneration by cutting : comparative study of planting methods of culm cutting at UR-CAVM Busogo Campus Tree Nursery, *Journal of Health Science*, 6 : 42-48.
4. Rathimum, M. Surnedran, C. and Konar, 8. (1982), Inter-relationship of good yield components in Eucalyptus tereticornis, Indian forester 108: 460-470.
5. Seethalakshmi, K.K., Venkatesh, C.S. and Surendran, T., 1983. Vegetative Propagation of Bamboo using growth promoting substances. I. *Bambusa balcooa* Roxb. *Indian Foreste*r, 6(2): 98 – 103.
6. Snedecor, G.W. and Cochran, W.G., 1967. Statistical Methods, *Oxford and IBH*, New Delhi, 593pp.
7. Singh Pradeep, Srivastava Satyendra Kumar and Dubey P., 2008.. To Analyse the Growth Variation in *Dendrocalamus strictus* at Nursery stage, *Dayanand Journal of Sciences,* 1 (1): 23-27.
8. Singh Pradeep, and Srivastava Satyendra Kumar, 2020. Correlation Coefficient among different morphological traits of *Dendrocalamus strictu*s, Trends in Biosciences, 13(11):683 – 685.
9. Subramanian, K. N. Mandal, AK and Nicodemus, A., (1995), Genetic variablity and character association in Eucalyptus grandis, Annals of forestry, 312): 134-137.
10. Troup, R.S., 1921. The silviculture of Indian trees, Part-III, Oxford, Clarendorn Press, 1195 pp.

◈◈

RNI : UPMUL00620/24/1/2014-TC ISSN : 2394-4366
Received: 02 Jun., 2021; Accepted: 21 Jun.-2021, Published: July - September, 2021 Issue

An Analysis of The Modern Poem of W.B Yeats *The Second Coming* Through The Post Modern Lens with Special Impact on Decentralization

- Dr. Laxmi Pandey
Assistant Professor -
Dept. of English,
D.A.V. College, Kanpur-208001 (U.P.)

E-mail:
drlaxmi78@gmail.com

Contemporary world is a world of progressive changes it has not only introduced new concepts, but also reshaped many old concepts. We are getting familiar with many new terms day by day that has opened many new grounds in almost all the fields of human life. It has broadened the vision beyond the human boundary. The study of human psyche and emergence of various new theories have brought revolutionary changes in every field. Postmodern theory has changed the established approach and reshaped the human faith and ideologies in all most all the fields of arts, science, religion and culture. Poets, philosophers, scientistsintellectuals havebeen the precursors of new ideologies in the society but advancements in the field of technologyand communication have electrified the ideas of all these eminent personalities all over the world .Various poets writers and novelists have filled the space by their vision and approach .They have also helped the mankind to make the people aware not only about their present but also for their future. We have examples of such great poets who tried to save the future of mankind from the grim realities of the life. The fast changing world is passing through modernization to post modernization, localization to globalization, and centralization to decentralization. This paper is an attempt to analyze the remarkable changes in Literature and Society due to decentralization under the impact of Post-Modernism.

Decentralizationis a very wide concept that applies not only in the field of politics, economicsand sociology but also in art, literature and culture. It carries different meanings in different contexts in politics; it means the shifting of power from central government to state or the other local bodies, in business;and it means the shifting of responsibility to all the members, in technology; the World Wide Web is a decentralized platform. Under the impact of decentralization art and literature are touching new heights regularly. Decentralization has turned the culture into multiculturalism. There cannot be any date of decentralization but it has deeply affected the society as a whole .Literature covers almost all the aspects of society.Under the impact of decentralization changes have been found in literature as it has turned down the age-old literary theories and concepts. Darwin's theory of evolution played a very important roleas it has changed the age-old

established concepts and believes of human beings. It was the faith of common people that the universe has been created bythe divine force but according to Darwin's theory divinity plays no role rather it is a result of evolution. These changes have shaken the very foundations of human life and gradually the progressive vision of 20^{th} and 21^{st} century have given the space to various new theories.

Literature is a mirror of society it reflects our deeds and ideas and actions .It has the power to give concrete form to any abstract idea. It has been serving the society since the very existence of human beings and maintaining Peace and love among the human beings all over the world. In the form of various great epics and grand narratives people have been taught and even judged before the promulgations of law. It has played very important role in preserving culture, tradition and values of the society. It has been the source to carry forward the cultureand civilizationfor future. Good and prosper literature is wealth of any Nation .we are also informed about all Civilizations, cultures and traditions through the literature.

Literature is an integral part of human life it is the only discipline that covers past, present and future. These are two aspects of the same coin the great poets, and the writers have also affirm the power of literature through their works. It keeps the seeds of revolution and has the power to give life to any movement. Even before the printing press in ancient times we had oral literature to influence the people and Society of that time. Literature covers almost all the areas of life from religion to Revolution, visible to invisible, living to nonliving emotion to reason and Earth to space. It presents positive aspect of society in the form of learning and present negative aspect through the ways of teaching that teaches future generations. We cherish the sweet memories and become nostalgic by remembering various themes presented by literature .The famous essyist*Bacon says study serves for the delight and for ornament.* If we look the current scenario through the Canon of postmodern approach it has increased the complexities of human life because of lack of faith in all most every field either religion or science. Where the world is decentralizing from local to global, amazingly human being is decentralizing self to inner self under the impact of advancement in psychoanalytical theory. In modern age people have become self-centered where they try to search their place and space in their life, but in postmodern world the search starts with self and ends with the inner self. The study of human psyche finds a new ground in the field of literature by decentralizing impact. It has amazingly broadened the area of literature by shrinking self to inner self as human mind is unpredictable it has also revealed the mysteries of human relationship.

There are poets and writers who have contributed to the society with their different aims and objectives. They have not only amused the individual and the society, but also instructed and transformed the both for their better future. They have also presented picture of the society from future perspectives. Among those great poets of nineteenth and early twentieth century we have Wordsworth, Shelley, T. S Eliot, W.B Yeats and many more. W .B Yeats is one of the most prominent poets of 20th century.W.B Yeats himself admits of modern world and it has been well explained by M R. Rosenthal.;

> Towards the end of his long career, William Butler Yeats wrote' 'I seek an image of the modern mind's discovery of itself ".He never described his own work more truly or more succinctly. Yeats spoke to the modern mind in every way. The rise of nationalism and the political problems that were to create two world wars, the shattering and challenging effects of new science on old beliefs, the reopening of every question of truth and value all these elements entered his imagination and were then absorbed and transmuted into the symbolic structure of his poetry.[1]

The second coming is one of the most iconic works of W .B Yeats. The poem presents a Universal approach as it has been written before a century but proves true even today. The poet focuses his attention on decentralization of tradition, culture, and increasing greed through

the poem *The Second Coming.*

The title is very appropriate as it symbolically attacks on modern approach of uselessness of established normsof spirituality and philosophy in the society. He emphasizes on the second coming that there is a need of change in the society.The poet expresses the chaos and confusions by using the technique of symbolism. Since the very beginning symbols are used in Literature to enrich and reveal the deep meaning of poet's intention, so symbols are closely connected with literature and give concrete meaning to the abstract ideas. It gives pleasure, satisfaction and comprehensive understanding to readers also.W.B Yeats is considered as one of the most important symbolist poet of 20th century. He was influenced by French symbolist movement. The poem was written after the world war one which killed millions of people and brought uncertainty to the world. These incidents changed his vision and faith towards life. He belongs to romantic school of poetry but the harsh realities and their horrible consequences changed him into a great 20th century realistic poet from 19 century romantic poet. Through this change he became able to explore his vision. He achieved this maturity through his consciousness for the society and constant devotion towards work .The poem carries all the themes which present the cruel realities of the life like violence, greed of materialism and spiritual sterility. Through the poem he focuses his attention on the causes of decentralization. People have become decentralized due to the lack of the hold of tradition culture and value.

In the present century people have become victim of fear,havoc and uncertainty. It has changed the complete social structure and social system. Advancements in Science and Technology have been made to connect human beings with one another but unfortunately it has disconnected them. It has been analyzed now modernism is good from the point of view of progress and but the progress of human beings does not rest only in the progress of Science and Technology. It covers only one aspect human life while the other aspects are art, literature, culture and tradition.

It can be understood as the external and the internal factors which governs the society and the individual. The progress in Science and Technology is to meet out the problems of external world and for the internal factors the role of tradition and culture is very much important. So a fine blend of Technology and tradition is very much important otherwise there would be the need for many comings. Yeats says:

Turning and turning in the widening gyre
The Falcon cannot hear falconer;
Things fall apart; the center cannot hold;
Mere Anarchy is loosed upon the world[2]

Through these lines the poet presents the conflict and struggle of a modern man with no vision and mission. Human being is completely lost under the control of materialistic world where the voice of human love care and dignity is unheard. Confusion and disorder is prevailing everywhere. Poet mourns over the current situation and says Centre is considered as a powerful source or medium to control the individual, society, Institution and nation but it has lost the control on all the units. World is facing traumatic conditions because of all these problems. Use of science technology and rationality have turned human being into a beast it has brought destruction in this world. He talks about decentralization where the established norms, culture, tradition and spirituality have been decentralized from the center. Poet wants to revive and restore the humanity in the society. Poet tells about the decentralization of tradition, culture and order these were the main source for humanity love and hope:

Surely some Revelation at the hand;
Surely the second coming is at the hand
The second coming!
Hardly are those words out
When the vast image of
spiritus Mundi Troubles at site.

These lines present hope and faith of human beings in this traumatic condition poet expects for a new beginning he hopes for a second coming. The calamities of World War and degradation in human values have forced us to think about the second coming as first one has been decentralized due to lack of order and

humanity. The poet presents a new phase of this word which is waiting for a new order the poet presents various interpretations of modern age but focuses attention on disappointment and pessimistic approach among the people. The poet knows very well the power of spirituality so he says people have gone away from their culture and values.

The ceremony of Innocence is drowned
The best lack all conviction,
while the worst
Are full of passionate intensity.

Poet mourns for innocence that is no more in growing materialism .It has made people artificial in their nature behavior and expression.The poem gives perfect example of harmful effects of modernization, urbanization and globalization. Dry and dull atmosphere is being observed in art, literature and culture. The gradual progress in Science and Technology brought tremendous upheaval in the life of the people all over the world. One sided development in rational approach has made people dull and dry. The lack of moral values in life is reason of all this. The people who are responsible to meet out the problems have become only the spectators of the society. It presents grim realities and tough predicament human beings. Materialism has snatched the individuality and sensitivity. Spirituality is being used to hide the real face from the society. Poet gives a call to back to the originality and purity. It is essential for the human existence.

If we observe the poem through the current scenario it carries with itself both the things: the philosophy, which is essential for the human existence and the reality which is being ignored at the cost of human existence. The world has gone through two World Wars, it has forced the people to rethink over the ideologies faiths and believes of modern world. Human being has been at the center during the modern period. In handling Human need and greed human being himself forgot to save his existence. Though written in the modern age the poem has the glimpses of the postmodern era. As we all know there cannot be any fixed date of starting of any age but there are some changes which point out a sharp departure from the old age and the beginning of the new one. The conditions which are presented through the poem tells us about the realities of modern life but it also speaks about the beginning of postmodern era. Postmodern era also rejects the principles of modern age as it has become totally failed in nurturing the human life. This new era has been revealing various shocking facts that reminds us about the Victorian age. It has left the people in a very confusing state because modernity has lost its control and postmodernity still has to take over the world.

The poem is very much important from thethematic point of view .It carries multiple themes like materialism, lack of Faith, anarchy and ignorance. . It help us to understand the darker side of man made progress. Various social political and economic issues have emerged during the period due to lack of coherent waves. Nature is the burning example of the rejection ofthe progress in the form of Tsunami, Earthquake and flood. It also reminds us about one of the greatest poets of romantic age William Wordsworth who expressed his love for nature andimportant role of nature for the survival ofhuman beings.

Poem talks about fragmented world which is one of the most important characteristics of the postmodern world. The fragmentation has reached to human mind which has given Chaos to this world. Being an experimental poet, he rebelled against the traditional setup of the society, he also rejected the modern ways of thinking which led human beings towards destruction but supported Innovation and experiment for the development and upliftment of modern civilization. In almost all his poems he presents a ray of hope that brings love and happiness.

References

1. Rosenthal, M. The Modern Poets: A Critical Introduction Oxford : Oxford University Press 1966.
2. https://owlcation.com/humanities/W-B-Yeats-Rough-Beast-in-The-Second-ComingTitle: William Butler Yeats' "The Second Coming" Website: OWLACTION Publish Date: SEP 24, 2021Accessed: October 28, 2021. (Subsequent References have been made from the same text).

RNI : UPMUL00620/24/1/2014-TC ISSN : 2394-4366

Received: 02 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

Synthesis, Characterization and Antimicrobial Studies of Gadolinium Metal Soaps with Lower Fatty Acids

- Dr. Vibha Maheshwari
Assistant Professor -
Department of Chemistry,
R. B. S. (P.G.) College, Agra-282001
(U. P.)

E-mail:
kulshrestharakhi75@gmail.com

Abstract

Metallic soaps of gadolinium metal with lower fatty acids like butyric acid and valeric acid have been prepared and characterized by elemental analysis and infrared spectral studies. From IR studies it is clear that there is a hydrogen bonding between acid groups of two fatty acid molecules. So they exist in a dimeric form. In the present paper, biological studies have been carried out on some selected bacteria (E. coli, S. aureus, S. typhi) and fungi (A. niger, A. flavous, P. triticena) at different concentrations. Antimicrobial study shows that the synthesized soaps are bioactive.

The general formula of the synthesized complex is $(RCOO)_3Ga$ ***Where R is*** C_3H_7 ***or*** C_4H_9.

Keywords: - ***Butyric acid, Valeric acid, Gadolinium metal.***

Introduction -

Metallic soaps are becoming increasingly important in various industries such as textiles, paints, lubricants, greases, cement and stone, lacquers, cosmetics, emulsifiers, water-proofing agents, medicines, pharmaceuticals, germicides, painting ink, varnishes etc. These metallic soaps can also be used as adhesive for steel cord and rubber radial tires[(1-4)]. However, the applications of metallic soaps are largely depend upon the conditions and methods of preparation, so the information regarding the nature and structure of metal soaps is of great significance for their uses in various industries under different conditions. Soaps are in solid state.

Metallic soaps of carboxylic acids are more biologically active than the carboxylic acids[14, 15]. The present paper deals with the synthesis of metallic soaps of lower carboxylic acids and their antimicrobial activities and physico-chemical studies.

Experimental -

All the chemicals used in the synthesis were of AR

grade and purified by standard methods. Gadolinium soaps of butyric acid and valeric acid were prepared by the direct metathesis of the corresponding sodium soaps using a slight excess over the required amount of aqueous solution of gadolinium nitrate with vigorous stirring. The precipitated soaps was filtered off and washed first with distilled water and finally with alcohol. The soaps were dried in air oven at 50-60 ^{0}C purified by recrystallization. The solution of cerium soaps were prepared by dissolving the weighed amount of soaps in the required volume of benzene-methanol mixture (50-50%). IR spectra of soaps were recorded on Perkin-Elmer-842 spectrophotometer.

Biological Study -

Antimicrobial activities of carboxylic acids and their metallic soaps have been determined by serial dilution method[7]. In this technique, dimethyl formamide was used to prepare soap solutions of different concentrations (viz. 250 ppm, 500 ppm, 750 ppm and 1000 ppm). The graded dilution of the test compounds in a suitable nutrient (agar agar) and PDA medium were inoculated with the organisms under examination using aseptic techniques in an incubator at 37ºC. The antibacterial and antifungal activity of carboxylic acids and their metallic soaps have been screened *in vitro*, against bacteria (*Bacillus subtilis*, *Staphylococcus aureus*, *Escherichia coli* and *Salmonella typhi*) and fungi (*Aspergillus flavous*, *Aspergillus niger*, *Penicillium triticena* and *Fusarium species*).

Growth inhibition percentage of soap solutions was calculated by the following expression -

$$\% \text{ Inhibition} = \frac{C - T}{C} \times 100$$

Where C = Diameter of microbial colony (millimeter) in control plate, and

T = Diameter of microbial colony in treated (test) plate.

Results and Discussion -

The molecular formula and molecular weight of the metallic soaps were determined on the basis of elemental analysis. The analytical and

Table-1

S.No.	Compound	Mol. Weight	C	H	O	Metal
1	Butyric Acid	88.11	54.2	9.2	36.6	-
2	Valeric Acid	102.13	58.74	9.87	31.33	-
3	Gadolinium Butyrate	431.31	35.85	6.38	22.92	34.81
4	Gadolinium Valerate	445.49	40.59	6.14	21.65	31.63

Table-2

Compound	Zone Of Inhibition Of Bacteria											
	E. coli				*S. typhi*				*S. aurius*			
	250 ppm	500 ppm	750 ppm	1000 ppm	250 ppm	500 ppm	750 ppm	1000 ppm	250 ppm	500 ppm	750 ppm	1000 ppm
Butyric acid	35.26	65.55	65.85	65.89	35.21	55.45	65.55	75.69	35.29	55.48	64.70	75.94
Valeric acid	34.56	62.45	67.25	68.26	35.25	59.56	63.45	72.15	36.12	55.24	65.45	69.21
Gadolinium butyrate	36.34	69.56	70.12	76.55	46.33	66.39	68.64	78.12	39.12	56.45	66.45	76.45
Gadolinium valerate	36.20	66.38	69.44	74.53	36.27	63.36	66.62	76.85	36.23	59.40	66.59	70.82

Table-3

Compound	Zone Of Inhibition Of Fungi											
	A. flavous				*A. niger*				*P. triticena*			
	250	500	750	1000	250	500	750	1000	250	500	750	1000
	ppm	ppm	ppm	ppm	ppm	ppm	ppm	ppm	ppm	ppm	ppm	ppm
Butyric acid	35.33	44.51	50.26	56.62	41.44	48.35	51.63	59.38	32.41	38.24	52.20	59.45
Valeric acid	34.38	43.22	49.78	58.34	40.82	46.43	52.81	57.31	36.60	43.19	51.60	58.55
Gadolinium butyrate	44.65	57.26	64.21	74.56	51.89	63.24	71.02	79.50	46.25	54.56	68.53	76.45
Gadolinium valerate	41.68	55.39	62.38	72.42	52.37	60.21	69.25	77.08	43.37	56.88	65.16	73.23

physical data are given in Table 1. **(See Table-1)**

The antibacterial and antifungal activity of carboxylic acids and their metallic soaps were screened *in vitro*, against bacteria (*Bacillus subtilis*, *Staphylococcus aureus*, *Escherichia coli* and *Salmonella typhi*) and fungi (*Aspergillus flavous*, *Aspergillus niger*, *Penicillium triticena* and *Fusarium species*). The percentage of zone of inhibition against bacteria and fungi are given in Table II and III, respectively. **(See Table-2 & 3 on back page).**

From the above studies it is clear that the biological activities of synthesized soaps are increased with increase in the concentration.

The results indicate that the gadolinium soap of butyric acid is more toxic as compared to other metallic soaps.

Acknowledgement-

The assistance of St. Johns College, Agra for conducting elemental analysis and IR studies are gratefully acknowledged. Author is also very thankful to chemistry department R.B.S. College, Agra for providing necessary lab facilities.

References

1. Koho., JP11, 279, 579 (1999); JP11, 302 682 (1999).
2. Tadashi Yutaka Narita, Yoshiyuki Takano, Jpn. Kokai Tokkyo Koho., JP10, 297, 998 (1998).
3. Toru Imori, Mizuho Yoshida, Kazunori Uda, Jpn. Kokai Tokkyo Koho., JP10,287,898 (1998).
4. Takekatsu Kita, Hideka Sugimoto, Kazuo Isao, Mamiya, Jpn. Kokai Tokkyo Nishimata, Jpn. Kokai Tokkyo Koho, JP2001, 294, 896 (2001).
5. S, Kirschner, Y. K. Wei , D. Francis and J. G. Bergman,
J. Med. Chem., 9, 369 (1966).
6. A. J. Thomson, R. J. P. Williams and S. Reslova, Structure and Bonding, 11, 1 (1972).
7. J. H. Quasted, J. Gen. Microbial., 45, 14 (1966).

◈◈

शोध-पत्र लेखकों को विशेष निर्देश

'दि गुंजन' और **'अभिनव गवेषणा'** मल्टी डिसिप्लिनरी क्वार्टरली इण्टरनेशनल रेफ्रीड/पियर रिव्यूड रिसर्च जर्नल में पेपर प्रकाशित कराने के लिए पाँच प्रमुख बातों का होना बहुत ही आवश्यक है–

(1) रिसर्च जर्नल पत्रिका के क्रमानुसार चार पेज से कम नहीं होना चाहिए।

(2) रिसर्च जर्नल में कम से कम आठ सन्दर्भ ग्रन्थ सूची **(References)** का होना आवश्यक है।

(3) रिसर्च जर्नल में लेखक का नाम, पद, कालेज का पता, ऊपर अंकित होना चाहिए।

(4) नवीनतम एक पासपोर्ट साइज फोटोग्राफ एवं ई-मेल एड्रेस।

(5) रिसर्च जर्नल में प्रमाण-पत्र हेतु आपके निवास का पता अंकित होना जरूरी है।

यह आप सभी के स्नेह का ही परिणाम है कि आपके प्रबुद्ध विचारों को **'दि गुंजन'** और **'अभिनव गवेषणा'** **मल्टी डिसिप्लिनरी क्वार्टरली इण्टरनेशनल रेफ्रीड/पियर रिव्यूड रिसर्च जर्नल** के माध्यम से अपने पाठकों तक पहुँचाने का सुअवसर मिल रहा है। विस्तृत जानकारी हेतु कार्यालय अथवा मोबाइल पर सम्पर्क करें।

- प्रबन्ध सम्पादक

सम्पर्क- 8896244776, 9335597658

Received: 03 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

Impact of Inflation on Indian Economy

- Dr. Suneet Awasthi
Associate Professor -
Dept. of Economics,
D. A. V. College, Kanpur-208001
(U. P.)

E-maill:
drsuneetawasthi@gmail.com

Abstract

Inflation is a highly controversial tem which has undergone modifications since it was first defined by the neo-classical economists. They ment by it a galloping rise in prices as a resuslt of the excessive increase in the quantity of money. They regarded inflation `as a destroing disease born out of lack of monetary control whose results undermined the rules of business, creasing havoc in markets and financial ruin of even the prudent.'

Inflation is commonly understood as a situation of substaial and rapid general increase in the level of prices and consequent deterioration in the value oe price indices. The trend of price reveals the course of inflation in the economy. As Lemer say a price rise which is unforeseen and uncorrected inflationaly. Thus inflation is statistically measured in terms of percentage increase in the price index as a rate percent per unit of time-usually a year or a month. Usually, the wholesale price index (CPI) or the cost of living index number can be adopted in measuring the rate of inflation. The main characteristics of inflation are -

(a) Inflations is a long-term operating dynamic process.

(b) Inflation is a process of persistently rising price level.

(c) Inflationary price rise is persistent and is irreversible within a short-time; thus, it should be distinguished from a price rise which may occur temporarily, due to short-term scarcity or during a cyclical uspwing.

(d) A cyclical movement is not inflation. Inflation is rising trend in the price level.

(e) Inflation is endogenous to the economic system.

(f) Inflation is fostered by the interaction of a multitude of economic factors.

(g) Inflation, is a real sense, is a post-full employment phenomenon.

(h) By and large, imflation is also a montery phenomenon. It is usually characterized by an overflow of money and credit. In fact, the root cause of inflation is the expansion of money supply beyond the normal absorbing

capacity of the economy.

Nowadays inflation fire is an inferno. It signes wallets on its way from 4.7 percent in July, 2007 to 8.86 percent in May, 2008. It did not stope there, but shot up to a 13- year high of 11.42 percent for the week ended 14 June, 2008. Much of this recent rise is being attributed to the pervesive impacat of the increase in the state-administerted prices of oil products on 5 June, 2008. That looked inevitable after international oil prices rose to an all time high, up to $ 140 a barrel last fortnight. Worse, this inflation is not expected to go south anytime soon.

Reason of Inflation -

Rising Food Prices - A world wide shortage is driving up food prices. In India, oil seed prices are 20 percent higher than a year ago. While food supplies are expected to increase over 6-8 months, higher costs of inputs (diesel, fertilizers and seeds) among others) would likely continue to keep prices high. A global shortage of food grains, such as wheat and rice, has made4 the food prices index shoot up by about 10 percent, pushing up inflation.

High Cost of funds - On 24 June, 2008 the Reserve Bank of India hiked the cash reserve ratio and the repo rate (rate as which it lends to banks) by 50 basis points each to reduce liquidity and weaken inflationary pressures. This has raised banks cost of funds and thus making cost of production higher. With limited policy options, it could do so again. To combat inflation, the central bank is sucking out excess money from the economy by increasing cash-reserve ratio and increasing repo rates so that less money chases the liited supply of goods and services. This, however, is also driving up the cost of exising funds, that is interest rates, adding to inflation.

High Commodity Prices - High prices of commodities such as iron and steel and edibles have been responsible for about a fifth of the spike in price rse. With stock markets worldwide falling, large international institutional investors are buying commodities, further pushing up their prices and inflation, a trend unlikely to change soon. High prices of commodities such as steel and cement due to their less-than-adequate supply has made industrial production, housing, roads, airports and other crucial infrastructure more expensive. As most stock markets across the world test lower levels, investment by intuitional investors pouring into commodities is expected to keep commodity prices high. Also with no sign of demand for commodities from high-growth countries like China tapering off, no relief seems to be in sight.

Weaker rupee – Rising prices are eroding the value of what the rupee can by vis-à-vis other currencies such as the dollar. The rupee's fall of around 8 percent in the last six months has made major imports like petroleum and edible oil costlierfuelling inflation. With a rapid price rise you need more rupees for the same amount of imports, making imported products or those with high import content such as edable oils, costlier. Expect more of the same.

Rising Oil Prices - With little chance of increasing global supplies, higher extraction costs, production cuts and export taxes in some oil producting countries, and speculative investment in oil by large international investors has buttressed price pressures due to continuing high demand for oil. At an all-time high of $ 140 per barrel, oil prices have more than doubled from $ 64 a barrel in April 2007, fueling inflation.

The immediate impact of high inflation will be pressure on household budgets, and lower savings, both for now and the future. Higher interest rates are pushing up EMIs. Inflation-adjusted returns from fixed income options, be it fixed deposits or pensions, have gone negative.

Five-year term deposits paying 8.5 per cent when inflation is 11.5 per cent are giving real returns of -2.69 per cent. So, the value of what you get back is lower than what you put in. The future's not rosy either. Higher costs due to high inflation is likely to dent corporate profitability, putting downward pressure on stock prices.

Some sectors, such as aviation, could see lay offs, while fewer people will be hired by IT,

BPO, and banking and financial services companies. A recent services employment report for April-June 2008 by staffing company Team Lease said ITeS lost the most (-24 points) on its index of increasing employment.

Impact of Inflation -

Higher Budgts – Get ready to pay more for vegetables, groceries, especially soaps, detergents, packaged food, personal and public transport, as well as for services such as Costlier loans, you can expecting home loan rates go up.

More Expensive Recreation- Higher airfares along with lower purchasing power will make international travel more expensive even as domestic leisure becomes costlier.

Dent on Returns- Fixed income options such as bank fixed deposits and monthly income options will give negative returns after adjusting for inflation, impacting senior citizens, single parents and risk-averse investors such as those with many dependents. Impacts ib corporate profitability via higher costs will bring down stock prices.

Higher Taxes- To raise more money to cushion vulnerable parts of the population the government might impose higher taxes, cesses and surcharges on goods and services.

Lower Infrastructure Growth- Upcoming road, airport, power and port project will witness cost escalations and might see slow downs.

Some Layoffs and Lower Pay Hikes- Hard hit sectors such as aviations could see some layoffs while most sectors are likely to witness lower pay hikes. This may be especially true in the IT and the BPO sectors.

More Austere Workplace- Expect fewer office parties and conference, reduction in amenities, office travels and allowances as employers try to cut comes to save costs.

Measures to Control Inflation -

As always, to tackle the situation, you will have to keep existing outflows down, skip new large expenses, bump up your savings, and invest in higher return options at, perhaps, marginally higher risk.

Enhance Emergency Funds, Life and Health Covers- The 3-6 months' worth of expenses that you keep aside in liquid assets such as fixed deposits for emergencies will need to be increased. Life and health covers may need to be augmented Bridge the gap with low-cost term plans and family floaters. With costs going up, you need go bump up your life and health covers. Go for low-cost, high-cover term plans from floating health covers to bridge the gap. Avoid large idle savings and bank balances. Invest in short-term debt funds life FMPs.

Loan Prepay your Home- As home finance rates are set to climb higher, prepay your floating rate loans. No investment option will currently give assured returns to match the higher interest outgo.

Continue with Equity Investment- The only way to beat inflation is to keep investing in equity. Carry on with your existing systematic investment plans in equity funds.

Avoid Large Savings Account Balances- Drain your bank account into short-term debt funds such as fixed maturity plans.

Diversify in International Funds and Gold- Over the last six months, while the Indian market was falling by over 30 percent, international funds fell by a little over 13 percent. As above, we will yet again recommend that you invest 5-10 percent of your portfolio in gold exchange-traded funds and gold mutual funds as periods of high inflation witness a surge in gold prices. This will shore up the minimum long-term growth of you overall investments.

Opt for Capital Gains and Dividend instead of Interest- Interest income is taxed at your income tax rate while capital gains taxes are lower or zero. Also, short-term capital gains are taxed at higher rates than long-term gains, which can even be zero. Dividends in your hands, whether from stocks, equity or debt mutual funds, is tax free. Interest income gets taxed at your income tax rate. Long-term capital gains and dividends from equality and equity MFs are tax-

free but taxed at 10 percent without indexation and 20 per cent with indexation if coming from debt funds. Dividends from debt funds are tax-free post dividend distribution tax.

Defer Large Loan-Based Purchases- Avoid large EMIs that will stretch your finances more. Go for your first home if you can afford the down payment and EMI.

Continue Staggered Investment in Equity and Equity MFs- Carry on with your systematic investment plans (SIPs) in equity funds. For fresh investments, seeks large-cap funds from OLM 50 that the likely to benefit from a rebound along with blue chips they predominantly invest in.

Avoid interest rate-sensitive stocks- This includes sectors such as real estate and auto. The best bets would be large-cap pharma and FMCG stocks currently available at attractive valuations.

High inflation has terrible repercussions on the future of our money. Luckily, we have enough weapons in our arsenal to fight and win the war against it. Time's come to pull on all stops.

References

1- Balakrishna, P. (1991), Pricing and Inflation in India, Delhi : Oxford University Press.
2- Jha, R (2005) `The Political Economy of Recent Economics Growth n India, in R. Jha (ed.).
3- Mohanty, D. , Rath, D., and M. Ramaiah (2000) `Measures of core inflation for India' Economic and political weekly, Vol. 35, no.5.
4- Bhatt, V.V., `On Restructing the Money System', Economic and political weekly, March 19, 1988.
5- Government of India, Economic Survey, various issues.
6- RBI (Reserve Bank of India) (1993) Reserve Bank of India – Annual Report 1991-92, Mumbai.
7- RBI (2002) Reserve Bank of India Bulletin, Mumbai.
8- RBI (2004) Reserve Bank of India Bulletin, Mumbai.
9- Venugopal Reddy, Y. (2000) , Monetary and Financial Sector Reforms in India, New Delhi.
10- Taylor, J. (2002) The Monetary Transmission and the Evolution of Monetary.

ABHINAV GAVESHNA
Multi Displinary Quareterly International Refreed/Peer Reviewed Research Journal
I.S.S.N. : 2394-4366
(Multi Displinary Quareterly International Refreed/Peer Reviewed Research Journal)
(in Multi Language: Hindi + English + Sanskrit)
`Abhinav Gaveshna'
Sector-K-444, `Shiv Ram Kripa' World Bank Barra-Kanpur-208027 (U.P.)
Contact- 08896244776, 09335597658,
E-mail: mohittrip@gmail.com
Visit us : www:abhinavgaveshna.com, thegunjan.com

Received: 03 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

किशोरावस्था और अवसाद

– डॉ मधुलिका त्रिपाठी
असिस्टेन्ट प्रोफेसर –
गृह विज्ञान विभाग,
हण्डिया पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज,
हण्डिया प्रयागराज– (उत्तर प्रदेश)

ई–मेलः
madhulikas757@gmail.com

सारांश

मनोचिकित्सक का मानना है कि अवसादग्रस्त किशोर के उपचार में उपयुक्त स्वास्थ्य देखभाल व बातचीत को शामिल किया जाना चाहिए अवसादी मनोरोगी पर बातचीत का काफी हद तक प्रभाव पड़ता है बातचीत के जरिए किये गये उपचार को आमतौर पर "counseling" या परामर्श देना कहा जाता है। जब मनोरोगी मनोचिकित्सकों के पास जाते हैं तो दवाओं से पहले बातचीत के जरिये परामर्श दिया जाता है जो मनोरोगी को प्रभवित करता है परामर्श के द्वारा उचित उपचारात्मक असर होता है अन्ततः मनोरोगी को अपने बीमारी के बारे में समझ पाता है। किशोर के किसी भी मनोरोग के समस्या के समाधान में माता–पिता की महत्वपूर्ण भूमि का होती है क्योंकि उसके मनोरोग के प्रति उनका अत्यधिक सहयोग करते हैं उनके साथ अधिक से अधिक समय को व्यतीत करते हैं जिससे किशोर मनोरोगी को काफी हद तक उचित महसूस होती है। किशोर अपने माता–पिता के सहयोग से काफी प्रभावित भी होते हैं जिससे उसके मनोरोग के उपचार का कार्य करता है।

किशोरावस्था विकास की वह अवस्था है जो बाल्यावस्था और यौवनावस्था के बीच आती है साधारणतया इसे 13–19 वर्श तक का समय माना जाता है। इसके आरम्भ होने की या अन्त होने का कोई निश्चित बिन्दु नहीं होता है। इसे क्रान्ति की अवस्था कहा जाता है यह वह अवस्था होती है जो बाल्यावस्था को प्रौढ़ावस्था से अलग करती है बालक सीधा प्रौढ़ावस्था में नहीं पहुँचता परन्तु ऐसी अवस्था में पदार्पण करता है जब वह न तो बच्चों में और न ही प्रौढ़ व्यक्तियों में गिना जाता है निश्चय ही ऐसी अवस्था समस्याएं उत्पन्न करती हैं मानव जीवन में किशोरावस्था अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है यह वह समय है जब मानव विकास सभी विकासात्मक क्षेत्रों में चरम सीमा प्राप्त करता है जैसे– शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक, सामाजिक आदि। इन विकासात्मक परिवर्तनों को पहले भी बहुत महत्व दिया जाता था। वैदिक काल में जब बालक किशोरावस्था में पहुँचता था उस समय विशेश समारोह आयोजित किये जाते थे। परिवर्तन की इस अवस्था में किशोर व्यवहार की बचकानी आदतों को छोड़कर परिपक्व व्यवहार का प्रदर्शन करते हैं इस समय उसे अपने पैरों पर खड़ा होना पड़ता है अर्थात् बिना अभिभावक व शिक्षक के व्यक्तिगत रूप से दुनिया का सामना करने की योग्यता का विकास करना होता है। इसमें उसकी सफलता इस पर निर्भर रहती है कि उसे किस प्रकार मानसिक रूप से तैयार किया गया है।

अवसाद –

अवसाद या डिप्रेशन का तात्पर्य मनोविज्ञान के क्षेत्र में मनोभावों सम्बन्धी दुख से होता है इसे रोग या सिन्ड्रोम की संज्ञा दी जाती है अधिकतर यह अवस्था व्यक्ति के प्रेम संबंध को लेकर गम्भीर होती है। किसी भी व्यक्ति के जीवन में अपने जीवन साथी के प्रति बहुत अधिक लगाव, प्रमुखता इसका सबसे बड़ा कारण होता है। अवसाद की अवस्था में व्यक्ति स्वयं को लाचार एवं निराश महसूस करता है उस व्यक्ति विशेश के लिए सुख, शान्ति, सफलता, खुशी यहाँ तक की सम्बन्ध तक बेईमान हो जाते हैं। सम्बन्धों में बेईमानी का परिचायक उसके द्वारा उग्र स्वभाव गाली, गलौज व अत्यधिक शंका करना इसमें शामिल होता है। इस दौरान उसे सर्वत्र निराशा, तनाव, अशान्ति, अरूचि प्रतीत होती है अवसाद के भैतिक कारण भी अनेक होते हैं इनमें कुपोशण, आनुवंशिकता, हार्मोन, मौसम, तनाव, बीमारी, नशा, अप्रिय स्थितियों में लम्बे समय तक रहना पीठ में तकलीफ आदि प्रमुख है। इनके अतिरिक्त अवसाद के 90% रोगियों में नींद की समस्या होती है।

अवसाद के कारण –

- आत्म सम्मान में कमी या खुद की आलोचना।
- मानसिक बीमारी का इतिहास।
- कुछ खास दवाओं के सेवन के कारण
- तनाव पूर्ण घटनाओं के कारण
- किसी करीबी को खो देने के कारण
- आर्थिक समस्याएं।
- तलाक की वजह।

किषोरों में अवसाद के लक्षण –

- ज्यादातर समय बच्चे का उदास या चिड़चिड़ापन रहना।
- दुःखी या क्रोधित महसूस करना।
- उन चीजों से खुशी न मिलना, जिससे पहले वे खुश हो जाते थे।
- वजन या खाने में बदलाव आना।
- रात में बहुत कम सोना या दिन में बहुत ज्यादा सोना ।
- परिवार या दोस्तों से अलग–अलग रहना ।
- ऊर्जा की कमी ।
- आसानी से काम को भी करने में असमर्थता महसूस करना ।
- आत्म सम्मान में गिरावट आना।
- ध्यान केन्द्रित होने में परेशानी ।
- आत्महत्या के विचार आना ।

ये सभी लक्षण अगर दो सप्ताह तक बने रहते हैं तो खतरे की घंटी हो सकती है अवसाद के निदान और उपचार के लिए डॉक्टर से जल्द से जल्द सम्पर्क करना जरूरी होता है।

किशोरों में अवसाद के कारण

खुद को बेहतर साबित करना –

खुद को दूसरों से अच्छा साबित करने की होड़ युवाओं में तनाव की सबसे बड़ी वजहों में से एक है। यह एक प्रतियोगिता स्कूल, कॉलेज, कोचिंग, प्लेग्राउंड, दोस्त यहाँ तक कि परिवार में अपने भाई बहन के साथ भी जारी रहता है। बच्चों पर माँ–बाप की उम्मीदों पर खरा उतरने और पढ़ाई, खेलकूद में हमेशा अच्छा करने का दबाव होता है और कब यह तनाव में बदल जाता है पता ही नहीं चलता है।

अनियमित खान–पान –

आजकल जंक फूड, प्रोसेस्ड फूड, हाई फैट डेयरी प्रोडेक्ट्स आदि का सेवन बच्चों के बीच में इतना ज्यादा बढ़ गया है कि वे पौष्टिक भोजन के प्रति लापरवाह होते जा रहे हैं। कई रिसर्च से पता चला है जो लोग मोटे और डेयरी उत्पादों को कम लेते हैं उनमें अवसाद व अल्जाइमर, मधुमेह, हृदय रोग की सम्भावना कम होती है।

मोबाइल का ज्यादा उपयोग –

मोबाइल के प्रति बढ़ता आकर्षण भी मानसिक तनाव का कारण है। आज के वक्त में देखा गया है कि किशोर और युवा वयस्क व्यक्तिगत रूप से अपने दोस्तों परिवार के साथ जुड़ने से ज्यादा समय सोशल मीडिया से जुड़े रहते हैं सोशल मीडिया पर देर रात तक व्यस्त रहना नींद को प्रभावित करता है। नींद की समस्या के कारण कई तरह के मानसिक रोग होने की संभावना बहुत बढ़ जाती है।

पारिवारिक माहौल –

पारिवारिक वातावरण का अच्छा–बुरा प्रभाव बच्चों पर पड़ता है यदि घर में लड़ाई झगड़े का माहौल है तो उसका असर बच्चों के मानसिक स्वास्थ्य पर पड़ता है

ऐसी स्थितियाँ भी बच्चों के लिए प्रतिकूल हो जाती है इससे किशोर को डिप्रेशन होने की शंका रहती है।

रिलेशनशिप में असफलता –

किशोरों में अवसाद के लक्षण दिखने का एक बड़ा कारण रिलेशनशिप में असफलता भी है वही रिलेशनशिप के मामलों में किशोर अक्सर किसी से अपनी बात शेयर नहीं कर पाते हैं जिनकी वजह से मानसिक तनाव बढ़ जाता है और दिमाग पर बुरा असर होता हैं

किशोरों में अवसाद या मानसिक तनाव आनुवंशिक किसी घटना या बचपन का आघात के कारण भी हो सकता है अगर किसी किशोर के माता–पिता इस समस्या से गुजर चुके हों तो वे अवसाद के शिकार जल्दी हो जाते हैं।

समाधान –

अवसादग्रस्त किशोर के उपचार करने के अनेकों तरीके हैं, जिस तरह से शारीरिक समस्या का उचित उपचार जरूरी होता है उसी तरह मनोरोगी (अवसादग्रस्त) को भी उचित उपचार की आवश्यकता होती है जो निम्नलिखित हैं–

दवाओं से उपचार –

कुछ स्वास्थ्य चिकित्सकों का मानना है कि अवसादी किशोर को दी जाने वाली दवाएँ बहुत खतरनाक होती है दवाओं के प्रयोग के लिए पहले सामान्य नियमों का पालन करना जरूरी होता है। विभिन्न मनोरोगों के लिए अलग–अलग तरह के दवाओं के उपचार हैं।

अवसाद रोधी दवाएं (एन्टी डिप्रेसेंट) –

इस दवा का प्रयोग अवसाद ग्रस्त रोगी के उपचार के लिए किया जाता है ये अस्वस्थताएं अक्सर थकान या नींद की समस्या जैसी ऐसी समस्याओं के रूप में सामने आती है जिनकी चिकित्सकीय व्याख्या नहीं की जा सकती इसके अलावा मनोग्रसित रोग तथा विभिन्न प्रकार के फोबिया के इलाज में भी उपयोगी हैं इसे सिजोफ्रेनिया जैसे अन्य मनोरोगों के साथ अवसाद के होने की स्थिति में भी इस्तेमाल किया जा सकता है।

इन्जेक्शन के जरिए उपचार –

इन्जेक्शन के जरिए भी अवसाद मनोरोग का उपचार किया जाता है जब कभी मनोरोगी दवा लेने से मना कर देता है तब इंजेक्शन की जरूरत पड़ती है और मनोरोगी के उत्तेजक स्थिति में इन्जेक्शन की आवश्यकता होती है। मनोरोगी को नियंत्रण से बाहर आने पर इन्जेक्शन की सहायता से उसे शान्त कराया जाता है।

मनोचिकित्सक द्वारा बातचीत के जरिए उपचार व परामर्श –

मनोचिकित्सक का मानना है कि अवसादग्रस्त किशोर के उपचार में उपयुक्त स्वास्थ्य देखभाल व बातचीत को शामिल किया जाना चाहिए अवसादी मनोरोगी पर बातचीत का काफी हद तक प्रभाव पड़ता है बातचीत के जरिए किये गये उपचार को आमतौर पर "counseling" या परामर्श देना कहा जाता है। जब मनोरोगी मनोचिकित्सकों के पास जाते हैं तो दवाओं से पहले बातचीत के जरिये परामर्श दिया जाता है जो मनोरोगी को प्रभवित करता है परामर्श के द्वारा उचित उपचारात्मक असर होता है अन्ततः मनोरोगी को अपने बीमारी के बारे में समझ आता है।

मनोचिकित्सकों को मनोरोगी को आश्वासन देना चाहिए। उन्हें अनेक बीमारी के लक्षणों को देखकर आश्वस्त करना चाहिए ताकि किसी भी तरह की परेशानी मनोरोगी को न हों उन्हें यह विश्वास दिलाना चाहिए कि उसकी बीमारी को ठीक किया जा सकमता है। उन्हें आश्वासन के जरिए समझाना चाहिए कि आप जिस परेशानी से पीड़ित है वो किसी भी प्रकार से जीवनधाती या खतरनाक बीमारी नहीं है उन्हें बताना चाहिए कि यह आम बीमारी है इसे ठीक किया जा सकता है।

अन्य उपचार –

इलेक्ट्रोकन्वाल्सेव थेरेपी Electroconvulsive therapy (ECT) -

जिसे शॉक थेरेपी के तकनीकी के नाम से जानते हैं इससे किशेर बहुत भय खाते हैं इस तकनीकी का प्रयोग तभी करना चाहिए जब किशोर गम्भीर मानसिक बीमारी से ग्रसित हो और उसका इलाज दवाओं के द्वारा नहीं किया जा सकता है।

साइकोथेरेपी –

यह खासकर विकसित देशों तथा विकासशील देशों के शहरी उच्च्च वर्गीय इलाकों में अनेकों विशेषज्ञता प्राप्त साइकोथेरेपी यानी मनोचिकित्सा क्लीनिक मौजूद है यह अपेक्षाकृत अधिक जटिल किस्म की परामर्श होता है इस उपचार की वास्तविक कमी यह है कि अधिकांश लोगों के पहुँच के बाहर है क्योंकि बहुत कम लोग इसे अपनाते हैं और पैसा व समय भी अधिक लगता है।

कुछ अन्य समाधान भी प्रभावी हो सकते हैं –

माता–पिता की भूमिका –

किशोर के किसी भी मनोरोग के समस्या के

समाधान में माता–पिता की महत्वपूर्ण भूमि का होती है क्योंकि उसके मनोरोग के प्रति उनका अत्यधिक सहयोग करते हैं उनके साथ अधिक से अधिक समय को व्यतीत करते हैं जिससे किशोर मनोरोगी को काफी हद तक उचित महसूस होती है। किशोर अपने माता–पिता के सहयोग से काफी प्रभावित भी होते हैं जिससे उसके मनोरोग के उपचार का कार्य करता है जब माता–पिता को पता चले कि उसका किशोर बालक किसी मनोरोग या अवसाद में है तो उन्हें उचित रूप से बात करना चाहिए और उन्हें समझाना चाहिए कि हम उसके साथ है हम उसका इलाज करवायेंगे परिणामस्वरूप किशोर बालक को उसके माता–पिता को पूरा सहयोग देकर प्रशिक्षित मनोचिकित्सक से उसका इलाज कराना बेहतर होगा।

शिक्षक की भूमिका –

किशोर मनोरोग की समस्या के समाधान में शिक्षक की भूमि का भी अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है क्योंकि किशोर विद्यालय जाता है और वह अजीब ढंग से व्यवहार करता है तो शिक्षक बहुत जल्दी ही उस लक्षण को समझ पाते हैं और पूछते हैं कि ऐसा क्यों कर रहे हो ? उसका विपरीत व्यवहार ही किसी मानसिक बीमारी को दर्शाता है इस तरह शिक्षक अपने शिष्य के मन को पढ़ लेते हैं और उसके इस व्यवहार को लेकर बातचीत करता है उसे समझाते हैं उसे परामर्श देते हैं तो वह अपने व्यवहार पर नियन्त्रण करता है तो उसके मनोरोग में काफी हद तक सुधार पाया जाता है शिक्षक भी किशोर के मानसिक रोग के समस्या में उसे काफी प्रभावित करता है और इसके परिणाम भी उचित आते हैं।

मित्रों की भूमिका –

किशोर बालक के अनेक तरह के तिमत्रों की संख्या होती है किशोर को मित्रों के समूह में बहुत ही अच्छा लगता है जब किशोर बालक किसी मानसिक बीमारी से पीड़ित होता है तो ऐसे में मित्रों की भूमि का महत्वपूर्ण होता है और मनोरोगी किशोर के व्यवहार में परिवर्तन से उसके मित्र भी चिन्तित हो जाते हैं और समझ जाते हैं तो उन्हें समझाने का प्रयास करने लगते हैं उन्हें परामर्श देते हैं कि ऐसा करने से मानसिक बीमारी आती है इससे समस्या आती है जिससे किशोर मनोरोगी होने के कारण कुछ नहीं कर पायेंगे, आगे नहीं बढ़ पाएंगे, उचित बातों के तरीकों से समझाते हैं कि आगे बहुत कुछ करना है तो मनोरोगी किशोर पर इसका काफी प्रभाव पड़ता है जिससे उसके ठीक होने की सम्भावना भी काफी बढ़ जाती है इस तरह मित्र अपने अवसादग्रस्त मित्र की मनोवृति को जल्दी देख भी लेता है और समझ लेता है और उसे उचित परामर्श भी देता है अतः मित्रों की भूमिका भी मनोरोगी किशोर के जीवन में अधिक महत्वपूर्ण है।

निष्कर्ष –

अवसादग्रस्त किशोरों के सन्दर्भ में महत्वपूर्ण निष्कर्ष इस प्रकार हैं –

1. यदि माता– पिता अवसाद से ग्रस्त हैं तो उनके बच्चों में अवसाद की सम्भावना बढ़ती है।

2. यदि किशोरों में सामाजिक समझ की कमी है तो भी उनमें अवसाद उत्पन्न हो सकती है।

3. ऐसे बच्चे जिन्हें अपेक्षित पर्यवेक्षण नहीं प्राप्त हो पाता है उनके मादक द्रव्यों के प्रयोग, जोखिम की प्रकृति, अवसाद और निम्न आत्म सम्मान, की सम्भावना बढ़ती है।

4. किशोरों तथा माता–पिता के बीच नकारात्मक सम्बन्ध भी अवसाद की उत्पत्ति का कारण होता है।

5. किशोरों तथा अन्य लोगों (जैसे– माता–पिता, सहपाठी एवं अन्य लोगों के बीच नकारात्मक सम्प्रेषण प्रति मान एवं अन्य प्रकार के दुष्क्रियात्मक पारिवारिक कारक भी अवसाद के लिए उत्तरदायी हो सकते हैं

अतः इन महत्वपूर्ण बिन्दु पर ध्यान देकर किशोरों को अवसादग्रस्त होने से बचाया जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ. मोनिका सक्सेना, प्रो. कमलेश शर्मा, श्रीमती माया वर्मा– ''किशोरावस्था व युवावस्था''।
2. डॉ. गौरव गुप्ता – ''असाध्य नहीं मनोरोग, हिन्दुस्तान लाइव 7 अक्टूबर 2009।
3. अवसाद– विकिपीडिया Searching by google net.
4. आर. एन. सिंह, नसीर अंजुम कुरैशी, एस. एस. भारद्वाज– ''मनोविकृति विज्ञान के आधार'' ।
5. प्रो. कमलेश शर्मा, श्रीमती माया वर्मा, डॉ. मोनिका सक्सेना– ''किशोरावस्था व युवावस्था''।
6. बच्चों में डिप्रेशन के लक्षण को नजर अन्दाज न करें– ''हैलो स्वास्थ्य'' www.heloswasthya.com.
7. मनोरोज (अवसाद) का उपचार विकिपीडिया Search by google
8. आर. एन. सिंह, नसीर अंजुम कुरैशी, अंजुम भारद्वाज– ''मनोविकृति विज्ञान का आधार''।

9- "Growth and Development of adolescents"- Search by google.

◈◈

Received: 03 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

सार्क की उत्पत्ति एवं विकास

– डॉ. विष्णु कुमार जायसवाल
(विभागाध्यक्ष)
रक्षा एवं स्ट्रैटेजिक अध्ययन विभाग,
अम्बिका प्रताप नारायण (पी. जी.)
कालेज,बस्ती – 272129
(उत्तर प्रदेश)

Email:
vishnudefence@gmail.com

– राधा जायसवाल
शोध छात्रा
साकेत महाविद्यालय, अयोध्या–फैजाबाद

सम्बद्ध :
अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या–फैजाबाद
– 272129 (उत्तर प्रदेश)

Email:
vishnudefence@gmail.com

सारांश

सार्क का विकास धीरे–धीरे हुआ है। दक्षिण एशियाई–देशों का क्षेत्रीय संगठन बनाने का विचार बांग्लादेश के पूर्व राष्ट्रपति जिया – उर – रहमान ने दिया था। उन्होंने 1977 से 80 के बीच भारत, पाकिस्तान, नेपाल और श्रीलंका की यात्रा की थी। उसके बाद ही उन्होंने एक दस्तावेज तैयार करवाया जिसमें नवम्बर, 1980 में आपसी सहयोग के लिए इस मुद्दे तय किये गये। बाद में इसमें से पर्यटन और संयुक्त उद्योग को निकाल दिया गया। इन्हीं में से इस मुद्दे आज भी 'सार्क' देशों के बीच सहयोग का आधार है।

'सार्क' दक्षेस का पूरा नाम है– 'साउथ एशियन एसोसिएशन फॉर रीजनल को–आपरेशन' अर्थात् दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन 7, 8, दिसम्बर 1985 को ढाका में दक्षिण एशिया के 7 देशों के राष्ट्राध्यक्षों की सम्मेलन हुआ तथा 'सार्क' की स्थापना हुई। ये देश है भारत, पाकिस्तान, बाग्लादेश, नेपाल, भूटान, श्रीलंका और मालदीव। यह दक्षिण एशिया के सात पड़ोसी देशों की विश्व राजनीति में क्षेत्रीय सहयोग की पहली शुरूआत है। 'सार्क' की स्थापना के अवसर पर दक्षिण एशिया के इन नेताओं ने जो भाषण दिये, उनमें आपसी सहयोग बढ़ाने और तनाव समाप्त करने पर जोर दिया गया। उन्होंने यह भी कहा कि इस नये संगठन के जन्म से इन सात देशो के बीच सद्भावना, भाई–चारा और सहयोग का नया युग शुरू होगा।

दक्षिण एशियाई संघ के सदस्य देशों में लगभग 170 करोड़ लोग रहते हैं। इस दृष्टि से यह विश्व का सर्वाधिक जनसंख्या वाला संगठन है। यद्यपि यह क्षेत्र प्राकृतिक संसाधनों, जनशक्ति तथा प्रतिभा से भरपूर है, फिर भी इन देशों की जनसंख्या गरीबी, अशिक्षा और कुपोषण की समस्या से पीड़ित है। इस क्षेत्र में जनसंख्या का दबाव प्रति वर्ग किलोमीटर 180 है, जब कि विश्व का औसत प्रति वर्ग किलोमीटर केवल 30 है। विश्व के सकल राष्ट्रीय उत्पादन में इस क्षेत्र का भाग केवल 2 प्रतिशत और निर्यात में 0.6 प्रतिशत है। भारत को छोड़कर इस क्षेत्र के अन्य देशों को खाद्यान्न का आयात करना पड़ता है।

सार्क का विकास धीरे–धीरे हुआ है। दक्षिण एशियाई–देशों का क्षेत्रीय संगठन बनाने का विचार बांग्लादेश के पूर्व राष्ट्रपति जिया – उर – रहमान ने दिया था। उन्होंने 1977 से 80 के बीच भारत, पाकिस्तान, नेपाल और श्रीलंका की यात्रा की थी। उसके बाद ही उन्होंने एक दस्तावेज तैयार करवाया जिसमें नवम्बर, 1980 में आपसी सहयोग के लिए इस मुद्दे तय किये गये। बाद में इसमें से पर्यटन और संयुक्त

उद्योग को निकाल दिया गया। इन्हीं में से इस मुद्दे आज भी 'सार्क' देशों के बीच सहयोग का आधार है।

सार्क के विदेश सचिवों की अप्रैल 1981 में बांग्लादेश के दस्तावेज पर विचार करने के लिए एक बैठक हुई थी। विदेश मंत्रियों की पहली बैठक नई दिल्ली में सन् 1983 में हुई थी। इसी बैठक में दक्षिणी एशियाई क्षेत्रीय सहयोग की पहली औपचारिक घोषणा हुई। विदेश मंत्रियों की बैठक जुलाई, 1984 में मालद्वीप में 1985 में 'भूटान' में हुई। उसके बाद ही दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन की स्थापना हुई और इसका संवैधानिक स्वरूप निश्चित किया गया।

8 दिसम्बर 1985 को सातों दक्षिण एशियाई राष्ट्रों के राष्ट्राध्यक्षों / शासनाध्यक्षों की ढाका में सम्पन्न बैठक में सार्क के घोषणा–पत्र को स्वीकृति प्रदान की गई। इस चार्टर में संगठन के निम्नलिखित उद्देश्य परिभाषित किए गए हैं–

1. दक्षिण एशिया के लोगों के कल्याण का संवर्द्धन और उनके जीवन की गुणवत्ता में सुधार करना।

2. इस क्षेत्र में आर्थिक संवृद्धि, सामाजिक प्रगति एवं सांस्कृतिक विकास को त्वरित करना और सभी व्यक्तियों को गरिमा पूर्ण जीवन एवं अपनी पूर्ण संभाव्यता प्राप्त करने का अवसर उपलब्ध कराना।

3. दक्षिण एशिया के देशों के मध्य सामूहिक आत्म–विश्वास को सुदृढ़ एवं संवर्द्धित करना।

4. एक दूसरे की समस्याओं के प्रति पारस्परिक विश्वास, समझ एवं मूल्याकंन हेतु योगदान करना।

5. आर्थिक एवं सामाजिक, सांस्कृतिक, तकनीकी एवं वैज्ञानिक क्षेत्रों में क्रियाशील सहयोग एवं पारस्परिक सहायता को बढ़ावा देना।

6. अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर समान हित के मुद्दों पर आपस में सहयोग को मजबूत करना।

7. समान उद्दश्यों एवं लक्ष्यों वाले अन्तर्राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय संगठनों के साथ सहयोग करना।

सार्क के 8वें और नवीनतम सदस्य के रूप में आफगानिस्तान को (ढाका 2005) में किया गया था और 14वें शिखर सम्मेलन (नई दिल्ली, 2007) में यह सदस्य के रूप में सार्क में सम्मिलित हो गया। सार्क के 13वें शिखर सम्मेलन में पहली बार 4 राष्ट्रों (अमेरिका, चीन, जापान एवं दक्षिण कोरिया) तथा युरोपियन संघ को पर्यवेक्षक (Observer) के रूप में अनुमोदित किया गया था। इनके प्रतिनिधियों ने 14वें शिखर सम्मेलन से भाग लेना शुरू किया।

हाल ही में सार्क का 18वाँ शिखर सम्मेलन नेपाल की राजधानी काठमांडू (Kathmandu) में सम्पन्न हुआ। इसके पूर्व काठमांडू में तीसरे (1987) और ग्याहवें (2002) सार्क शिखर सम्मेलन का आयोजन हो चुका है।

11 अप्रैल, 1993 को सार्क राष्ट्रों ने ढाका में सार्क क्षेत्र के अन्तर्गत टैरिफ को कम करने के लिए एक समझौते पर हस्ताक्षर किये थे। 'साउथ एशियन प्रीफिरेशियल ट्रेड़िग अरेन्जमेन्ट' (SAPTA) 7 दिसम्बर, 1995 को अस्तित्व में आयी।

साफ्टा के पश्चात् साफ्टा (साउथ एशिया फ्री ट्रेड एरिया) की पृष्ठ भूमि तैयार हो गयी। 25 अनुच्छेदों वाला साफ्टा संधि पर 6 जनवरी 2004 को सहमति हुई और 1 जनवरी 2006 से यह अस्तित्व में आ गयी। अफगानिस्तान फरवरी, 2008 में साफ्टा का सदस्य बना।

इस्लामाबाद शिखर सम्मेलन (6 जनवरी 2004) में दक्षेस देशों ने दक्षिण एशिया को मुक्त व्यापार क्षेत्र में रूप में स्थापित करने के लिए समझौते पर हस्ताक्षर कर दिए जो 1 जुलाई, 2006 से लागू हो गया। इसके आधारभूत सिद्धान्त थे–

1. सम्पूर्ण जवाबदेही और आपसी फायदे।

2. तरजीही व्यापार व्यवस्था (फेवर्ड ट्रेड सिस्टम) की स्थिति पर क्रमिक बातचीत और विस्तार।

3. सभी तरह के उत्पादों को शामिल करना, जैसे– कच्चे, अर्द्धपरिष्कृत एवं उत्पाद।

4. कम विकसित देशों हेतु विशिष्ट तथा हितकारी उपचार इन उपायों के बावजूद भी दक्षेस अपने उक्त आर्थिक उद्देश्यों को प्राप्त नहीं कर सका। इसका कारण शायद यह रहा कि दक्षेस देशों का आपसी सहयोग अपर्याप्त रहा। इनमें सबसे प्रभावी कारण भारत – पाकिस्तान सम्बन्ध हैं।

दक्षेस : बाधायें एवं जटिलतायें –

पिछले तीन दशकों से दक्षेस की उपलब्धियाँ बहुत कम रही हैं। क्षेत्र में और क्षेत्र के बाहर भी इस संगठन को अन्य संगठनों की अपेक्षा कम महत्व मिला है। उदाहरण के तौर पर एसोसिएशन आफ साउथ ईस्ट एशियन नेशन्स (आसियान) जो कि पड़ोसी क्षेत्र में हैं, ने दस विकासशील देशों के बीच क्षेत्रीय सहयोग के जरिये महत्वपूर्ण वृद्धि की है। आज के वैश्वीकरण के युग में जहाँ दुनिया क्षेत्रीय सहयोग और विकास के लिए बहुपक्षीय क्षेत्रीय दृष्टिकोण को अपना रही हैं, वहीं दक्षेस को अभी

भी आर्थिक समृद्धि लाने और क्षेत्र में अन्तराष्ट्रीय तनाव को कम करने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाना बाकी है। दक्षेस की अबादी 1.6 अरब की है जो पूरी दुनिया की आबादी का पाँचवां हिस्सा है। इस क्षेत्र में दक्षेस की लगभग आधी आबादी गरीबी रेखा के नीचे जीवन जी रही है। इस लिहाज से यह दुनिया के सबसे गरीब क्षेत्रों में से एक है। इसके अलावा इस क्षेत्र की एक विशाल आबादी अनपढ़ है, उचित स्वास्थ सुविधाओं की मोहताज है। इसके कारण उसे तमाम समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। इन सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक समस्याओं पर विचार करें तो क्षेत्रीय संगठन के रूप में दक्षेस की स्थापना इन्ही उद्देश्यों को लेकर की गई थी कि वह इन समस्याओं का समाधान करेगा और एक–एक देश को विकास के पथ पर अग्रसर करेगा।

➢ भारत को लेकर छोटे देशों में असुरक्षा की भावना बढ़ी है, सदस्य देशों के बीच अविश्वास बढ़ा है। भारत पाकिस्तान के बीच तल्ख सम्बन्ध, सदस्य देशों का स्वकेन्द्रित रवैय और पश्चिम का कमजोर समर्थन दक्षेस की प्रगति में सबसे बड़े बाधक है।

➢ दक्षेस देशों में क्षेत्रीय सहयोग के लिए सबसे ज्यादा जरूरी हैं विभिन्न चुनौतियों की पहचान करना, जिनसे यह क्षेत्र जूझ रहा है और कोई भी देश व्यक्तिगत स्तर पर इसे सुलझाने में सक्षम नहीं है।

➢ दक्षेस के चार्टर में ही दक्षेस की उत्पत्ति के औचित्य को बताया गया है, दुनिया में अन्तरनिर्भरता बढ़ती जा रही है, दक्षिण एशिया क्षेत्र में शान्ति, स्वतंत्रता सामाजिक न्याय और आर्थिक समृद्ध को आपसी समझ, अच्छा पड़ोसी सम्बन्ध और सदस्य देशों के बीच उद्देश्य पूर्ण सहयोग से हासिल किया जा सकता है। क्योंकि ये देश ऐतिहासिक और सांस्कृतिक रूप से एक दूसरे जुड़े हुए हैं।

➢ आज जरूरत इस बात की है सदस्य देश दक्षिण एशिया क्षेत्र के विकास के लिए सार्थक भूमिका निभाएं उदाहरण के तौर पर भारत अपने आकार और प्रभाव के सहारे दक्षेस देशों के लोगों के जीवन उन्नयन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता हैं सदस्य देशों के बीच विवादास्पद मुद्दों को सुलझा कर अविश्वास को दूर किया जा सकता है और आर्थिक विकास के लिए माहौल तैयार किया जा सकता हैं सभी सदस्य देशों को क्षेत्रीय सहयोग का ज्यादा से ज्यादा लाभ लेने के लिए द्विपक्षीय दृष्टिकोण नहीं अपनाना चाहिए।

➢ इसके अलावा दक्षेस को एकीकृत और प्रभावी संगठन के रूप में खुद प्रस्तुत करना चाहिए। तभी दुनिया का ध्यान इसकी तरफ जायेगा और अन्य क्षेत्रीय संगठनों की तरह इसके भी विकास में सहायता करेंगे।

➢ दक्षेस की विफलता की एक बड़ी वजह यह भी है कि इसके एक सदस्य का आकार बाकी अन्य सदस्यों के सम्मिलित आकार से भी बड़ा है। भारत कुल दक्षेस की क्षेत्रफल, आबादी, सकल घरेलु उत्पाद, विदेशी मुद्रा विनिमय, स्वर्ण भण्डार और हाथियारों के मामले में पाँचवा हिस्सा है। जाहिर सी बात है प्रचुर सम्पदा और शक्ति पड़ोसी देशों में भय पैदा करता है, वे खुद को असुरक्षित मानकर बाहरी देशों से गठबंधन करने के प्रति ज्यादा इच्छुक रहते है। लेकिन भवानी दास गुप्ता का तर्क है कि भारत जैसा है वैसा ही रहेगा। अब वह अपने आपको चुहे में तो तब्दील नहीं कर लेगा। लेकिन यदि दक्षिण एशिया को मिलकर चलना है कि उसे भारत की विशालता को स्वीकार्य करना पड़ेगा और भारत को भी यह साबित करना पड़ेगा बड़ा होने का मतलब डरावना नहीं, बल्कि सुन्दर भी होता है।

➢ दक्षेस की विफलता का एक अन्य महत्वपूर्ण कारण है दक्षिण एशिया के दो प्रमुख खिलाड़ियों भारत पाकिस्तान के बीच प्रतिद्वन्द्विता ने न केवल दक्षेस के उद्देश्यों को संदेह के घेरे में ला खड़ा किया हैं, बल्कि इसे किसी षड़यंत्र का नतीजा भी बताया जाने लगा है।

आसियान से क्या सीख सकता है दक्षेस? –

➢ दक्षिण–पूर्व एशियाई देशों के संगठन जिसे हम आसियान के नाम से भी जानते हैं। दुनिया के बड़े क्षेत्रीय अन्तर सरकारी संगठनों में से एक है।

➢ वर्ष 1967 में आसियान ने अपने सफर की शुरूआत की और उस समय से ही यह दक्षिण–पूर्व एशिया में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार और कनेक्टिविटी को बढ़ावा देता आया है।

➢ हम जब भी इस क्षेत्र में व्यापार और कनेक्टिविटी की बात करते हैं तो एक और क्षेत्रीय संगठन 'दक्षेस' का जिक्र अवसम्भावी हो जाता है, जिसकी यात्रा 1985 में आरम्भ हुई।

➢ एक ओर आसियान जहाँ अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में सफल रहा है वहीं दक्षेस क्षेत्रीय राजनीतिक, सदस्य देशों की आपसी प्रतिद्वद्विता और

उनके बीच व्याप्त अविश्वास के कारण अस्थिर रहा है।

राजनैतिक मतभेद, बहस तथा सदस्य देशों की खराब आर्थिक स्थिति के कारण पिछले 25 वर्षो में दक्षेस अपने महत्वकांक्षी उद्देश्यों की प्राप्ति में लगभग विफल रहा है। अधिकांश कार्यक्रम और उपलब्धियाँ केवल अधिकारिक दस्तावेज तक ही सीमित है।

समस्या और निराकरण में भारत की भूमिका –

प्रोफेसर सरोज मोहंती ने कहा कि भले ही वैश्विक मंदी से दक्षिण एशिया काफी प्रभावित हुआ हो, लेकिन आने वाले वर्षों में इसके तेजी से बढ़ने की संभावना थी क्योंकि वैश्विक जी. डी. पी. में इसकी हिस्सेदारी बढ़ रही थी। सार्क के छोटे देशों का इस क्षेत्र में बहुत अधिक दबाव है और उन्होंने कहा कि इस क्षेत्र का समग्र व्यापार बढ़ रहा है और आई. आर. टी. समग्र व्यापार के साथ एक ही गति बनाए हुए है। उन्होंने जोर देकर कहा कि पांच प्रतिशत आई. आर. टी. अनुपात इस क्षेत्र के लिए महत्वपूर्ण है और अर्थव्यवस्थाओं की संरचना में बदलाव से आई. आर. टी. अनुपात में भी बदलाव आ सकता है। उन्होंने कहा कि इस क्षेत्र ने क्षेत्रीय निवेश जुटाने के लिए ज्यादा कुछ नहीं किया है।

यह कुछ चीजें दक्षेस की प्रगति और साफ्टा की पूर्ण अभिव्यक्ति को रोकने वाली है। सबसे पहली तो यह है कि दक्षेस के सदस्य देशों का आपसी व्यापार बहुत कम है। यह कुल अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का मात्र 5 प्रतिशत है जब कि इन देशों की कुल जनसंख्या 1.7 विलियन है। इसकी अपेक्षा नाफ्टा और यूरोपियन युनियन आगे हैं यहाँ तक आसियान भी। दूसरा कारण शायद दक्षिण एशियाई देशों की गरीबी और भुखमरी यानी सही अर्थो में अविकास की स्थिति।

जो भी इन देशों को विश्व की गतिशीलता को देखते हुए अपनी मानसिकता को बदलना चाहिए। इन्हें अपनी भौगालिक निकटता और दुनिया की 20 प्रतिशत अबादी होने का लाभ विशाल और वैविध्यपूर्ण बाजार के रूप में दक्षिण एशिया को विकसित करने के लिए उठाना चाहिए।

आठ राष्ट्र, स्पंदनशील और उभरते हुए प्रजातंत्र, प्रगतिशील अर्थव्यवस्थायें लगभग 1.7 विलियन जनसंख्या तथा दुनिया के बड़े धर्मो की भूमि दक्षिण एशिया में यह सब कुछ उप स्थित है जो इसे वैश्विक परिदृश्य पर अपनी पहचान बनाने वाली एक क्षेत्रीय ताकत बनाने के लिए चाहिए। अपनीं स्थापना के 29 वर्ष बाद और 30वीं वर्षगांठ से पहले सार्क के लिए अब समय आ गया है कि बड़ी बड़ी घोषणाओं और ठोस कार्यवाही के बीच के अन्तर को खत्म किया जाए।

निराशावादियों द्वारा सार्क को अनुचित रूप से सिर्फ वार्ता करने वाला मंच और काम न करने वाला समूह बताया गया है। यह आलोचना सही नहीं है, संगठन ने क्षेत्रीय सहयोग संरचना को मजबूत करने के लिए एक दक्षिण एशियाई विश्वविद्यालय, संकटकाल में राष्ट्रीय प्रयासों को सम्पूरित करने के लिए सार्क विकास निधि, एक सार्क खाद्य बैंक और संकट तथा प्राकृतिक आपदाओं के समय एक दूसरे की सहायता करने हेतु सार्क आपदा प्रबन्धन केन्द्र की स्थापना करने जैसे कुछ महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं। ये सभी सराहनीय कदम हैं, और उज्जवल भविष्य का संकेत है।

Reference

1. शुक्ला कृष्णानन्द, स्त्रातेजिक वातावरण, राधा कृष्ण नई दिल्ली
2. रक्षार्थ 2001 भारत पाक सुरक्षा सम्बन्ध पारम्परिक तथा आणविक संदर्भ – डी. डी. खन्ना।
3. चौहान बी. एस. गौतम – अलका भारत का भूगोल, रस्तोगी पब्लिकेशन संस्करण 1997।

4- www.welcomenri.com/useful.

5- Vijay Khare Dr. B.R. Ambedkar indias national Security K.Lasoo Books New Delhi.

6. समाचार पत्र।
7. घटनाचक्र दिसम्बर–2014।
8. रहीस सिंह बुक।

9- Bindra, S. S. India & her Neghbours : A Study of Political Economic & Culture Relation and Interaction, India Publication, New Delhi, 1984.

10- Dr. Ram, Raghunath : Super Powers and Indo - Pakistani Sub-Continent, Perceptions and Policies "The Coxton Press Ltd., New Delhi, 1985.

11- Devi, T. Nirmal : Socio Eco Profile of SAARC Country, South Asian Publication, New Delhi, 1994.

◈◈

RNI : UPMUL00620/24/1/2014-TC ISSN : 2394-4366

Received: 04 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

बदलते परिदृश्य में भावात्मक एवं राष्ट्रीय एकता की भूमिका

– डॉ. रवेन्द्र राजपूत
असि. प्रोफेसर – शिक्षक शिक्षा विभाग,
श्री वार्ष्णेय महाविद्यालय,
अलीगढ़–200201 (उत्तर प्रदेश)

ई–मेल :
ravendrarajput@hotmail.com

शोधसार

"अयं निजः परोवेता इति गणना लघु चेतसाम्।
उदार चरितानाम् तु वसुधैव कुटुम्बकम्।''

का पावन भाव भारतीय मनीषियों ने हजारों वर्ष पूर्व इस विश्व को दिया था। भारतीय मनीषियों के हृदय से फूटकर प्रवाहित होने वाली विश्व बन्धुत्व की यह अजस्र स्रोतस्विनी स्थानीय तथा राष्ट्रीय घेरों को तोड़ कर समस्त विश्व में चतुर्दिक फैली थी। इन मनीषियों ने स्थानीय निम्न आदर्शों के स्थान पर विश्वजनीन उच्चतम आदर्शों को अपनाया था। समग्र वसुधा के मानव के साथ उन्होंने बन्धुता का नाता जोड़ा था।

परन्तु आज का विश्व पथभ्रष्ट सा दिग्भ्रमित सा, अपने राष्ट्रीय घेरे में आबद्ध है। "मेरा राष्ट्र मेरा, देश बुरा हो या अच्छा'' का विषाक्त नारा भूमंडल पर लगाने वाली जनता और राजनेता दो विश्वयुद्ध और हजारों लाखों युद्धों से अपनी और विश्व की कमर तोड़ चुके हैं। महायुद्धों की विभीषिका का मूल कारण संकुचित मनोवृत्ति की राष्ट्रीयता ही रही है। जब धर्म के काले चश्मे से राष्ट्र देखा जाता है तो पूरा राष्ट्र काला नजर आता है इन्सानियत काली करतूतों से सनी नजर आती है। आवश्यकता यह है कि संकीर्णता को राष्ट्रीयता पर बलिदान कर दें दोनों के बीच मधुर सम्बन्ध स्थापित कर दें दोनों को, दोनों की चिन्ता करने योग्य बना दें। इसके लिये अमोघ अस्त्र शिक्षा है।

फिश्ते कहा करता था कि– "शिक्षा ही हमें उन समस्त दुर्गुणों से बचा सकती है जो आज हमें तंग कर रहे हैं।'' इसलिए शिक्षा को संकुचित घेरे से निकाल कर राष्ट्रीयता के विशाल रंगस्थल पर लाना है अन्यथा विश्वशान्ति गूलर का पुष्प बन जायेगी मानवता कराहती हुई नजर आयेगी। शिक्षा ही हमें अन्ततोगत्वा दूरगामी एवं प्रगतिशील उद्देश्यों की पूर्ति करा सकती है। मानवता की राह को सही दिशा दिखाने वाली शिक्षा ही है और मानवता की राह दिग्भ्रमित हो चुकी है। "इस पथ का उद्देश्य नहीं है, श्रान्त भवन में टिक रहना, किन्तु पहुँचना उस सीमा पर, जिसके आगे राह नहीं।'' के अनुसार मानवता का रास्ता लम्बा है शिक्षा इस राह में प्रकाश स्तम्भ के सदृश्य है। वह कंटकाकीर्ण एवं विभीषिका के अंधकार से बचा कर मार्ग प्रशस्त करती है। शिक्षा से विवेक आता है और जब–जब विवेक का दामन विश्व ने छोड़ा है तब तब युद्ध हुए हैं। के० जी० सैयदन कहते हैं– "जब विश्व में युद्ध के बादल मँडराते हैं तब वहां न तो स्वास्थ्य न आर्थिक लाभ न आराम और न साहित्य एवं सभ्यता ही रहती है।'' मानव युद्ध से बचना भी चाहता है, वह युद्धों से त्रस्त भी है, वह इस पैशाचिक लीला की पुनरावृत्ति भी नहीं चाहता। परन्तु नाहक फँस जाया करता है, विनाश का ताण्डव–नृत्य देखना पड़ता है। परन्तु विश्व के

लोगों को के0जी0 सैयदन की इस बात को याद रखना चाहिये कि– "यदि विश्व के लोग आपस में शान्तिपूर्वक नहीं रहेंगे तो एक दिन वे अपने आप को नष्ट कर लेंगे। युद्ध और शान्ति बिल्कुल अभिन्न वस्तुएँ बन गई हैं। युद्ध के कारण कलह असहिष्णुता एवं बर्बादी है।'' यूनेस्को का भी मत है कि– "युद्ध का जन्म मानव के मस्तिष्क में होता है, इसलिये शान्ति रूपी सुरक्षा की दीवार भी मानव के मस्तिष्क में ही होनी चाहिये।''

मनुष्य भाव प्रधान प्राणी है। भावना के कारण ही वे एक–दूसरे से जुड़ते हैं और भावना के कारण ही वे एक–दूसरे से अलग होते हैं। जब दो या दो से अधिक व्यक्ति रक्त, जाति, स्थान, रहन–सहन, खान–पान, रीति–रिवाज, भाषा, साहित्य, धर्म, आचार–विचार आदि किसी भी समानता के कारण एक–दूसरे की ओर आकर्षित होते हैं और किसी अन्य कारण से उनमें सरलता से अलगाव की सम्भावना नहीं होती तो हम कहते हैं कि उनके बीच ''भावात्मक एकता'' है। प्रायः किसी जाति, समुदाय और राष्ट्र के व्यक्तियों के बीच भावात्मक एकता होती है और जब यह भावात्मक एकता समाप्त हो जाती है तो उनका अस्तित्व खतरे में पड़ जाता है।

परन्तु भावात्मक एकता के सम्बन्ध में कोई एक निश्चित धारणा नहीं है। इस शब्द का प्रयोग दो व्यक्तियों के बीच व्यक्तिगत आधार पर विकसित एकता से लेकर जातीय, क्षेत्रीय, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विकसित एकता से लिया जाता है। शिक्षा के क्षेत्र में भावात्मक एकता की चर्चा राष्ट्रीय एकता की प्राप्ति के सन्दर्भ में की जाती है।

कोई राष्ट्र कितना भी छोटा–बड़ा क्यों न हो, उसमें अनेक जाति और अनेक धर्मों के लोग रहते हैं। इनके रहन–सहन, खान–पान, आचार–विचार, मान्यता, विश्वास और मूल्यों में भिन्नता होती है। पर इन भिन्नताओं के होते हुए भी यदि किसी राष्ट्र के नागरिक राष्ट्र के नाम पर एक होते हैं तो हम कहते हैं कि उस राष्ट्र के व्यक्तियों में "भावात्मक एकता'' है।

राष्ट्रीय एकता का अर्थ एवं परिभाषा – राष्ट्रीय एकता का अर्थ है किसी राष्ट्र के सभी व्यक्तियों में 'हम' की भावना का होना। जब किसी राष्ट्र के सभी व्यक्ति, क्षेत्र, जाति, संस्कृति और धर्म आदि की भिन्नता होते हुए भी राष्ट्र के नाम पर हम की भावना से जुड़े होते हैं, एक होते हैं और राष्ट्र हित के आगे अपने वैयष्टिक सामूहिक हितों का त्याग करते हैं तो हम कहते हैं कि उस राष्ट्र में राष्ट्रीय एकता है। राष्ट्रीय एकता किसी भी राष्ट्र का मुख्य तत्त्व होता है, बिना इसके राष्ट्र की कल्पना ही नहीं की जा सकती। इसके अभाव में कोई राष्ट्र बहुत दिनों तक जीवित नहीं रह सकता।

अब प्रश्न उठता है कि राष्ट्र क्या है?सामान्य प्रयोग में हम देश, राज्य और राष्ट्र शब्दों का प्रयोग पर्यायवाची के रूप में करते हैं परन्तु ये तीनों भिन्न सम्प्रत्यय हैं। देश एक भौगोलिक सम्प्रत्यय है, इसमें केवल एक मूल तत्त्व होता है–भौगोलिक क्षेत्र। राज्य एक राजनैतिक सम्प्रत्यय है, इसके चार मूल तत्त्व होते हैं–भौगोलिक क्षेत्र, जनसंख्या, सरकार और प्रभुसत्ता। और राष्ट्र एक भावात्मक सम्प्रत्यय है, इसके दो मूल तत्त्व होते हैं जनसंख्या और जनसंख्या में 'हम' की भावना। यह बात दूसरी है कि प्रत्येक राष्ट्र अपने हितों की रक्षा के लिए अपना राज्य स्थापित करने का प्रयत्न करता है। आज प्रायः सभी राष्ट्रों के अपने राज्य हैं इसलिए राष्ट्र और राज्य पर्याय हो गए हैं।

राष्ट्र भी दो प्रकार के होते हैं एक पुरातन राष्ट्र और दूसरे आधुनिक राष्ट्र। पुरातन राष्ट्रों का निर्माण जाति, भाषा, संस्कृति और धर्म के आधार पर हुआ था। आगे चलकर इन राष्ट्रों ने अपने हितों की रक्षा के लिए अपने–अपने राज्यों की स्थापना की, यह बात दूसरी है कि कभी वे अपने राज्यों की सुरक्षा कर सके और कभी उन्हें दूसरे राष्ट्रों के राज्यों के अधीन रहना पड़ा। इस प्रकार पुरातन राष्ट्र स्वयं में सांस्कृतिक सम्प्रत्यय थे। परन्तु जैसे–जैसे विज्ञान के क्षेत्र में उन्नति हुई और संसार में औद्योगिक क्रान्ति हुई तैसे–तैसे विभिन्न जाति, भाषा, संस्कृति और धर्म के लोग 'हम' की भावना से बंधे और एक नए प्रकार के राष्ट्रों का निर्माण हुआ। इन्हें "आधुनिक राष्ट्र'' कहा जाता है। इन आधुनिक राष्ट्रों में व्यक्तियों के बीच की 'हम' की भावना का आधार समान हित होता है। जिसकी पूर्ति राज्य करता है। इस समय संसार में कुछ राष्ट्र ऐसे हैं जो पुरातन राष्ट्रों से आधुनिक राष्ट्रों के रूप में आए हैं, जैसे अपना भारत और कुछ राष्ट्र इसी युग की देन हैं जैसे–अमरीका, परन्तु यह बात सभी राष्ट्रों पर लागू होती है कि उनके व्यक्ति समान हित के कारण 'हम' की भावना से बंधे हैं और उनके इन समान हितों की पूर्ति उनके अपने–अपने राज्य करते हैं। और राज्य यह कार्य तभी कर पाते हैं जब वे व्यष्टि और समूहों के हित के साथ–साथ राष्ट्रहित को सामने रखते हैं।

इस सब चर्चा से राष्ट्र के बारे में चार तथ्य स्पष्ट

होते हैं। पहला यह कि किसी भी राष्ट्र में भिन्न–भिन्न क्षेत्रों, जाति भाषा, संस्कृति और धर्म के लोग होते हैं। दूसरा यह कि इन भिन्नताओं के होते हुए भी किसी राष्ट्र के व्यक्ति समान हित की भावना से जुड़े होते हैं। तीसरा यह कि उनके इन समान हितों की रक्षा उनका राज्य करता है। और चौथा यह कि राज्य यह कार्य तभी कर सकता है जब राष्ट्र के व्यक्ति अपने वैयष्टिक एवं सामूहिक हितों से अधिक राष्ट्रहित का ध्यान रखें। अब यदि हम राष्ट्रीय एकता को परिभाषा में बाँधना चाहें तो इस प्रकार कह सकते हैं–

''राष्ट्रीय एकता किसी राष्ट्र के व्यक्तियों के बीच समान हित के आधार पर विकसित 'हम' की भावना है जो उन्हें क्षेत्र, जाति, भाषा, संस्कृति और धर्म आदि की भिन्नता होते हुए भी अपने राष्ट्र से बाँधती है और वे राष्ट्रहित के आगे अपने वैयष्टिक एवं सामूहिक हितों का त्याग करते हैं।''

राष्ट्रीय एकता और भावात्मक एकता–

राष्ट्रीय एकता भावात्मक एकता का एक विशिष्ट रूप है। भावात्मक एकता स्थान, जाति, भाषा, संस्कृति और धर्म आदि किसी भी आधार पर हो सकती है और इसका क्षेत्र दो मनुष्यों से लेकर संसार की सम्पूर्ण मानव जाति तक हो सकता है, परन्तु जब यही भावात्मक एकता किसी समान हित के आधार पर किसी राष्ट्र के सभी व्यक्तियों के बीच होती है और वे राष्ट्रहित के आगे अपने वैयष्टिक एवं सामूहिक हितों का त्याग करते हैं तो इसे "राष्ट्रीय एकता'' कहते हैं। इस प्रकार राष्ट्रीय एकता का आधार एवं क्षेत्र दोनों निश्चित होते हैं और इसमें राष्ट्रहित के लिए वैयष्टिक एवं सामूहिक हितों का त्याग आवश्यक होता है। परन्तु शिक्षा के क्षेत्र में जब हम भावात्मक एकता की बात करते हैं तो उसका तात्पर्य राष्ट्रीय एकता से ही होता है।

राष्ट्रीय एकता और राष्ट्रीयता –

राष्ट्रीय एकता का अर्थ है किसी राष्ट्र के व्यक्तियों में 'हम' की भावना और इस 'हम' की भावना का मानदण्ड होता है व्यक्ति द्वारा राष्ट्रहित को सर्वोपरि मानना, राष्ट्रहित के आगे अपने वैयष्टिक एवं सामूहिक हितों का त्याग करना। राष्ट्रहित को सर्वोपरि मानने की भावना को राष्ट्रीयता कहते हैं।

राष्ट्रीयता दो प्रकार की होती है– एक संकीर्ण राष्ट्रीयता और दूसरी उदार राष्ट्रीयता। जब किसी राष्ट्र के व्यक्ति केवल अपने ही राष्ट्र के हित की बात सोचते हैं तो इसे संकीर्ण राष्ट्रीयता कहते हैं। संकीर्ण राष्ट्रीयता नागरिकों में अनेक दुर्गुण पैदा करती है, वे सोचते हैं हमारा ही राष्ट्र श्रेष्ठ है, हमारा ही राष्ट्र आगे बढ़े। इस प्रकार की राष्ट्रीयता संसार के लिए बड़ी घातक सिद्ध हुई है। इसी के कारण अतीत में खून की नदियाँ बही हैं और इसी के कारण वर्तमान में युद्ध के बादल छाए हुए हैं। इसके विपरीत उदार राष्ट्रीयता व्यक्तियों को अपने राष्ट्रहित के लिए न्यौछावर करने की प्रेरणा देती हैं, परन्तु वह किसी अन्य राष्ट्र को किसी प्रकार की हानि पहुंचाने की आज्ञा नहीं देती। इस प्रकार की राष्ट्रीयता सह–अस्तित्व में विश्वास रखती है।

उदार राष्ट्रीयता के गुण –

(1) राष्ट्रीयता किसी राष्ट्र के व्यक्तियों को एक सूत्र में बांधती है। वे स्थान, जाति भाषा, धर्म, संस्कृति आदि के आधार पर भिन्न होते हुए भी राष्ट्र के नाम पर एक होते हैं।

(2) राष्ट्रीयता व्यक्ति को राष्ट्रहित के लिए अपना सब कुछ न्यौछावर करने के लिए तैयार करती है। इसके अभाव में कोई राष्ट्र अपने राज्य की सीमाओं की रक्षा नहीं कर सकता।

(3) राष्ट्रीयता राष्ट्र की अस्मिता की रक्षा करती है। अगर किसी राष्ट्र के व्यक्तियों में राष्ट्रीयता की भावना न हो तो वह अपने स्वरूप की रक्षा नहीं कर सकता।

(4) राष्ट्रीयता राष्ट्रों में होड़ की भावना विकसित करती है और वे एक–दूसरे से अधिक उन्नति करने के लिए प्रयत्नशील होते हैं।

(5) उदार राष्ट्रीयता व्यक्तियों को अपने राष्ट्र की उन्नति करने के लिए दूसरे राष्ट्रों से सहयोग लेने के लिए तैयार करती है।

(6) उदार राष्ट्रीयता व्यक्तियों को दूसरे राष्ट्रों की उन्नति में अपना सहयोग प्रदान करने के लिए तैयार करती है।

(7) उदार राष्ट्रीयता अन्तर्राष्ट्रीय भावना के विकास में सहायक होती है।

संकीर्ण राष्ट्रीयता के दोष–

(1) राष्ट्रीयता किसी राष्ट्र के व्यक्तियों को एक सूत्र में बांधती है परन्तु संकीर्ण राष्ट्रीयता उनमें एक दुर्गुण पैदा करती है कि "मेरा ही राष्ट्र श्रेष्ठ है'' और यह संकीर्ण राष्ट्रीयता संसार के लिए बड़ी घातक होती है।

(2) राष्ट्रीयता व्यक्तियों को राष्ट्र की सीमाओं की सुरक्षा के लिए तैयार करती है परन्तु संकीर्ण राष्ट्रीयता

उन्हें अपनी सीमाओं को बढ़ाने की ओर अग्रसर करती है और युद्धों को जन्म देती है।

(3) राष्ट्रीयता व्यक्तियों में राष्ट्र की अस्मिता बनाए रखने की भावना पैदा करती है, यह अच्छी बात है, परन्तु संकीर्ण राष्ट्रीयता दूसरे राष्ट्रों की अस्मिता को बिगाड़ने की प्रेरणा देती है, यह बुरी बात है।

(4) राष्ट्रीयता के कारण राष्ट्रों के बीच होड उत्पन्न होती है परन्तु संकीर्ण राष्ट्रीयता इसे इर्ष्या में बदल देती है। उस स्थिति में यह राष्ट्रों की उन्नति में बाधक होती है।

(5) जब राष्ट्रीयता संकीर्ण राष्ट्रीयता में बदल जाती है तो वह एक राष्ट्र को दूसरे राष्ट्रों से सहयोग लेने की स्थिति में नहीं छोड़ती।

(6) संकीर्ण राष्ट्रीयता एक राष्ट्र को दूसरे राष्ट्रों की सहायता करने से रोकती है।

(7) संकीर्ण राष्ट्रीयता अन्तर्राष्ट्रीय भावना के विकास में बाधक होती है।

भारत में भावात्मक एवं राष्ट्रीय एकता की आवश्यकता–

किसी भी राष्ट्र के अस्तित्व के लिए पहली मूलभूत आवश्यकता उसके नागरिकों में राष्ट्रीय एकता का होना है। हमारे देश की कुछ विशेष स्थिति है. यहाँ विभिन्न जाति, भाषा और संस्कृति और धर्मों के लोग रहते हैं और इन आधारों पर वे वर्ग विशेषों में बंटे हैं सब अपने–अपने हित की बात सोचते हैं और देशहित अथवा राष्ट्रहित पीछे हो गया है। इससे अनेक खतरे पैदा हो गए हैं। इन खतरों से बचाव करने के लिए हमारे देश में राष्ट्रीय एकता का विशेष महत्त्व है, उसकी बड़ी आवश्यकता है। जिसे हम इन बिन्दुओं से स्पष्ट कर सकते हैं–

1. राष्ट्र के अस्तित्व की रक्षा के लिए – प्रत्येक राष्ट्र अपने अस्तित्व की रक्षा करना चाहता है, हमारा राष्ट्र भारत भी। इसके लिए सर्वप्रथम आवश्यकता है– राष्ट्रीय एकता की अर्थात् देश के नागरिकों में राष्ट्र के नाम पर 'हम एक हैं' की भावना की और राष्ट्रहित में अपने वैयष्टिक एवं सामूहिक हितों के त्याग की भावना एवं शक्ति की।

2. राष्ट्र के शासनतन्त्र में आस्था उत्पन्न करने के लिए – राष्ट्र के शासनतन्त्र में नागरिकों की आस्था होना राष्ट्र का दूसरा मूल तत्त्व होता है और हमारे देश की स्थिति यह है कि यहाँ के अधिकतर लोग लोकतन्त्र का अर्थ ही नहीं समझते। और कुछ लोग तो इसके स्वरूप को विकृत करने में लगे हुए है। हमारे राष्ट्र के सभी नागरिकों में लोकतन्त्र में आस्था तभी सम्भव है जब राष्ट्र में राष्ट्रीय एकता हो। इस दृष्टि से भी आज देश में राष्ट्रीय एकता का बड़ा महत्त्व है, उसकी बड़ी आवश्यकता है।

3. विघटनकारी तत्त्वों के उन्मूलन के लिए – हमारे देश में यदि लोग जाति के नाम पर भिन्न हैं तो भाषा, संस्कृति अथवा धर्म के आधार पर एक हैं। यदि भाषा के नाम पर भिन्न हैं तो जाति, संस्कृति अथवा धर्म के नाम पर एक हैं और यदि संस्कृति के नाम पर भिन्न हैं तो जाति अथवा भाषा के नाम पर एक हैं और यह श्रृंखला इतनी बहुमुखी एवं विस्तृत है कि भारत का प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी रूप में दूसरे व्यक्ति से जुड़ा है। परन्तु कुछ स्वार्थी तत्त्व, विशेषकर वोट की राजनीति करने वाले लोग देश की जनता को क्षेत्र, जाति, धर्म अथवा भाषा के नाम पर विभाजित कर अपना उल्लू सीधा कर रहे हैं। आश्चर्य की बात तो यह है कि कोई मन्त्री होने के बाद भी स्वयं को हिन्दू कहता है और हिन्दुओं के अधिकारों का रक्षक कहता है, कोई अपने को मुसलमान कहता है और मुसलमानों के अधिकारों का रक्षक कहता है, कोई अपने को पिछड़ा मानता है और पिछड़ी जातियों के अधिकारों का रक्षक कहता है और इसी प्रकार कोई अपने को अनुसूचित जाति के अधिकारों का रक्षक, कोई अनुसूचित जनजातियों के अधिकारों का रक्षक और कोई दलितों का हितैषी कहता है। राष्ट्र के हित की बात सोचने और करने वाले अब उँगलियों पर गिने जा सकते हैं। अतः आज आवश्यक है सभी को, विशेषकर राष्ट्र के कर्णधारों को राष्ट्रहित से जोड़ने की और उन्हें राष्ट्रहित के आगे वैयष्टिक, जातीय, क्षेत्रीय अथवा अन्य हितों के त्याग करने के लिए तैयार करने की, उनमें राष्ट्रीय एकता के विकास की।

4. क्षेत्रीय संकीर्णता को समाप्त करने के लिए – हमारा देश कई प्रान्तों में बँटा हुआ है। इन प्रान्तों का निर्माण भौगोलिक सीमाओं और भाषाओं के आधार पर किया गया है। एक तो इन प्रान्तों में यही आधारभूत भिन्नता है। दूसरे कुछ स्वार्थी तत्त्व उनमें क्षेत्रीय संकीर्णता पैदा कर अपना स्वार्थ सिद्ध कर रहे हैं। परिणाम यह है कि किन्हीं प्रान्तों के बीच सीमा विवाद चल रहा है, किन्हीं में नदियों के पानी के बंटवारे का विवाद चल रहा है और किन्हीं में अंतर्राज्यीय व्यापार सम्बन्धी विवाद चल रहा है। इतना ही नहीं अपितु एक ही प्रान्त के एक भाग के लोग आए दिन अलग प्रान्त की मांग करते रहते हैं। हरियाणा, हिमाचल प्रदेश एवं अरुणाचल प्रदेश,

उत्तरांचल, छत्तीसगढ़ और झारखण्ड आदि इसी के परिणाम हैं। इस विभाजन को रोकने के लिए आज देश में राष्ट्रीय एकता की बड़ी आवश्यकता है।

5. वर्ग संघर्ष की समाप्ति के लिए – भारत में क्षेत्र, जाति, संस्कृति और धर्म के आधार पर तो वर्ग संघर्ष होते ही हैं साथ ही सरकार और सरकार से बाहर राजनैतिक दलों, सरकार और सरकारी कर्मचारियों, उद्योगपतियों और मिल मजदूरों आदि के बीच भी संघर्ष होते रहते हैं। और सबसे अधिक बुरी बात यह है कि इन संघर्षों में यथा क्षेत्रों में काम बन्द हो जाता है। तोड़–फोड़ होती है, जनजीवन प्रभावित होता है और करोड़ो रुपए प्रतिदिन की हानि होती है। लोकतन्त्र का अर्थ है लोकहित का शासन और यहाँ लोकतन्त्र के नाम पर आए दिन हड़ताल, तोड़–फोड़ और आगजनी होती हैं। इस सब पर अंकुश पाने के लिए राष्ट्र में राष्ट्रीय एकता का होना आवश्यक है। जब तक लोग राष्ट्र से नहीं जुड़ते, राष्ट्रहित की बात नहीं सोचते तब तक यह स्थिति सुधर नहीं सकती।

6. राष्ट्र की सुरक्षा के लिए – किसी भी राष्ट्र की सुरक्षा के लिए सैनिक शक्ति के साथ–साथ राष्ट्रीय एकता आवश्यक होती है। फिर हमारे देश की सीमाएँ तो आतंकवादी पाकिस्तान और विस्तारवादी चीन से लगी हैं। इतना ही नहीं अपितु हमारे देश में पाकिस्तान और चीन के हितैषियों की संख्या भी कुछ कम नहीं है। इन सबको जब तक भारत राष्ट्र से नहीं जोड़ा जाता, उन्हें राष्ट्रहित के लिए तैयार नहीं किया जाता तब तक राष्ट्र की सुरक्षा को खतरा रहेगा। इस दृष्टि से भी आज भारत में राष्ट्रीय एकता का बड़ा महत्त्व है, उसकी बड़ी आवश्यकता है।

7. राष्ट्र के विकास एवं जीवन स्तर को उठाने के लिए – किसी भी राष्ट्र का किसी भी प्रकार का विकास उसकी नीतियों, रीतियों और जन सहयोग पर निर्भर करता है, उसका आर्थिक विकास भी। राष्ट्र की नीतियाँ और रीतियाँ लोकहित में तभी बन सकती है जब सरकार में बैठे लोग राष्ट्रहित में सोचें अर्थात् उनमें राष्ट्रीय एकता की भावना हो। यह नीतियाँ और रीतियाँ तभी सुचारु रूप से चल सकती है जब इनके अनुपालन एवं क्रियान्वयन में जनसहयोग हो और जनसहयोग तभी सम्भव है जब जन–जन में राष्ट्रीय एकता की भावना हो। अतः हम कह सकते हैं कि किसी राष्ट्र का विकास उसके नागरिकों में राष्ट्रीय एकता होने पर निर्भर करता है, उसका आर्थिक विकास भी और आर्थिक विकास पर निर्भर करता है जीवन स्तर। अतः जीवन स्तर को उठाने के लिए भी आज भारत में राष्ट्रीय एकता बहुत आवश्यक है।

भावात्मक एवं राष्ट्रीय एकता के विकास में शिक्षकों की भूमिका – भावात्मक एवं राष्ट्रीय एकता के विकास का सबसे सशक्त साधन है– शिक्षा। पर इसके लिए शिक्षा के क्षेत्र में अनेक परिवर्तन करने होंगे। जहाँ तक शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यचर्या, पाठय पुस्तकें, रेडियो और टेलीविजन प्रसारण, राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षकों के स्थानान्तरण और छात्रों को अध्ययन सुविधा प्रदान करने की बात है, ये सब कार्य तो शिक्षा विभाग के हैं, राज्य के हैं, परन्तु अन्य सब कार्य विद्यालयों को करने होंगे और विद्यालयों में ये सब कार्य तभी हो सकते हैं जब उनके प्राचार्य या प्रधानाध्यापक और शिक्षक इनमें रुचि लें। इनमें भी शिक्षकों का उत्तरदायित्व सबसे अधिक है क्योंकि वे विद्यार्थियों के अधिक सम्पर्क में आते हैं। विद्यार्थी अपने शिक्षकों को आदर्श मानते हैं, उनका अनुकरण करते हैं और जाने–अनजाने उनके गुण–दोषों को ग्रहण करते हैं। अतः शिक्षकों के लिए आवश्यक है कि उनमें राष्ट्रीय भावना हो और वे राष्ट्रहित के आगे अपने वैयष्टिक एवं सामूहिक हितों का त्याग करें। शिक्षकों के इस आचरण की छाप बच्चों पर पड़ेगी ही।

बात शिक्षकों की भूमिका की करें तो सबसे पहली आवश्यकता तो यह है कि वे बच्चों में स्थान, जाति, धर्म और संस्कृति आदि किसी भी आधार पर भेद न करें, सबके साथ समान व्यवहार करें चाहे बच्चों के विद्यालय में प्रवेश की बात हो, चाहे उनके द्वारा विषय चयन की बात हो, चाहे कक्षा शिक्षण की बात हो, चाहे पाठ्य सहगामी क्रियाओं में भाग लेने की बात हो, चाहे छात्रवृत्तियों के आवंटन की बात हो और चाहे छात्रावासों में प्रवेश की बात हो। यह समान व्यवहार अध्यापक तभी कर सकते हैं जब उनके हृदय में देश के सभी क्षेत्रों, सभी जातियों, सभी धर्मों, सभी भाषाओं और उनके साहित्यों और सभी संस्कृतियों के प्रति उदार भाव हो।पर इतने भर से काम चलने वाला नहीं है। शिक्षकों को अपने बच्चों में भी देश के सभी क्षेत्रों, सभी भाषाओं और उनके साहित्यों, सभी जातियों, सभी धर्मों और सभी संस्कृतियों के प्रति उदार भाव का विकास करना होगा। इसके लिए उन्हें सदैव अवसर की तलाश में रहना चाहिए, प्रातःकालीन सभा में, कक्षा शिक्षण में पाठ्यसहगामी क्रियाओं के सम्पादन में, जहाँ कहीं और जब कभी भी अवसर मिले बच्चों में राष्ट्र की समस्त जातियों, भाषा और उनके साहित्यों, धर्मों और

संस्कृतियों के प्रति उदार भाव का निर्माण करना चाहिए। इतिहास, भूगोल तथा नागरिक शास्त्र आदि सामाजिक विषयों को पढ़ाते समय, राष्ट्रीय स्तर के सामाजिक, धार्मिक और राष्ट्रीय नेताओं के जन्म दिवस मनाते समय अंतर्प्रान्तीय खेलकूद एवं सांस्कृतिक आयोजनों पर और देश भ्रमण के समय ऐसे अवसर बहत आते है शिक्षकों को इन अवसरों का लाभ उठाना चाहिए।

किसी भी राष्ट्र में अनेक भिन्नताएं होते हुए भी उसकी अपनी एक पहचान होती है, उसका अपना राष्ट्रचिह्न होता है, राष्ट्रध्वज होता है. राष्ट्रगान होता है और राष्ट्रभाषा होती है। शिक्षकों को स्वयं इनका सम्मान करना चाहिए और बच्चों को इनका सम्मान करने की ओर अग्रसर करना चाहिए। राष्ट्रीय पर्वो पर सरकारी संस्थानों और शिक्षण संस्थाओं में अनिवार्य रूप से राष्ट्रध्वज फहराया जाता है. राष्ट्रगान होता है और राष्ट्रीय महत्त्व के मुद्दों पर चर्चा होती है। हम देखते हैं कि आजकल यह सब मात्र खाना–पूरी के रूप में होता है। शिक्षकों को इस दिशा में संवेदनशील होना चाहिए और राष्ट्र ध्वज को सम्मान देना चाहिए और राष्ट्रगान को पूरे सम्मान के साथ गाना चाहिए। तब बच्चे उनका अनुकरण करेंगे ही। यदि शिक्षकों के हृदय और मस्तिष्क में राष्ट्रध्वज और राष्ट्रगान के प्रति आदर, सम्मान और श्रद्धा का भाव होगा तो बच्चे यह सब देखेंगे और सहज रूप से उसे अपने अन्दर भी विकसित होता पाएंगे। ये ही तो कुछ राष्ट्रीय महत्त्व की वस्तुएँ एवं क्रियाएँ हैं जो हमें राष्ट्र के नाम पर 'हम' की भावना से बांधती हैं।

'हम' की भावना से बँधने के लिए विचारों का आदान–प्रदान बहुत आवश्यक होता है और विचारों के आदान–प्रदान के लिए भाषा आवश्यक होती है। इसके लिए प्रत्येक राष्ट्र की एक राष्ट्रभाषा होती है। राष्ट्र के सभी शिक्षकों को राष्ट्रभाषा हिन्दी सीखनी चाहिए और विद्यालयों में इसका प्रयोग करना चाहिए। हमारे देश में शिक्षा का माध्यम क्षेत्रीय भाषाओं को स्वीकार किया गया है परन्तु उच्च शिक्षा के लिए अंग्रेजी को भी स्वीकार किया गया है। राष्ट्रीय एकता के लिए राष्ट्रीय भाषा का प्रयोग आवश्यक है। इसे शिक्षा का माध्यम भले ही न बनाया जाए पर इसके अध्ययन–अध्यापन की सुविधा सभी शिक्षण संस्थाओं में होनी चाहिए। यह तभी सम्भव है जब सभी शिक्षक राष्ट्र भाषा को सम्मान दें उसे सीखें, दूसरों को उसे सीखने की प्रेरणा दें। समाज सेवा एवं राष्ट्रसेवा शिक्षकों का धर्म होना चाहिए, उन्हें अपने इस कर्तव्य का पालन पूर्ण निष्ठा और ईमानदारी से करना चाहिए तब वे शिक्षा के द्वारा राष्ट्रीय एकता का विकास अवश्य कर सकेंगे।

परन्तु शिक्षक अपने इन सब कार्यों में तब तक सफल नहीं हो सकते जब तक उन्हें बच्चों के अभिभावकों का सहयोग नहीं मिलता। अतः शिक्षकों को अभिभावकों का सहयोग प्राप्त करने के लिए भी प्रयत्न करने होंगे। परिवार, समुदाय और धार्मिक संस्थाओं के सहयोग से शिक्षक राष्ट्रीय एकता के विकास में सफल होंगे। और इन सबसे भी अधिक सहयोग उन्हें राज्य का चाहिए। शिक्षा नीति, उसके उद्देश्य और पाठ्यचर्या तो राज्य ही निश्चित करता है।

शिक्षकों को चाहिए कि वो बच्चो को स्प्ष्ट वक्ता स्प्ष्ट एवं निष्पक्ष विचारक शांतिपूर्ण ढंग से सोचने विवेचनात्मक ढंग का कार्य करने आदि का प्रशिक्षण दें।उनमे ऐसा भाव पैदा करने की वे सोचने लंगे कि सत्य एवं प्रेम का जीवन के अन्य पहलुओं से बेहतर हैं। मानव मात्र की सेवा ही अंतिम एवं पावन सेवा है। बच्चों में ऐसे ही भावों को भरने पर भावी सन्तति भावात्मक एवं राष्ट्रीय एकता की ओर निश्चित रूप से अग्रसर होगी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. शिक्षा के आधार – प्रसाद केशव।
2. शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धान्त – लाल रमन बिहारी।
3. भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्याएँ – गुप्ता एस. पी.।
4. भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्याएँ – लाल एवं शर्मा।
5. उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक – टण्डन उमा एवं गुप्ता अरूणा।
6. समकालीन भारत एवं शिक्षा – तिवारी मालती एवं चौधरी पूनम।
7. समकालीन भारत एवं शिक्षा – सक्सेना वन्दना एवं सिंह सविता।

◈◈

Received: 04 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

मध्यकाल की स्थापना से पूर्व हिन्दू समाज में खान–पान

– डॉ. प्रीती त्रिवेदी
एसोसिएट प्रोफेसर – इतिहास विभाग,
ए. एन. डी. एन. एन. एम. कालेज,
कानपुर–208002
(उत्तर प्रदेश)

ई–मेल :
preetitrivediand@gmail.com

सारांश

डॉ. के. एम. अशरफ ने लिखा है, कि ''मुस्लिम लोग प्रायः भोजन के सम्बन्ध में अपने धर्म के निषेधों को मानते हैं। जैसा सुअर का मांस और कुछ अन्य मांस या बिना हलाल किये पशु का मांस व कुछ अन्य मांस खाना उनके लिए वर्जित हैं। इन मर्यादाओं के बाहर वे अपनी इच्छानुसार कुछ भी तथा कहीं भी पकाने और खाने के लिए स्वतन्त्र थे, किन्तु कुछ उदाहरण जो विशेषकर अफगान धर्मोत्साहियों के देखने में आये है, वे यह प्रकट करते हैं कि उन्होंने हिन्दुओं के सारे शिष्टाचार और विशिष्ट पूर्वाग्रह अगींकार कर लिये थे।'' इसी प्रकार उल्लेख यह मिलता है कि सिन्ध के ''समर्रा अपनी जाति के लोगों के अतिरिक्त किसी के साथ नहीं खाते–पीते थे।'' पुलाव, कोफ्ता व कबाब का प्रयोग हिन्दुओं ने मुसलमानों से सीखा और धीरे–धीरे यह पुलाव कोफ्ता व कबाब मांसाहारी प्रवृति से अलग होता गया तथा पुलाव का नया रूप विरयानी ने ले लिया। विरयानी ने हिन्दुओं के सम्पर्क में आकर मांसाहारी श्रेणी को त्यागते हुए मटरविरयानी व अन्य शाकाहारी विरयानी के रूप में आ गई। इसी तरह कोफ्ता व कबाव ने भी हिन्दू संस्कृति में आकर मांसाहारी प्रवृत्ति को छोड़ते हुए लौकी व मूली कबाव आदि अन्य शाकाहारी श्रेणी का रूप प्राप्त कर लिया।

मध्यकाल की स्थापना से पूर्व हिन्दू समाज में सामान्यता लोग निरामिष भोजन करते थे, लेकिन कुछ निम्न जातियों एवं क्षत्रियों के द्वारा मांसाहारी भोजन का प्रचलन भी था। जैसा कि पेलसर्ट ने लिखा है ''हिन्दू मांस के स्वाद से अवगत थे, लेकिन वे खून युक्त किसी वस्तु को खाना अच्छा नहीं समझते थे।'' हिन्दू अपने रसोई घर की पवित्रता का विशेष ध्यान रखते थें और स्वच्छ बर्तनों का प्रयोग करते थे। भारत के कुछ भागों में लोग मछली अत्यन्त चाव से खाते थे। बौद धर्म में तन्त्रवाद के आगमन के बाद मांस खाने का प्रचलन हो गया और कुछ उच्च वर्गों के द्वारा विभिन्न रूपों में मांस को भी खाया जाने लगा।

इस काल में पाकशास्त्र की ओर विशेष ध्यान दिया जाता था। विभिन्न त्योहारों उत्सवों और पर्वों के अवसर पर विभिन्न व्यंजन तैयार किये जाते थे। दूध, घी, मक्खन का प्राचीन काल में विशेष महत्व था। उच्च वर्ग के लोग ऐसे अवसरों या मादक द्रव्यों का भी सेवन करते थे। महिलाओं के लिए मद्यपान वार्जित था। हिन्दू निम्न वर्ग के लोग पीतल के बर्तनों का प्रयोग करते थे। धनिक वर्ग सोने व चाँदी के बर्तनों को प्रयोग में लाते थे, लेकिन सामान्यता मिटटी के बर्तनों का प्रयोग विस्तृत पैमाने पर होता था।

फलों का सेवन की भी प्रथा थी। सामान्यता निम्न वर्ग के द्वारा नारंगी, खीरा, ककड़ी, अमरूद, आम व अंगूर आदि अन्य फलों का सेवन किया जाता था। उच्च वर्गों के द्वारा इन फलों के साथ–साथ विशेष फलों का भी सेवन किया जाता था जो, कि उनकों विभिन्न प्रकारों से उपलब्ध कराये जाते थे। जो फल उन्हें अपने आस–पास के क्षेत्रों से उपलब्ध नही होते थे, उनको अन्य क्षेत्रों से उपलब्ध कराया जाता था।

कुछ भोज्य पदार्थों को छोड़कर साधारणतः हिन्दुओं और मुसलमानों का दैनिक भोजन एक प्रकार का ही था। अधिकांश लोग शाकाहारी थे। सामिष भोजन जो मुसलमानों का प्रिय था भावानात्मक आधार पर मध्य व दक्षिणी भारत के हिन्दुओं के द्वारा घृणा की दृष्टि से देखा जाता था। पंजाब, बंगाल और कश्मीर में ब्राह्मण भी मांस मछली खाते थे। ''राजपूत देश में सभी जगह मांसाहारी भोजन ग्रहण करते थे।'' आदत और आर्थिक परिस्थितियों के कारण हिन्दुओं का बड़ा समुदाय निरामिष ही था।

शाकाहारी हिन्दुओं के सम्पर्क के प्रभाव के परिणामस्वरूप कुछ मुसलमान शासक भी मांसाहार में कम रूचि लेने लगे। यहाँ तक कि कुछ विशेष दिनों में जिसे वे पवित्र मानते थे पशु वध को निषेध कर रखा था। हुमायूँ ने भारत के पुनः विजय अभियान के लिए प्रस्थान करने से पूर्व मांस खाना छोड़ दिया था। कुछ महीनों के बाद जब उसने दिल्ली पर कब्जा कर लिया तो पुनः मांसाहार किया। वह यह समझता था कि सज्जन व्यक्ति के लिए गोमांस खाना उचित नहीं है।

''अकबर ने प्रारम्भ में शुक्रवार को फिर बाद में रविवार तथा कुछ अन्य दिन में भी मांसाहार छोड़ दिया था उसने रविवार को पशु वध बन्द करवा दिया था। बाद में जहाँगीर ने अपने पिता के जन्म दिन वृहस्पतिवार को भी पशु–वध निषेध कर दिया था''। इतिहासकार बदायूँनी लिखता है कि ''अकबर ने मांस खाना ही नहीं वरन लहसुन व प्याज खाना भी छोड़ दिया था।'' यह हिन्दुओं के सम्पर्क का ही परिणाम था।

डॉ. के. एम. अशरफ ने लिखा है, कि ''मुस्लिम लोग प्रायः भोजन के सम्बन्ध में अपने धर्म के निषेधों को मानते हैं। जैसा सुअर का मांस और कुछ अन्य मांस या बिना हलाल किये पशु का मांस व कुछ अन्य मांस खाना उनके लिए वर्जित हैं। इन मर्यादाओं के बाहर वे अपनी इच्छानुसार कुछ भी तथा कहीं भी पकाने और खाने के लिए स्वतन्त्र थे, किन्तु कुछ उदाहरण जो विशेषकर अफगान धर्मोत्साहियों के देखने में आये है, वे यह प्रकट करते हैं कि उन्होंने हिन्दुओं के सारे शिष्टाचार और विशिष्ट पूर्वाग्रह अगींकार कर लिये थे।''

इसी प्रकार उल्लेख यह मिलता है कि सिन्ध के ''समर्रा अपनी जाति के लोगों के अतिरिक्त किसी के साथ नहीं खाते–पीते थे।'' पुलाव, कोफ्ता व कबाब का प्रयोग हिन्दुओं ने मुसलमानों से सीखा और धीरे–धीरे यह पुलाव कोफ्ता व कबाब मांसाहारी प्रवृति से अलग होता गया तथा पुलाव का नया रूप विरयानी ने ले लिया। विरयानी ने हिन्दुओं के सम्पर्क में आकर मांसाहारी श्रेणी को त्यागते हुए मटर–विरयानी व अन्य शाकाहारी विरयानी के रूप में आ गई। इसी तरह कोफ्ता व कबाव ने भी हिन्दू संस्कृति में आकर मांसाहारी प्रवृत्ति को छोड़ते हुए लौकी व मूली कबाव आदि अन्य शाकाहारी श्रेणी का रूप प्राप्त कर लिया।

डॉ. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव ने लिखा है। कि पुलाव, कोफ्ता व कबाब आदि मुगल युग के सम्पन्न फारसी पढ़े लिखे हिन्दुओं के प्रिय पदार्थ थे।

साधारण हिन्दू और मुसलमान दोनों उत्तम भोज्य पदार्थों पर अधिक व्यय करने की दशा में नही थे, अतः वे साधारण भोजन से ही संतोष कर लेते थे। खिचड़ी इस वर्ग का प्रिय भोजन था, जो दाल और चावल को साथ पकाकर तैयार किया जाता था। दक्षिण में लोगों का मुख्य भोजन चावल था। गुजराती लोग चावल और दही पंसद करते थे। जहाँगीर ने ''कश्मीरियों के भोजन के सम्बन्ध में उल्लेख करते हुए उबले चावल तथा नमकीन, उबली सब्जियों की प्रमुखता बतलायी है। जिसमें करम पौधे के पत्ते भी शामिल होते थे।''

''उत्तर के लोगों में गेहूँ ज्वार या बाजरे की चपातियां अधिक प्रचलित थी। मध्यवर्गीय समुदाय के लोग प्रतिदिन तीन बार भोजन करते थे। गरीब लोग भी अपने दो बार के भोजन के मध्य जलपान के रूप में चने तथा भुने अनाज ग्रहण करते थे।'' वास्तव में भारत में आने के बाद मुसलमानों का भोजन भारतीय हो गया, जो चीज यहाँ पैदा होती थी तथा जो हिन्दू खाते थे, वह मुसलमान भी खाने लगे। हिन्दू लोग जो कि मसालेदार भोजन को कम प्रयोग में लाते थे, मुसलमानों के प्रभाव में आकर उन्होंने भी अपने भोजन में मसालों का प्रयोग शुरू कर दिया और एक साधारण भोजन ने अब एक विशेष व्यंजन का रूप ग्रहण कर लिया।

पान खाने का रिवाज़ समाज के सभी वर्गों व

जातियों में प्रचलित था। अमीर खुसरो ने एजाज – ए – खुशरवी में पान की विशेषताओं की चर्चा की है, और उसने 48 किस्म के पान बताये हैं। अतिथि को पान देना सामाजिक औपचारिकता समझी जाती थी। मुसलमानों ने पान खाना हिन्दुओं से सीखा था। धीरे–धीरे मुस्लिम समाज में पान खाना अत्यधिक लोकप्रिय हो गया।

पुर्तगालियों द्वारा 1605 ई. में तम्बाकू भारत में लाया गया। इसके बाद तम्बाकू भारत में जन सामान्य में बहुत लोकप्रिय हो गया। कुछ ही वर्षों में तम्बाकू पीने की आदत लोगों मे इतनी अधिक प्रचलित हो गयी, कि इस नुकसानदेह आदत से बचने के लिए 1617 ई. में जहाँगीर को निषेध कानून जारी करना पड़ा, किन्तू इस कानून का कोई असर नहीं पड़ा और तम्बाकू की लोकप्रियता बनी रही। तम्बाकू का प्रयोग हिन्दू व मुसलमान बिना किसी भेदभाव के करते थे।

हिन्दुओं में गंगा जल पवित्र माना जाता है। मुगलबादशाह तथा अन्य रईसों को भी गंगा जल पीने का शौक था जिसे वे स्वास्थकर और पवित्र मानते थे। ''औरंगजैब भी गंगा जल पीता था''। मुस्लिम समाज में मांस का प्रयोग बहुतायत में होता था। मेण्डेलसो ने लिखा है'' कि वे (मुसलमान) सामान्य रूप से गौ–मांस, बकरी, मछली, भेड़, भैंस, बैल, ऊँट और अन्य शिकारयुक्त चिड़ियों का मांस खाते थे''। उन्हें स्वादिष्ट बनाने के लिए विभिन्न प्रकार के मसालों का प्रयोग करते थे। सूफी मतावलम्बी कुछ परिवार शाकाहारी होते थे। यद्यपि शराब का पीना वर्जित था, परन्तु मुस्लिम समाज में इसका प्रचलन था।

अधिकतर मुस्लिम शासकों द्वारा शराब का सेवन किया जाता था। इसके साथ–साथ उच्च वर्गों के मुस्लिमों द्वारा भी शराब का सेवन किया जाता था। हिन्दू व मुस्लिम में शराब के सेवन में अन्तर केवल इतना था, कि हिन्दू वर्ग के लोगों में केवल कुछेक को छोड़कर उच्च व साधारण और निम्न वर्गों के द्वारा किया जाता था, जब कि मुस्लिमों में उच्च, साधारण व निम्न वर्गों में केवल कुछेक के द्वारा शराब का सेवन किया जाता था। उच्च वर्गों के द्वारा जो शराब प्रयोग की जाती थी वह विशेषकर पुर्तगाल और फारस से मंगाई जाती थी। साधारण वर्ग ताड़ी, नीरा, महुआ, खेरा, वघवार और जागरा से बनी शराब का सेवन करता था। शराब के अलावा अफीम, भांग संखिया आदि का भी प्रयोग मादक द्रव्यों के रूप में किया जाता था। कभी–कभी पान–चाय और कहवा को भी इसी श्रेणीं में रखा जाता था। सुल्तान, अमीर, बादशाह, मलिक सरदार, सूबेदार, राजे, सामन्त, मनसबदार तथा अन्य सम्पन्न वर्ग के लोग काफी सुरुचिपूर्ण भोजन किया करते थे। उनके भोजन में अन्न, मांस–मछली, घी, दूध, दही के अलावा देश–विदेश से मगाँये गये मेवे, फल मिठाइयों आदि की प्रधानता रहती थी। रोगनी नामक चपाती, पूरी, लुची, विरंज, पुलाव, कीमा काबुली, दुर्ज, दावरयान आदि आटा तथा चावल से निर्मित महंगें एंव स्वादिष्ट पदार्थ थे। मीठे पदार्थों में हलुआ तथा मिष्ठान अधिक प्रसिद्ध थे। दिल्ली, लाहौर, आगरा जैसे बड़े शहरों में मिठाइयों की अनगिनत दुकाने थी। बलवन के समय में भोजन के अर्न्तगत मनपसन्द भोज्य पदार्थों से पूर्व कम से कम पचास थालियाँ परोसी जाती थी।

इसके अलावा पेय पदार्थों में विभिन्न फलों के रस, गुलाबजल तथा नीबू के शर्बत आदि का प्रचलन भी था। पेय पदार्थों में बर्फ का प्रयोग अमीरों तक ही सीमित था। उन दिनों चाय व कहवा का प्रयोग नशे की तरह कोरोमंडल तटीय क्षेत्रों में किया जाता था।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. मध्यकालीन भारत में हिन्दू–मुस्लिम सद्भाव–डॉ. परमानन्द लाल श्रीवास्तव पृष्ठ संख्या–130
2. आइने अकबरी–पृष्ठ संख्या– 64 तुजुके जहाँगीरी, अनु. रोजर्स भाग–1 पृष्ठ संख्या–185
3. मुन्तख उत्तबारीख–भाग–2 पृष्ठ संख्या–313
4. हिन्दुस्तान के निवाासियों का जीवन और उनकी परिस्थितियाँ – डॉ. के. एम. अशरफ पृ. संख्या–227
5. मध्यकालीन भारत में हिन्दू–मुस्लिम सद्भाव – डॉ. परमानन्द लाल श्रीवास्तव पृष्ठ संख्या–1318
6. भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास – चौपड़ा पुरी एवं दास पृ. संख्या–227
7. वही पृष्ठ 227
8. इस्लामी भारत का सामाजिक इतिहास – डॉ. यासीन मोहम्मद – पृष्ठ संख्या–33
9. मध्यकालीन समाज, धर्म, कला एवं वास्तुकला – डॉ. हरफूल सिंह आर्य – पृष्ठ संख्या–29।

◈◈

RNI : UPMUL00620/24/1/2014-TC
ISSN : 2394-4366
Received: 04 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

सामाजिक घटनाओं की प्रकृति और वस्तुनिष्ठता

– डॉ. मणींद्र कुमार तिवारी
एसोसिएट प्रोफेसर –
समाज शास्त्र विभाग,
डी. ए. वी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
लखनऊ–226001 (उत्तर प्रदेश)

ई–मेल :
manindraktiwari2009@gmail.com

सारांश

तटस्थ व पक्षपात रहित अवलोकन के माध्यम से तथ्यों को संकलन व संकलित तथ्यों का विश्लेषण ही वस्तुनिष्ठता है।एक अन्वेषक या अध्ययन कर्ता जब अपने धर्म, जाति, प्रजाति, विश्वास, क्षेत्र एवं निजी विचारों से पृथक रह कर कोई अध्ययन करता है। तो ऐसे अध्ययन को हम 'वस्तुनिष्ठ अध्ययन' कहते हैं। स्पष्ट है वस्तुनिष्ठ अध्ययन का परिणाम प्रत्येक व्यक्ति द्वारा किये गये अध्ययनों का एक समान आना चाहिए अन्य शब्दों में उनमें व्यक्तिगत प्रभाव देखने को नहीं मिलना चाहिए। प्रो0 ग्रीन के अनुसार, ''वस्तुनिष्ठता निष्पक्ष रूप से किसी तथ्य का परीक्षण करने की इच्छा और योग्यता है।'' सामाजिक घटनाओं की प्रकृति विचित्र है, इनके स्वरूप व व्यवहार में प्राकृतिक घटनाओं जैसी विशेषता नहीं पायी जाती है। आज भी मनुष्य सामाजिक घटनाओं के रहस्य को समझने में पूर्णरूपेण सफल नहीं हैं और अपने समाज व स्वयं की भावी गतिविधि के बारे में भविष्यवाणी करने में कुछ सन्देह महसूस करता है। इसका कारण सामाजिक सम्बन्धों व घटनाओं की जटिलता, विविधता, परिवर्तनशीलता, व्यक्तिनिष्ठता, अमूर्तता और गुणात्मकता के तत्व हैं।

मुख्य शब्द– सामाजिक, शोध, घटनायें, अध्ययन, वस्तुनष्ठिता।

समस्या का चयन एवं अध्ययन के उद्देश्य –

कोई भी लेखन अथवा शोध कार्य किसी जिज्ञासा, समस्या अथवा प्रेरणा के वशीभूत होकर ही किया जाता है सामाजिक घटनाओं का विवेचन करना अत्यन्त जटिल कार्य है। कोई भी सामाजिक घटना के कार्य कारण सम्बन्धों के बारे में सटीक भविष्यवाणी नहीं की जा सकती। शोध में वस्तुनिष्ठता कैसे प्राप्त की जाए यह एक गंभीर प्रश्न है। इन्ही तत्संबंधी तथ्यों के विवेचन हेतु मैने इस शोध पत्र के लेखन हेतु रुचि ली इस शोधपत्र में सामाजिक घटनाओं की प्रकृति के बारे में विवेचन करते हुए वस्तुनिष्ठता कैसे प्राप्त की जाए और हमारा सामाजिक अध्ययन कैसे पूर्ण वस्तुनिष्ठ हो इस पर विचार किया गया है। इन्हीं सब तथ्यों की सैद्धांतिक और व्यवहारिक महत्ता को देखते हुए शोधकर्ता ने सामाजिक घटनाओं की प्रकृति और वस्तुनिष्ठताविषय पर शोध पत्र लिखने की आवश्यकता का अनुभव किया। जिससे इस दिशा में कुछ ज्ञान प्राप्त करते हुये वस्तुनिष्ठता प्राप्त करने की दिशा में कुछ अधिक ज्ञान प्राप्त हो सके।

अध्ययन पद्धति –

यह शोध आलेख लेखक के शोध कार्य पर आधारित एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण सामाजिक घटनाओं की प्रकृति और वस्तुनिष्ठता से सम्बन्धित एक सामाजिक शोध आलेख है। इस शोधपत्र में सामाजिक घटनाओं की प्रकृति और वस्तुनिष्ठता के कारण और परिणामों

को विवेचित करते हुए सामाजिक घटनाओं की प्रकृति का अध्ययन किया गया है। ''सामाजिक शोध एक वैज्ञानिक योजना है जिसका उद्देश्य तार्किक एवं क्रमबद्ध पद्धतियों के द्वारा नवीन तथ्यो की खोज या पुराने तथ्यो की पुनः परीक्षा एवं उनमें पाये जाने अनुक्रमों अन्तः सम्बन्धों के कारणों सहित व्यवस्थाओं तथा उनको संचालित करने वाले स्वाभाविक नियमों का विश्लेषण करना होता है।'' यह स्पष्ट है कि सामाजिक शोध में किसी सामाजिक समस्या विषय या घटनाओं का वैज्ञानिक पद्धति द्वारा अध्ययन होता है। अध्ययन पद्धति को ही अवैयत्तिक और बुद्धिहीन व्यवस्था नहीं है यह एक मानवीय प्रयास है और जब तक इसे सोच–समझकर विकसित नहीं किया जायेगा इससे व्यवस्थित सिद्धान्त नहीं निकल सकते। अन्य पुर्ननिर्मित विज्ञानों की भाँति ही पद्धति शास्त्र को भी इस आधार पर परखना होगा कि अमुक पद्धति व्यवहारिक विज्ञान को आगे बढ़ाने में कितनी लाभकारी सिद्ध होगी।

सामाजिक शोध और वस्तुनिष्ठता –

सामाजिक धटनाओं की प्रकृति से यह आशय नहीं लगा चाहिए कि इनका वैज्ञानिक अध्ययन असम्भव है। सामाजिक घटताओं की प्रकृति समाजशास्त्र के अध्ययन को कठिन जरूर बना देती है परन्तु असम्भव नहीं, सामाजिक घटनाओं का प्राकृतिक घटनाओं की तरह प्रयोगशाला में अध्ययन तो नहीं किया जा सकता है परन्तु सामाजिक विज्ञानो में अनेक यन्त्रों व प्रविधियों का आविष्कार हुआ है जो सामाजिक सम्बन्धों या घटनाओं को समझने मे सहायक हैं। इन प्रविधियों में निरीक्षण, साक्षात्कार, सर्वेक्षण व अनुसूची प्रमुख हैं।

सामाजिक घटनाएं अत्यधिक जटिल है सामान्य में कार्य कारण सम्बन्धों का अभाव पाया जाता है। क्या समाज में घटिन होन वाली प्रत्येक घटना को सामाजिक घटना की संज्ञा दी जा सकती है? समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से सामाजिक घटना की परिधि में मात्र उन्हीं घटनाओं को सम्मिलित किया जाना चाहिए जो सामाजिक सम्बन्धों को प्रभावित करती हों, सामाजिक सम्बन्धों के परिणाम हों या सामाजिक सम्बन्धों के अध्ययन व विश्लेषण में सहायक हों। अध्ययन की सुविधानुसार घटनाओं को प्राकृतिक घटना तथा सामाजिक घटना दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। प्राकृतिक घटनाओं में नियमितता, निश्चिन्तता, मूर्तता, समानता, वस्तुनिष्ठता आदि के गुण पाये जाते हैं। परिणामतः प्राकृतिक घटनाओं का वैज्ञानिक अध्ययन यथार्थ तथा विश्वसनीय होता है। इसके विपरीत सामाजिक घटनाओं की प्रकृति विचित्र है, इनके स्वरूप व व्यवहार में प्राकृतिक घटनाओं जैसी विशेषता नहीं पायी जाती है। आज भी मनुष्य सामाजिक घटनाओं के रहस्य को समझने में पूर्णरूपेण सफल नहीं हैं और अपने समाज व स्वयं की भावी गतिविधि के बारे में भविष्यवाणी करने में कुछ सन्देह महसूस करता है। इसका कारण सामाजिक सम्बन्धों व घटनाओं की जटिलता, विविधता, परिवर्तनशीलता, व्यक्तिनिष्ठता, अमूर्तता और गुणात्मकता के तत्व हैं।

सामाजिक घटनाओं की कुछ आधारभूत विशेषतायें हैं। जिनके आधार पर ये प्राकृतिक घटनाओं से पूर्णतया भित्र होती हैं। समाजशास्त्रीय अध्ययन में सामाजिक घटनाओं की प्रकृति को जान लेना आवश्यक होती है। सामाजिक घटनाओं को मानवीय घटनाओं तथा प्राकृतिक घटनाओं को भौतिक घटनाओं की संज्ञा दी जा सकती है।सामाजिक धटनाओं की कुछ प्रमुख विशेषता अग्रलिखित हैं –

सामाजिक सम्बन्ध का प्रत्यक्ष निरीक्षण सम्भव नहीं है। इसका अनुमान इन परिणामों के आधार पर ही लगाया जा सकता है। कहने का अभिप्राय यह है कि सामाजिक सम्बन्ध अमूर्त होते है और भौतिक घटनाओं की भॉति इनका अवलोकन नहीं किया जा सकता है। इसी प्रकार मानवीय भावनायें, विचार, आदर्श,मूल प्रथा, परम्परायें, पक्षपात, प्रेम, स्नेह सभी अमूर्त घटनायें हैं। इस अमूर्तता के परिणामस्वरूप सामाजिक घटनाओं का कोई निश्चित वस्तुनिष्ठ स्वरूप नहीं होता है और लोग सामाजिक घटनाओं में व्यक्तिनिष्ठता का गुण भी पाया जाता है।

सामाजिक घटनाओं को जटिलता के सम्बन्ध में लुन्डबर्ग लिखते हैं, सम्भवतः मानव समूह व्यवहार सम्बन्धी एक वास्तविक विज्ञान के विकास में सर्वाधिक उल्लेखनीय बाधा इसकी विषय सामग्री की जटिलता से हमारा अभिप्राय है कि किसी भी घटना के घटित होने में एक से ज्यादा कारक एक ही समय सम्मिलित रूप से कार्य करते है, किस कारक का कितना प्रभाव है, इसके बारे में कुछ भी निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है। गुणवत्ता का तत्व भी जटिलता को बढ़ा देता है। प्रायः सभी सामाजिक घटनाओं में जटिलता की प्रकृति पायी जाती हैं।

भौतिक घटनायें परिमाणात्मक होती है जबकि सामाजिक घटनायें गुणात्मक अर्थात् सामाजिक घटनाओं को प्राकृतिक घटनाओं की तरह नापा व तौला नहीं जा सकता है। इनके लिए प्रायः कम या ज्यादा विश्लेषण का प्रयोग किया जाता है। हम संघर्ष, सहयोग, प्रतियोगिता, प्यार, सांस्कृतिकरण, पक्षपात आदि को परिमाणात्मक रूप

से माप नहीं सकते है। समाज की मूलभूत अवधारणायें यथा मूल्य, प्रथा, परम्परा विचार व मनोभाव को परिमाणात्यक रूप देना कठिन होता है। घटनाओं की गुणात्मकता वैज्ञानिक अध्ययन के पथ पर बाधा उत्पन्न करता है। उदाहरणार्थ– छात्र तथा अध्यापक के मध्य पाया जाने वाला अनुराग व सम्मान, दोस्तों के बीच पायी जाने वाली घनिष्टता व आन्तरिकता आदि को परिणामों को संख्या के रूप में व्यक्त करना एक दुरूह कार्य है। इस गुणात्मकता को प्रायः प्रत्येक व्यक्ति अपने निजी दृष्टिकोण से देखता है।

सामाजिक घटनायें गतिशील होती हैं अर्थात परिस्थितियों के साथ–साथ इनकी प्रकृति में भी परिवर्तन आ जाना स्वाभाविक होता है। मानव व्यवहार में तथा सामाजिक परिस्थितियों में अत्यधिक परिवर्तन होता रहता है। जो घटना कल तक अच्छी मानी जाती थी, आज वही घटना समाज के लिए हानिकारक सिद्ध हो सकती है यथा मध्यकालीन भारतीय समाज में बालविवाह सामाजोपयोगी माना जाता था आज इसे समाज के लिए अभिशाप माना जा रहा है। इसके अतिरिक्त एक ही समय विशेष में विभिन्न समाजों में घटनाओं की प्रकृति में विभिन्नता पायी जाती है। जो व्यवहार भारतीय समाज में असामान्य माना जाता है, हो सकता हैं कि वही व्यवहार पाश्चात्य समाजों में सामान्य व्यवहार की श्रेणी में हो।यद्यपि यह परिवर्तनशीलता प्राकृतिक घटनाओं में भी पायी जाती है। परन्तु सामाजिक घटनाओं में परिवर्तनशीलता की गति तीव्र है। इस परिवर्तनशीलता के फलस्वरूप इनका वैज्ञानिक अध्ययन कठिन हो जाता है।

सार्वभौमिक घटना से अभिप्राय उस घटना से है जो प्रत्येक युग या काल में किसी न किसी रूप में पायी जाती है। उदाहरणार्थ– विवाह की संस्था प्रत्येक समाज–औद्योगिक, कृषक, विकसित, अविकसित, ग्रामीण, नगरीय, जन जातीय समाजों तथा प्रत्येक समय–प्राचीन काल मध्यकाल तथा आधुनिक काल–में पाया जाता है। लेकिन प्रत्येक सामाजिक घटना में उपरोक्त विशेषता नहीं पायी जाती है।एक डकैत यदि धनिक वर्ग के लिए निर्दयी है तो वही डकैत गरीब वर्ग के लिए दयावान भी हो सकता है। यही कारण है कि समाजशास्त्रीय निष्कर्षों को आँख मूंदकर प्रत्येक समाज पर नहीं लागू किया जा सकता है। स्पष्ट है कि सामाजिक नियम प्राकृतिक नियमों की तरह सार्वभौमिक नहीं होते हैं।

सामाजिक घटनाओं की एक अन्य विशेषता वह है कि इनमें पर्याप्त भित्रता पायी जाती है। भाई–बहन के बीच प्यार की मात्रा प्रत्येक भाई–बहन में एक समान नहीं पायी जाती है। वैसे तो समाज में भिन्नता तथा समानता दोनों ही पायी जाती हैं। परन्तु प्राकृतिक घटनाओं की तुलना में सामाजिक घटनायें पर्याप्त रूप से भित्र होती हैं। यह समानता तथा विभित्रता समाज के निर्माण तथा क्रियाशीलता के लिए प्रकार्यात्मक हैं परन्तु वैज्ञानिक अध्ययन को असम्भव तो नहीं हाँ कठिन जरूर बनाते हैं।

विज्ञान की एक आधारभूत विशेषता यह है कि इसमें भविष्यवाणी करने की क्षमता पायी जाती है। वैज्ञानिक नियम सार्वभौमिक नियम होने के कारण इस कार्य को आसानी से सम्पादित कर लेते हैं। निःसन्देह समाजशास्त्र एक विज्ञान है परन्तु इसमें भविष्यवाणी करने की क्षमता उतनी नहीं है जितनी कि एक विशुद्ध विज्ञान से अपेक्षा की जाती है। सामाजिक घटनाओं की जटिलता, अमूर्तता, प्रतीकता, गुणात्मकता, असमरूपता और परिवर्तनशीलता आदि विशेषताएँ हैं जो कि सामाजिक घटनाओं के बारे में भविष्यवाणी करने से रोकती है या विरोध पैदा करती हैं। श्री जान ए. मैज ने एक बात लिखी है जिस पर काम्ट व सेन्सर से लेकर वर्तमान समय के वैज्ञानिक सभी सहमत है, वह यह है कि भौतिक व प्राकृतिक घटनाओं को तुलना में मानवीय व्यवहार के सम्बन्ध में भविष्यवाणी करना कहीं अधिक कठिन है। मनुष्य में वैयक्तिक भिन्नताएँ पायी जाती हैं परिणामतः मानव जाति के बारे में सामान्य भविष्यवाणी करना कठिन हो जाता है।

किसी भी अध्ययन व विश्लेषण के समय अध्ययनकर्ता द्वारा अपनी स्वयं की भावना, विचार, उचित–अनुचित के आदर्श, विश्वास, आशा और आकांक्षाओं के रंग में न रंगकर अध्ययन विषय को ''जैसा वह है। उसी रूप में देखना व विवेचना करना ही वैषयिकता या वस्तुनिष्ठता है। अन्य शब्दों में तटस्थ व पक्षपात रहित अवलोकन के माध्यम से तथ्यों को संकलन व संकलित तथ्यों का विश्लेषण ही वस्तुनिष्ठता है। एक अन्वेषक या अध्ययन कर्ता जब अपने धर्म, जाति, प्रजाति, विश्वास, क्षेत्र एवं निजी विचारों से पृथक रह कर कोई अध्ययन करता है। तो ऐसे अध्ययन को हम 'वस्तुनिष्ठ अध्ययन' कहते हैं। स्पष्ट है वस्तुनिष्ठ अध्ययन का परिणाम प्रत्येक व्यक्ति द्वारा किये गये अध्ययनों का एक समान आना चाहिए अन्य शब्दों में उनमें व्यक्तिगत प्रभाव देखने को नहीं मिलना चाहिए। प्रो. ग्रीन के अनुसार, ''वस्तुनिष्ठता निष्पक्ष रूप से किसी तथ्य का परीक्षण करने की इच्छा और योग्यता है। कावेज जे. कार के शब्दों में– वस्तुनिष्ठता का अर्थ यह है कि विभित्र प्रकार की घटनाओं से युक्त विश्व किसी व्यक्ति के विश्वासों,

आशाओं अथवा भय से स्वंतत्र रहने वाली एक वास्तविकता है, जिसके प्रत्येक पक्ष को हम किसी अन्तदृष्टि अथवा कल्पना से नहीं बल्कि वास्तविक अवलोकन से ही समझ सकते हैं। फेयर चाइल्ड वैषयिकता का अभिप्राय एक ऐसी योग्यता से बताते है जिसके द्वारा अनुसंधानकर्ता स्वयं को उन दशाओं से पृथक रख सके जिनका कि वह स्वयं एक अंग है तथा किसी तरह के लगाव अथवा भावना के स्थान पर पक्षपात रहित और पूर्वाग्रहों से मुक्त तकों के आधार पर विभित्र तथ्यों को उनके स्वाभाविक रूप में देख सके।

किसी भी वैज्ञानिक अध्ययन की आधारशिला उसकी वस्तुनिष्ठता से प्रारम्भ मानी जा सकती है। यदि अध्ययन में वस्तुनिष्ठता का अभाव है तो अध्ययन वैज्ञानिक अध्ययन न होकर अटकलपच्चू की श्रेणी में आ जाता है। घटनाओं की सत्यता को जानने के लिए अध्ययन कार्य में वैषयिकता का होना परमावश्यक है। सामाजिक घटनाओं की प्रकृति को देखते हुए इस वैषयिकता का महत्व और भी बढ़ जाता है। इस सम्बन्ध में निम्न विचार उल्लेखनीय हैं।

वैषयिकता के माध्यम से ही समाजशास्त्र विशुद्ध विज्ञानों की श्रेणी में बना रह सकता है। प्रायः वैषयिकता के अभाव के नाम पर ही समाजशास्त्र को विज्ञान का दर्जा प्रदान करने में असमर्थता व्यक्त की जाती है। सामाजशास्त्र क्या कोई भी शास्त्र वैषयिकता के अभाव में विज्ञान होने का दावा नहीं कर सकता है। स्पष्ट है कि समाजशास्त्र के वैज्ञानिक स्तर को बनाये रखते हेतु समाजशास्त्र की अध्ययन प्रणाली में वैषयिकता का होना आवश्यक हैं।

सामाजिक अनुसंधान में वैषयिकता के द्वारा ही यथार्य निष्कर्षो तक पहुँचा जा सकता है। प्रायः सामाजिक अनुसंधान में अनुसंधानकर्ता स्वयः अध्ययन विषय का अंग होता है और एक अंग होने के कारण उसका अध्ययन उसके व्यक्तिगत विचारों द्वारा बिना प्रभावित हुए नहीं रह पाते हैं। ऐसी कठिनाइयाँ प्राकृतिक अनुसंधान में नहीं पायी जाती है। स्पष्ट है समाजशास्त्रीय अध्ययन में निष्पक्ष व यथार्थ ज्ञान व निष्कर्ष प्राप्त करने के लिए समाजशास्त्रीय अध्ययन में वस्तुनिष्ठता का होना अपरिहार्य है।

यह पूर्णतया निर्विवाद तथ्य है कि सामाजिक घटनाओं के अध्ययन में वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग वस्तुनिष्ठता के उद्देश्य से किया जाता है। वैज्ञानिक पद्धति साधन है न कि साध्य इसके सफल प्रयोग हेतु स्वयं इस पद्धति के प्रयोगकर्ता को निष्पक्ष व वैषयिक होना चाहिए। स्पष्ट है कि वस्तुनिष्ठता के लिए वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग किया जाता है और वैज्ञानिक पद्धति के कुशल अनुप्रयोग हेतु वस्तुनिष्ठता आवश्यक है अर्थात् दोनों ही एक सिक्के के दो पहलू है।

प्रतिनिधात्मक तथ्यों से हमारा अभिप्राय उन तथ्यों से है जो उस जैसे अनेक इकाइयों के गुण को प्रदर्शि्ति करते हों अर्थात् उनमें सामूहिकता का गुण विद्यमान हो। समाजशास्त्रीय अध्ययन द्वारा प्राप्त निष्कर्षो में प्रतिनिधित्व का गुण लाने के लिए अध्ययनकर्ता को पूणरूपेण वैषयिक या वस्तुनिष्ठ होना चाहिए, प्रतिनिधित्व पूर्ण निष्कर्ष ही समाजशास्त्र के ज्ञान क्षितिज को बढ़ा सकता है।

पूर्ण रूप से वैज्ञानिक निष्कर्ष वही है जिसको सत्यापित और पुनः सत्यापित किया जा सकता है। यह पुर्नसत्यापन वस्तुनिष्ठता की उपस्थिति में ही संभव हो सकता है, यदि अध्ययन मे व्यक्तिगत विचारों का समावेश होता है तो प्रत्येक व्यक्ति द्वारा प्राप्त निष्कर्ष पर्याप्त भिन्न होंगे और उनका सत्यापन व प्रमाणीकरण स्वप्न मात्र ही होगा। स्पष्ट है कि सामाजिक अनुसंधान के परिणामों के सत्यापन व पुर्नसत्यापन हेतु वस्तुनिष्ठता अपरिहार्य है।

कहा जाता है कि मनुष्य अपने भूतकाल को आँखों से निरीक्षण करता है। स्पष्ट है कि लगभग प्रत्येक नवीन अनुसांधन हेतु वर्तमान तथा प्राचीन निष्कर्षो का विवेचन सहायक होता है, यदि ये अनुसंधान व निष्कर्ष वैषयिक होते है तो भावी व नवीन अनुसंधान की संभवनीए बढ़ जाती है। इस प्रकार वैषयिक अध्ययन नये अनुसंधानों की संभवनाओं को विकसित करता है। इस प्रकार जब हम वस्तुनिष्ठता की प्राप्ति के उद्देश्य से तथ्यों या घटनाओं की वास्तविक्ताओं को ढूँढने या जानने का प्रयत्न करते हैं तो उस घटना या तथ्य के अनेक रहस्यमय या अस्पष्ट पक्ष स्पष्ट हो जाते हैं। परिणामतः इन पक्षों से सम्बन्धित अनेक धारणाएँ न केवल दूर हो जाती हैं। बल्कि अनेक नई संभावनाओं के साथ प्रकट रहस्यों से रहस्य उद्घाटन हो जाता है।

सामाजिक घटनाओं की प्रकृतिक घटनाओं से पूर्णतया मित्र होती है और इनके वास्तविक अध्ययन हेतु वैषयिकता आवश्यक है। सामाजिक घटनाओं के बारे में विभित्र व्यक्तियों के भिन्न–भिन्न विचार हो सकते हैं। वैयक्तिक भित्रताओं के कारण सामाजिक धटनाओं का सामान्य व वास्तविक ज्ञान मुश्किल सा प्रतीत होता है इसके विपरीत वस्तुनिष्ठता के साथ अध्ययन करने पर ही सामाजिक धटनाओं का वास्तविक अध्ययन किया जा सकता है, क्योंकि ऐसी परिस्थिति मे वैयक्तिक भिन्नता का

कोई स्थान नहीं होगा।

उपरोक्त वर्णन से यह आशय नहीं है कि सामाजिक घटनाओं में वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग नहीं किया जा सकता है या इनका अध्ययन करने वाला शास्त्र समाजशास्त्र एक विज्ञान नहीं है। वास्तविकता तो यह है कि समाजशास्त्र भी अन्य विज्ञानों की भाँति एक विज्ञान है और वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग भी उसी कुशलता के साथ करता है। मानवीय व्यवहार का प्रयोगशाला में तो अध्ययन नहीं किया जा सकता है परन्तु प्रयोगशाला मात्र विज्ञान का प्रमाण नहीं है। खगोलशास्त्र तथा भूगोल के अधिकाँश नियम प्रयोगशाला से बाहर प्रतिपादित किये गये हैं। मैकाइवर व पेज ने बताया है कि समाजशास्त्र के लिए तो समाज ही प्रयोगशाला है। इसके अतिरिक्त सामाजिक धटनाओं की प्रकृति को दृष्टिगत रखते हुए समाजशास्त्र ने अनुसूची, साक्षात्कार, निरीक्षण मनोवृति पैमाना आदि यन्त्रों का विकास किया है। लुण्डबर्ग ने भी समाजशास्त्रीय प्रयोगशाला का वर्णन किया है। कहने का तात्पर्य है कि सामाजिक धटनाओं का वैज्ञानिक अध्ययन किया जा सकता है और किया जा रहा है। हाँ यह पूर्ण सत्य है कि समाजशास्त्र जैसे सामाजिक विज्ञानों के निष्कर्ष उतने यथार्थ नहीं हो सकते जितना कि भौतिकी तथा रसायनशास्त्र जैसे प्राकृतिक विज्ञानों के निष्कर्ष।

वैज्ञानिक अध्ययन से हमारा अभिप्राय प्रत्यक्षवादी दृष्टिकोण से है अर्थात् समाजशास्त्र के विद्यार्थी के रूप में हम केवल उन्हीं तथ्यों घटनाओं पर विश्वास करते है। जिनको वास्तविक रूप से देखा व समझा जा सके। समाजशास्त्र के विषय वस्तु की जटिलता को देखते हुए वैज्ञानिक पद्धति का सहारा लेना अपरिहार्य हो जाता है। इसके साथ–साथ मानव कल्याण तथा मानव सभ्यता का विकास दर्शन तथा धर्म से होना असम्भत सा लगता है। विज्ञान के रास्ते से ही मानव कल्याण सम्भव है। समाज के वास्तविक अध्ययन तथा विश्लेषण के लिए इसका वैज्ञानिक अध्ययन आवश्यक है और इस वैज्ञानिक अध्ययन की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें वस्तुनिष्ठता का गुण पाया जाता है। निःसन्देह वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग प्राकृतिक घटनाओं के अध्ययन में ज्यादा प्रासंगिक व फलदायक हैं, फिर भी सामाजिक घटनाओं के अध्ययन में वैज्ञानिक पद्धति से प्राप्त फल कम आशाजनक नहीं है। अन्य विज्ञानों को भाँति समाजशास्त्र भी एक विज्ञान है अतः समाजशास्त्रीय अध्ययन में वैज्ञानिकता की भावना का पाया जाना स्वाभाविक है। वैज्ञानिक पद्धति से प्राप्त समाजशास्त्रीय निष्कर्ष ज्यादा यथार्थ, विश्वसनीय, प्रामाणिक तथा समाजोपयोगी होते है। अंधविश्वास, पक्षपात, संकीर्ण विचार व अनुमान व अटकलपच्चू का युग समाप्त हो रहा है। संक्षेप में समाजशास्त्र अपने अध्ययन में वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग करके सत्य की खोज करता है। सामाजिक घटनाओं की विविधता के सम्बन्ध में या वस्तुनिष्ठता की समस्या के बारे में लुण्डवर्ग तीन कारणों का उल्लेख करता है– (क) किसी भी धटना को प्रत्यक्ष करने की शक्ति बहुत–कुछ प्रशिक्षण तथा अन्य शारीरिक व मानसिक अवस्थाओं पर निर्भर करती है और ये सभी प्रत्येक व्यक्ति में भिन्न–भिन्न होती हैं। (ख) किसी भी घटना के प्रति हमारा प्रत्युत्तर भौतिक व पर्यावरण सम्बन्धी दशाओं द्वारा प्रभावित होता है। (ग) किसी धटना विशेष को हम किस रूप में ग्रहण करेंगे और किस प्रकार उसका अनुसरण करेंगे यह हमार पिछले अनुभवों पर निर्भर करता है। कहा जाता है कि मनुष्य अपने भूतकाल की आँखों से निरीक्षण करता है।

निष्कर्ष –

स्पष्ट है कि सामाजिक शोध में सामाजिक घटनाओं का वैषयिक व वैज्ञानिक अध्ययन अत्यन्त उपयोगी है और सामाजिक अनुसंधानों में अध्ययन व निष्कर्ष की विश्वसनीयता बढ़ाने हेतु वैषयिकता की आवश्यकता होती हैं। वैषयिकता वैज्ञानिक भावना, वस्तुनिष्ठ, निष्पक्ष तर्कयुक्त होती है। इसमें भावना व संवेग का कोई स्थान नहीं होता एक सफल अनुसंधानकर्ता को न्यायाधीश से भी ज्यादा निष्पक्ष होना चाहिये। वस्तुनिष्ठता वैज्ञानिक भावना का मूलमन्त्र है। वस्तुनिष्ठता के कारण ही वैज्ञानिक अध्ययन व निष्कर्ष विश्वसनीय व प्रामाणिक होते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. कार्ल पिर्यसन, द ग्रामर ऑफ साइंस, लंदन : ए. एण्ड सी. ब्लैक, 1911।
2. जी. ए. लुन्ड बर्ग, सोशल रिसर्च, न्यूयार्क : लागमैन्स, ग्रीन एण्ड कम्पनी, 1951।
3. गुडे एवं हाट, मैथट्स इन सोशल रिसर्च, न्यूयार्क : मैक्ग्रो हिल बुक कम्पनी, 1952।
4. आर. एल. एकाफ, डिजाईन ऑफ सोशल रिसर्च, शिकागो : यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, 1955।
5. सेल्टिज व जहोदा, रिसर्च मैथड्स इन सोशल रिलेशनशिप, न्यूर्याक : होर्ल्ट पब्लिकेशन, 1959।
6. पी. वी. यंग, साइंटिफिक सोशल सर्वे एण्ड रिसर्च, बम्बई : एशिया पब्लिशिंग हाउस, 1960।
7. रामबाबू गुप्ता, सामाजिक सर्वेक्षण, कानपुर : सामाजिक विज्ञान प्रकाशन, 1974।

◈◈

RNI : UPMUL00620/24/1/2014-TC ISSN : 2394-4366

Received: 04 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

सामाजिक परिवर्तन और मलिन बस्तियाँ

– डॉ. श्वेता तिवारी
एसोसिएट प्रोफेसर –
समाज शास्त्र विभाग,
ए. पी. सेन मेमोरियल गर्ल्स (पी. जी.) कॉलेज, लखनऊ–226001
(उत्तर प्रदेश)

ई–मेल :
manindraktiwari2009@gmail.com

सारांश

निर्धनता की रेखा के नीचे जीवन व्यतीत करने वाले व्यक्ति सामान्यतः मलिन बस्तियों में निवास करते है। एक छोटी सी झोपड़ी, कच्चे मकान अथवा एक कोठरी में दस से पन्द्रह व्यक्ति तक रहते है; यहाँ जल के निकास का कोई प्रबंध नही रहता, कूड़े कचरे के ढेर लगते रहते है, पानी यहाँ सड़ता रहता है, शौचालय का कोई स्थान नहीं रहता, बैठने के लिए इनके पास कोई खुला स्थान नहीं रहता, तंग सकरी मलिन बस्तियों में जीवन कम और बीमारियां अधिक होती है, पीले मुरझाये चेहरे, पिचके गाल, उभरती हड्डियाँ, फटे–गंदे कपड़े यहाँ का सौन्दर्य है। इन्हें पता ही नहीं यह कब जवान होते है और कब बूढ़े हो जाते है तथा कब इन्हें गम्भीर बीमारियॉ हो जाती है। क्या इनका जिन्दा रहना और मरना समाज के लिए कोई अर्थ नहीं रखता। ''ये मलिन बस्तियां मानवता के पतन की पराकाष्ठा हैं।....'' मलिन बस्तियों में रहने वाले व्यक्तियों की यह दशा वास्तव में इनमें व्याप्त अशिक्षा के कारण ही है।''दूसरी ओर बढ़ते शहरीकरण के कारण मलिन बस्तियों का फैलाव होता जा रहा है। इनमें लोग कीड़े मकोड़ो की तरह जीवन जीने के लिए विवश है। इन बस्तियों में शत–प्रतिशत गरीब तबके के लोग रहते है। भूख, अशिक्षा और अस्वस्थता के वातावरण के कारण यहाँ के बच्चे बिगड़ जाते है। परिवार की मदद के लिए यह छोटा–मोटा काम करने लगते है। यहीं से ये नशे की चपेट में आते है। और फिर धीरे–धीरे चोरी तथा अन्य अपराधों की ओर बढ़ते जाते है।'' यह कैसा विरोधाभास है कि जहाँ अल्प संख्या में कुछ व्यक्ति विलासी सुख सुविधाओं का उपयोग करते है वहीं भारत की लगभग 25 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी की रेखा के नीचे जीवन–यापन कर रही है।

मुख्य शब्द – मलिन बस्तियाँ, सामाजिक परिवर्तन, आर्थिक स्थिति, सामाजिक बुराई इत्यादि।

समस्या का चयन एवं अध्ययन के उद्देश्य –

लेखन अथवा शोध कार्य किसी जिज्ञासा, समस्या अथवा प्रेरणा से वशीभूत होकर ही किया जाता है मलिन बस्तियों में रहने वाले व्यक्ति भी समाज के महत्वपूर्ण अंग है। पाश्चात्य देशों में जहाँ कहीं मलिन बस्तियाँ हैं, इनकी स्थिति सुधारने तथा यहाँ रहने वाले व्यक्तियों में शिक्षा का स्तर उच्च करने सम्बन्धी प्रयास तथा शोध कार्य बहुत तीव्र गति से हो रहा है। लेकिन भारत में ऐसा नहीं हो रहा है। भारत में न तो इस ओर पर्याप्त शोध कार्य ही हो रहा है। और न ही यहाँ रहने वाले व्यक्तियों की स्थिति सुधारने तथा शैक्षिक सम्भावनाओं को बढ़ाने के लिए पर्याप्त ध्यान ही दिया जा रहा है यह स्थिति अत्यन्त नकारात्मक है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में

मलिन बस्तियों व इनमें रहने वाले व्यक्यिों के ऊपर पर्याप्त ध्यान देना नितान्त आवश्यक है जिससे इनकी स्थिति में सुधारात्मक परिवर्तन सम्भव हो सके व इनमे शिक्षा का पर्याप्त प्रसार किया जा सके क्योंकि शिक्षा के द्वारा ही समाज का यह अंग अपनी समस्त क्षमताओं का पूर्ण विकास कर सकेगा।

इन्हीं सब तथ्यों की सैद्धान्तिक और व्यवहारिक महत्ता को देखते हुए शोधकर्ता ने मलिन बस्तियों पर सर्वेक्षण व अध्ययन कार्य किया। जिससे प्राप्त निष्कर्षों के उपरान्त मैनें समाजशास्त्र की विद्यार्थी होने के नाते शैक्षिक दृष्टिकोण से इस विषय पर शोधपत्र लिखने की आवश्यकता अनुभव की जिसके द्वारा इनकी शैक्षिक स्थिति में सुधारात्मक परिवर्तन करने की दिशा में कुछ प्रयास सम्भव हो सके। मेरा यह प्रयास इस दिशा में यदि थोड़ा भी सफल हो सका तो मैं इसे सार्थक समझूंगी।

अध्ययन पद्धति –

यह शोध आलेख, लेखक के शोध कार्य पर आधारित एक शिक्षाशास्त्रीय विश्लेषण, मलिन बस्तियों से सम्बन्धित एक शैक्षिक–सामाजिक शोध आलेख है। इस शोधपत्र में मलिन बस्तियों का परिचयात्मक ज्ञान प्राप्त करते हुए मलिन बस्तियों से सम्बन्धित जानकारी प्राप्त की गयी है। ''सामाजिक शोध एक वैज्ञानिक योजना है जिसका उद्देश्य तार्किक एवं क्रमबद्ध पद्धतियों के द्वारा नवीन तथ्यो की खोज या पुराने तथ्यो की पुनः परीक्षा एवं उनमें पाये जाने अनुक्रमों अन्तः सम्बन्धों कारणो सहित व्यवस्थाओं तथा उनको संचालित करने वाले स्वाभाविक नियमों का विश्लेषण करना होता है।'' यह स्पष्ट है कि सामाजिक शोध में किसी सामाजिक समस्या विषय या घटनाओं का वैज्ञानिक पद्धति द्वारा अध्ययन होता है। अध्ययन पद्धति को ही अवैयत्तिक और बुद्धिहीन व्यवस्था नहीं है यह एक मानवीय प्रयास है और जब तक इसे सोच–समझकर विकसित नहीं किया जायेगा इससे व्यवस्थित सिद्धान्त नहीं निकल सकते। अन्य पुर्ननिर्मित विज्ञानों की भांति ही पद्धति शास्त्र को भी इस आधार पर परखना होगा कि अमुक पद्धति व्यवहारिक विज्ञान को आगे बढ़ाने में कितनी लाभकारी सिद्ध होती है।

सामाजिक घटनाओं में अत्यधिक जटिलता, परिवर्तनशीलता, व्यक्तिनिष्ठता, अमूर्तता, गुणात्मकता एवं विविधता होती है। इनके वस्तुनिष्ठ अध्ययन एवं सत्य निष्कर्षों की प्राप्ति के लिए हमें वैज्ञानिक अध्ययन पद्धति की सहायता लेनी पड़ती है। ''व्यापक अर्थ में वैज्ञानिक पद्धति तथ्यो के व्यवस्थित अवलोकन, वर्गीकरण तथा व्याख्या से निर्मित होती है। कोई भी अध्ययन पद्धति जिसके द्वारा विज्ञान की रचना और विस्तार होता है, वैज्ञानिक पद्धति कहलाती है। सत्य निष्कर्षों की प्राप्ति के लिए हमें वैज्ञानिक पद्धति का सहारा अवश्य लेना पड़ेगा। प्रस्तुत शोधपत्र में भी इन्हीं तथ्यों को भी ध्यान में रखते हुए वैज्ञानिक अध्ययन पद्धति के द्वारा निष्कर्षों को प्राप्त किया गया है।

सामाजिक परिवर्तन और मलिन बस्तियाँ –

सामाजिक परिवर्तन के साथ–साथ समाज का सामाजिक जीवन जटिल होता जाता है। उन्नीसवीं तथा बीसवीं शताब्दी में विज्ञान, उद्योग और शिक्षा में अत्यधिक उन्नति हुई। चिकित्सा विज्ञान ने व्यक्ति को दीर्घायु बनाया है। 100 वर्षों में विश्व की जनसंख्या दुगुनी से अधिक हो गई, भारत में भी तीव्र गति से जनसंख्या में वृद्धि हो रही है। 1901 में जहाँ भारत की जनसंख्या 238396327 थी वहाँ 2001 की जनगणना के अनुसार हमारे देश की जनसंख्या 1027015247 हो गयी है अर्थात 1901 से 2001 तक 4.30 गुना जनसंख्या वृद्धि हो गयी है।[1] यह वृद्धि दर वर्तमान समय में 1.2 प्रति वर्ष की दर से हो रही है, जिससे अति जनसंख्या की समस्या उत्पन्न हो गई है।[2] ग्रामीण जनसंख्या में भी निरन्तर तीव्र गति से वृद्धि होती जा रही है, जिसके फलस्वरूप उनको भी रोटी, कपड़ा और मकान सम्बन्धी मूलभूत प्राथमिक आवश्यकताओं की समस्या का सामना करना पड़ रहा है। अत्यधिक निर्धनता के कारण ग्रामीण निवासी अधिक संख्या में रोजगार की तलाश में नगरों में आ रहे है। इससे नगरों में आवासीय समस्या उत्पन्न हुई है। दूसरी ओर बढ़ते शहरीकरण के कारण मलिन बस्तियों का फैलाव होता जा रहा है। इनमें लोग कीड़े मकोड़ों की तरह जीवन जीने के लिए विवश हैं। इन बस्तियों में शत–प्रतिशत गरीब तबके के लोग रहते है। भूख, अशिक्षा और अस्वस्थता के वातावरण के कारण यहाँ के बच्चे बिगड़ जाते है। परिवार की मदद के लिए यह छोटा–मोटा काम करने लगते है, यहीं से ये नशे की चपेट में आते है और फिर धीरे–धीरे चोरी तथा अन्य अपराधों की ओर बढ़ते जाते है।

औद्योगिक नगरों में जनसंख्या का दबाव अत्यधिक बढ़ गया है, मलिन बस्तियाँ औद्योगिक नगरों और महानगरों की ही उपज है। इन नगरों में व्यक्तियों को

छोटा बड़ा रोजगार मिल जाता है पर रहने को आवास नहीं मिलता अतः इन नगरों में निर्धन व्यक्तियों को मलिन बस्तियों में ही शरण लेनी पड़ती है। मलिन बस्तियों की समस्या 19वीं शताब्दी से विकराल रूप लेती जा रही है।[3]

मलिन बस्तियों का अभिप्रायः प्रत्येक प्रकार की जर्जर आवास व्यवस्था और गन्दगीयुक्त पर्यावरण तथा वातावरण से है एक घना बसा हुआ स्थान जहाँ कम से कम 300 व्यक्ति 60—70 परिवार में निवास करते हैं जहाँ पूर्णतः अस्वास्थकारी पर्यावरण और असंगठित सामाजिक संरचना पायी जाती है तथा जहाँ शौचालय एवं पीने के पानी की भी समुचित व्यवस्था नहीं होती वह स्थान सामान्य रूप से मलिन बस्ती के अन्तर्गत आता है।[4]

मलिन बस्तियों की सामान्य परिभाषा करना अत्यन्त कठिन है क्योंकि प्रत्येक देश की आर्थिक स्थिति के अनुरूप ही मलिन बस्तियाँ स्थापित होती है। मलिन बस्तियाँ, झोपड़ी, सराय, छोटी—छोटी कोठरियाँ, खपरैलों और बाँसों से बने हुए कच्चे मकान, टीन के शेड से निर्मित मकान, लकड़ी के छोटे छोटे केबिन आदि से स्थापित हो जाती है। एक स्थान पर अधिक संख्या में बने ऐसे मकान जो निर्धनता के कारण बनते है मलिन बस्ती का स्वरूप धारण कर लेते है। आवास की समस्या ने नयी मलिन बस्तियों के स्थापित होने में जहाँ सहायता की है वहीं असंख्य जर्जर, पुराने मकान जिन्हें छोड़कर व्यक्ति अच्छे मकानों मे चला गया है, इन जर्जर छोड़े हुए घरों में असंख्य निर्धन व्यक्ति रहने लगे हैं। इन्हीं क्षेत्रो ने मलिन बस्ती का रूप धारण कर लिया है। इस तरह नई मलिन बस्तियाँ स्थापित होती है और पुरानी बस्तियों के निर्धन व्यक्ति इसलिए इन्हें नहीं छोड़ते कि इससे सस्ता घर नगर में उन्हें कहीं उपलब्ध नहीं होता है। मलिन बस्तियों का अभिप्राय प्रत्येक प्रकार की जर्जर आवास व्यवस्था और गन्दगीयुक्त पर्यावरण तथा वातावरण से है।

विस्तृत अर्थ में मलिन बस्तियाँ निर्धन व्यक्ति के रहने के वे स्थान है जहाँ वे स्वयं झोपड़ियाँ, केबिन अथवा लकड़ी के छोटे—छोटे मकान बनाकर रहते है। ये मकान अपने भी होते हैं इसमें किरायेदार भी रहते हैं। इन बस्तियों में अनेक प्रकार की असुविधायें होती है। मलिन बस्तियाँ तथा अन्य मानवीय समूहों का अध्ययन सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, मानवशास्त्रीय तथा विधिक इत्यादि अनेक दृष्टिकोणों से किया गया है। समाजशास्त्रियों की मान्यता है कि — ''मलिन बस्तियाँ सामाजिक बुराइयों को उत्पन्न करने वाले क्षेत्र होते हैं।''[5] मानवशास्त्री मलिन बस्तियों को ''जीवन का एक उप संस्कृतीय भाग'' मानते हैं।[6]

मलिन बस्तियों की विस्त्रत दृष्टिकोण से व्याख्या करते हुए आस्कर लेविस ने इन्हें ''निर्धनता की संस्कृति''[7] के रूप में स्पष्ट किया है लेकिन पी.डी. वैब, आस्कर लेविस की इस बात का खण्डन करते हैं।[8] इसके अलावा अर्थशास्त्रीयों का यह भी विचार है कि जब पूँजीगत उत्पादन के फलस्वरूप औद्योगीकरण की प्रक्रिया को प्रोत्साहन मिलता है तब भी अनियन्त्रित नगरीकरण होता है[9] जिसके फलस्वरूप ही मलिन बस्तियों का विकास होता है।[10] संयुक्त राष्ट्रसंघ ने मलिन बस्तियों को परिभाषित करते हुए कहा, ''एक भवन या भवनों का समूह या क्षेत्र जिसमें निवास करने वालों की संख्या भीड़युक्त होती है, यहां का वातावरण दूषित होता है या स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है या जहां सुविधाओं, सुहावनेपन का आभाव पाया जाता है। इस प्रकार की दशाओं में किसी प्रकार की दशा में यहां रहने वाले व्यक्तियो व समूहो के लिए स्वास्थ्य, सुरक्षा व नैतिकता की दृष्टि से हानिकारक होती है।[11] मलिन बस्ती कहलाती है।''[12]

मलिन बस्ती के संदर्भ में यह स्पष्ट किया गया कि मलिन बस्ती एक संकीर्ण अव्यवस्थित बसी हुई साधारणतः उपेक्षित क्षेत्र है जिसकी सदस्य संख्या अत्यधिक है तथा यहां की संरचना भीड़ युक्त, अस्वस्थकारी व तिरस्कारपूर्ण होती है। ....सामान्यतः यहां सामाजिक सेवा तथा कल्याणकारी संस्था का अभाव पाया जाता है, जो कि इनमें रहने वाले व्यक्तियों और परिवारों के लिए अनेक सामाजिक समस्याओं हेतु उत्तरदायी होती है। यहां के व्यक्तियों का क्षीण स्वास्थ्य, अल्प आय, रहन सहन की निम्न दशाये, उनकी शारीरिक, मानसिक और सामाजिक दशाओं पर नकरात्मक प्रभाव डालती है जिससे जैविक और सामाजिक पर्यावरण प्रभावित होता है।[13]

दिल्ली में मलिन बस्ती शब्द का प्रयोग शहर के उन क्षेत्रो के लिए किया जाता है जो कि वहां रहने वाले निवासियों के लिए उपयुक्त नहीं है जहां का वातावरण अत्यन्त दूषित, भीड़—भाड़ युक्त तथा सुधार से परे होता है, यहां का वातावरण स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है, यहां स्वस्थ वायु का भी आभाव होता है तथा भरी हुयी कीचड़ युक्त नालियॉ एवं पीने के पानी की समस्या यहां

सामान्य है।[14]

निष्कर्ष –

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि मलिन बस्तियों के स्वरूप में विविधताएं होती है। प्रत्येक देश की मलिन बस्ती का अपना विशिष्ट स्वरूप होता है लेकिन सभी मलिन बस्तियों का पर्यावरण एवं रहने की दशाएं लगभग समान होती है। इसमें निवास करने वाले व्यक्ति निर्धन, बेरोजगार और कम आय वर्ग वाले व्यक्ति होते है जिनका न कोई मकान होता है और न ही उन्हे अपना मकान होने की आशा ही होती है। मलिन बस्तियां वे आवासीय अनाथालय है जहां जीवन की समस्त असुविधाओं के दर्शन एक साथ होते है। यहां के निवासी मनुष्यों की तरह नहीं, बल्कि पशुओं के समान रहते और जीते है। सामाजिक विकास एवं सामाजिक परिवर्तन के फलस्वरूप मलिन बस्तियों के स्वरूप में भी परिवर्तन दृष्टिगोचर हुआ है। वर्तमान में मलिन बस्तियाँ बढ़ी हैं और इनके स्वरूप में भी परिवर्तन आया है। आज इनका स्वरूप छोटी सी झोपड़ी, कच्चे मकान अथवा एक कोठरी के स्थान पर घनी पक्की बस्तियों अथवा कम स्थान वाले अपाल्टमेन्ट के रूप में भी दिखलाई दे रहा है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. भारत की जनगणना, 2001।
2. भारत की जनगणना, 2011।
3. रूड डब्लू. ट्रेटीन, सिटीज इन क्राइसेस : डिके और रिन्यूअल? (न्यूजर्सी : प्रिन्टिसहाल इन्क, 1970), पृष्ठ 24।
4. भारत की जनगणना, 2001।
5. एम. बी. क्लीनार्ड, स्लम एण्ड कम्यूनिटी डवलपमेन्ट (न्यूर्याक : द फ्री प्रेस, 1966), पृष्ठ 17।
6. ए. एल. क्रोबर, एन्थ्रोपोलोजी (न्यू दिल्ली : आक्सफोर्ड एण्ड आई. बी. एच. पब्लिशिग एण्ड कम्पनी, 1948), पृष्ठ 274–76।
7. आस्कर लेविस, द चिल्र्डेन आफ सेन्चेज (न्यूर्याक : रेण्डम हाउस, 1961), पेज xxiv–xxx।
8. पी. डी. वैब, सोशल लाइफ इन एन इण्डियन स्लम (दिल्ली : विकास पब्लिशिंग हाउस, 1975) पेज 9–10।
9. आस्कर लेविस, द कल्चर ऑफ पावर्टी (न्यूर्याक : बेसिक बुक्स, 1979), पेज 65।
10. ए. आर. देसाई एण्ड एस. डी. पिल्लई, स्लम एण्ड अर्बनाइजेशन, उद्धृत – डॉ. वी. मलिका पोथाना, द स्लम ऑफ विशाखापट्टनम, एन इण्टर – डिसप्लिनिरी स्टडी (बंगलौर : इन्स्टीट्यूट ऑफ सायक्लोजिकल रिसर्च, 1991), पेज 4।
11. डेविड हण्टर, द स्लम चेलेन्ज एण्ड रिस्पोन्स (न्यूर्याक : द फ्री प्रेस, 1964), पृष्ठ 32।
12. यूनाइटेड नेशन्स सेक्रिटेरिअट, अर्बनलैण्ड पोलीसीज, डाकूमेन्ट एस. टी / एस.सी.ए., 9 (न्यूर्याक : अप्रैल 1952), पेज 200।
13. इण्डियन कॉन्फ्रेन्स ऑफ सोशल वर्क, रिपोर्ट ऑफ द सेमिनार ऑफ स्लम क्लिएरेन्स, बम्बई, मई 1957, पेज 163।
14. आन्द्रे मेनेफी सिंह एण्ड अल्फ्रेड डीसूजा, द अर्बन पुअर – स्लम एण्ड पावमेन्ट डवेलर्स इन द मेजर सिटी ऑफ इण्डिया (मनोहर पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1980), पेज 5।

◈◈

विशेष

प्रकाशन शोधकर्त्ताओं के लिए शोध प्रक्रिया का अन्तिम और अत्यन्त महत्त्वपूर्ण चरण होता है। शोध समाज की एक मूल्यवान उपलब्धि है, जिसके लिए इसे समाज के बीच आना ही चाहिए ताकि समस्त मानवता इसका लाभ उठा सके। वर्तमान में बेलगाम होती महंगाई, कम्प्यटूर टाइपिंग, कागज, मुद्रण सामग्री एवं प्रिंटिंग की दरों में उत्तरोत्तर बढ़ोत्तरी शोधार्थियों केद्वारा प्रकाशित होने वाले शोध-पत्रों केअवसरों को सीमित एवं संकुचित करते हैं।

संगोष्ठियों में शोध प्रपत्र का वाचन शोधार्थियों एवं शोधविदों के लिए एक महत्त्वपूर्ण अवसर होता है। अपने गुणवत्तापरक शोध कार्य को इन संगोष्ठियों के माध्यम से जनमत के बीच लाने का माध्यम बनता है। ऐसे अवसरों का लाभ उठाना ही हम सभी के लिए हितकर है, हम सभी आयें और समाज में आगे बढ़कर अधिक से अधिक सहयोग देकर इसे सफल बनाने के कार्य में हाथ बंटायें।

- प्रबन्धक सम्पादक

RNI : UPMUL00620/24/1/2014-TC ISSN : 2394-4366

Received: 04 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

राजनैतिक व्यवस्था में सैनिक शक्ति की सुदृढ़ता की आवश्यकता

– डॉ. निरंकार प्रसाद तिवारी
एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष –
सैन्य अध्ययन विभाग,
डी. ए. वी. कालेज, कानपुर–208001
(उत्तर प्रदेश)

ई–मेल :
drnptiwari8@gmail.com

सारांश

आज अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बातें तो शान्ति स्थापना एवं निःशस्त्रीकरण की जाती हैं किन्तु कार्य सेनाओं की सुदृढ़ता के लिये किया जाता है। जो जितना आर्थिक रूप से सक्षम है उसी के अनुरूप तेजी से सेना के आधुनिकीकरण पर लगा हुआ है। उच्च तकनीकी युक्त, श्रेष्ठ कुशल सेनायें ही आज के वैश्विक व्यवस्था में राजनैतिक शक्ति का प्रतिबिम्ब मानी जाती हैं जिससे यह प्रतीत होता है कि ये सैन्य व्यवस्था अभी चिरकाल तक प्रासंगिक बनी रहने वाली है कम से कम राष्ट्रों की तैयारी देखकर यही लगता है। भारतीय सन्दर्भ में यदि अवलोकन किया जाये तो स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि सेना से अधिक अनुशासित, संगठन शायद ही कोई और हो। भारतीय सेना की छवि वैश्विक रूप से सकारात्मक एवं सर्वमान्य है और भारत की राजनैतिक शक्ति का पर्याय भी। यदि कोई राष्ट्र राजनैतिक रूप से शक्तिशाली बने रहना चाहता है तो उसे निरन्तर सेना की सुदृढ़ता पर निरन्तर ध्यान देने की आवश्यकता है। क्योंकि सेना द्वारा किये जाने वाले राष्ट्रीय हित के कार्य की दिशा एवं दशा निरन्तर बदलती जा रही है और सेना को भी अनेक मोर्चों पर जूझना पड़ रहा है। समस्त वैश्विक राज्य व्यवस्थाओं में सेना की अनिवार्यता एवं उपस्थिति स्पष्ट देखी जा सकती है। जो राज्य व्यवस्थायें आर्थिक रूप से कमजोर हैं वे भी सैन्य शक्ति की सुदृढ़ करने में लगी हैं क्योंकि सेना सुरक्षा एवं विकास रीढ़ बन चुकी है।

केन्द्रीकरण की प्रक्रिया में जिसके द्वारा एक संगठित जनसमाज की समस्त शक्तियाँ एक प्रभुतापूर्ण शासक संस्था में केन्द्रित हो जाती है। यह प्रक्रिया राष्ट्रीय संगठनों की एक प्रधान विशेषता रही है। सैनिक बल की अनिवार्यता शुरू–शुरू में अत्यन्त प्रत्यक्ष रूप में प्रभावशाली रही है तथा कमोवश आज अधिक प्रासंगिक है। यह अनिवार्यता वाह्य एवं आन्तरिक दोनों प्रकार की थी। वाह्य इस कारण कि राष्ट्र की बाहर के आक्रमण एवं विदेशी आधिपत्य से रक्षा की जा सके और आन्तरिक प्रयोजन यह था कि गृह कलह एवं दुर्व्यवस्था से बचा जा सके। यदि किसी राष्ट्र के निर्माण काल में उसके अवयवभूत अंगों को आपस में मिलाऐ रखने के लिए एक ही प्रशासक सत्ता होनी आवश्यक है तो उस केन्द्रीय सत्ता की पहली आवश्यकता एवं मांग यह होगी कि उसके (केन्द्रीय सत्ता) हाथ में उस सुघटित समुदाय को निर्बल अथवा नष्ट कर देने वाले घातक विरोध व प्रबल संघर्ष को रोकने के साधन होने चाहिए।

किसी भी केन्द्रीय संस्था को यह कार्य आंशिक रूप में नैतिक बल तथा मनोवैज्ञानिक प्रेरणा के द्वारा सम्पन्न करना चाहिए और अपने अवयवभूत अंगों की उनकी प्रत्यक्ष एवं पवित्र एकता का आदर करने के लिए विवश करता है चाहे पृथकता की उनकी स्थानीय, जातीय, पारिवारिक अथवा वर्गीय सहज प्रवृत्तियाँ कितनी भी प्रबल क्यों न हो। राजनैतिक व्यवस्था में राष्ट्र की केन्द्रीय शक्ति एकीभूत सत्ता का मूर्त रूप होता है। इसकी शक्ति पृथक अंगों के नैतिक अधिकार की अपेक्षा चाहे ये अंग उपराष्ट्रों के समान ही क्यों न हो, अधिक महान है यह उसका बलपूर्वक प्रयोग कर सकती हैं और उन अंगों से अपने आदेश का पालन भी करवा सकती है किन्तु जब विद्रोही हित अथवा भावनाएं प्रबल होती है और आवेग अपने पूरे जोर पर होते हैं, ये उद्देश्य किसी भी समय विफल हो सकते हैं। ऐसी अवस्था में अंतिम साधन के रूप में शासक संस्था (राजनैतिक व्यवस्था) के पास सदा अत्यधिक सुसंगठित एवं आधुनिक अस्त्र–शस्त्रों से युक्त श्रेष्ठ सैनिक शक्ति होनी चाहिए जिससे वह अवयवभूत अंगों को भयभीत करके कलहकारी गृहयुद्ध को उभरने से रोक सकें।

ऐतिहासिक पूर्वावलोकन से यह ज्ञात होता है कि राजनैतिक व्यवस्था में न केवल सैनिक शक्ति सदैव से विद्यमान थी वरन् शासन व्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह भी करती थी, प्रत्येक राज्य अपनी सैन्य व्यवस्था की सुदृढ़ता एवं शक्तिशाली बनाने हेतु उद्धत रहता था और राज्य के आवश्यक अंगों के रूप में सेना की गिनती होती थी। आचार्य कौटिल्य ने भी अपने साप्तांग सिद्धान्त के सात अंगों में सेना को भी प्रमुख अंग माना है– उनके द्वारा लिखित सूक्त में भी यह स्पष्ट होता है जो इस प्रकार है– 'स्वामात्य, जनपद दुर्ग कोष दण्ड मित्राणि प्रकट्यः। यहाँ दण्ड का आशय सेना से ही है। कुशल एवं श्रेष्ठ सैनिक युक्त राज्य व्यवस्थाएं ही वैश्विक उथल–पुथल एवं व्यवस्था परिवर्तन का कारण रही है। यह माना जाता है कि राजतंत्रों की अपेक्षा जनतंत्र (लोकतंत्र) युद्ध में भाग लेने के लिए कम सहमत होंगे परन्तु यह केवल एक सीमित अंश में ही सत्य है। जो जनतंत्र कहलाते हैं वे वस्तुतः मध्य वित्तीय राज्य हैं, इनका रूप या तो संविधानीय राजतंत्र है या मध्यवर्ग का गणतंत्र। किन्तु सर्वत्र ही मध्य वर्ग ने कुछ परिवर्तनों के साथ पूर्ववर्ती राजतंत्रीय अथवा कुलीनतंत्रीय सरकारों की कूटनीतिक आदतें उनकी विदेश नीतियाँ और अन्तर्राष्ट्रीय विचार ग्रहण कर लिये हैं।

राष्ट्रों में शान्ति बनाए रखने के लिए विरोधी राष्ट्रीय अहंभावों की सामान्य स्वीकृति पर निर्भर करना एक तार्किक विरोध पर निर्भर करना है। एक ऐसी व्यवहारिक असंभावना जो तर्क एवं अनुभव से जांचने पर असंभव सी जान पड़ती है, भविष्य निर्माण का दृढ़ आधार नहीं बन सकती। शान्ति संघ केवल कुछ समय के लिए केवल सशस्त्र युद्ध रोक सकता है। बलपूर्वक लागू की हुई पंच प्रणाली चाहे उसमें अपराधी को एक बड़े सशस्त्र संगठन का डर ही क्यों न हो, युद्ध के अवसर कम अवश्य कर सकती है। सैनिक शक्ति का आधिपत्य एवं केन्द्रीकरण अभी बहुत समय तक उसकी (राज्य की) सुरक्षा की पहली शर्त होगा। वर्तमान समय में यह पहले से कह सकना कठिन है के संसार के राष्ट्र पूर्ण रूप से निशस्त्रीकरण के लिए सहमत हो जायेंगे। कारण जब तक किसी भी तरह के शक्तिशाली राष्ट्रीय अहंभाव बने रहेंगे और साथ पारस्परिक अविश्वास भी रहेगा। राष्ट्र सशस्त्र सेना के आधिपत्य का त्याग नहीं करेंगे क्योंकि अब उनके हितों को, कम से कम उन हितों को जिन्हें वे अपनी समृद्धि और अपने अस्तित्व के लिए आवश्यक समझते हैं, को खतरा होगा और ये इसी सशस्त्र सेना पर स्वरक्षा के लिए निर्भर रह सकते हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय शासन की निश्चित निष्पक्षता पर किसी भी प्रकार अविश्वास इसी दिशा में कार्य करेगा। तथापि किसी महान मूलगत मनोवैज्ञानिक और नैतिक परिवर्तन के आभाव में इस प्रकार निशस्त्रीकरण युद्ध को निश्चित रूप से बन्द करने के लिए आवश्यक होगा यदि राष्ट्रीय सेनायें रहेंगी तो उनके साथ–साथ युद्धों का होना संभव ही नहीं वरन् अनिवार्य भी होगा। शान्तिकाल में सैनिक शक्ति कितनी भी कम क्यों न कर दी जाये, अन्तर्राष्ट्रीय सत्ता अपने पीछे सैनिक शक्ति को रखते हुए उस सामंतिक राजा के समान ही रहेगी जो अपने सामन्तों पर सफल नियंत्रण कभी नहीं रह सकता। शान्ति एवं सुरक्षा आजकल हम सब चाहते हैं क्योंकि ये पर्याप्त रूप से हमारे पास नहीं है किन्तु हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि मनुष्य के भीतर युद्ध और संघर्ष की मांग भी विद्यमान है। वह अपने विकास तथा स्वस्थ जीवन के लिए इसकी आवश्यकता प्रायः ही अनुभव करता है। यह सहज प्रवृत्ति एक वैश्विक शान्ति और निःसार सुरक्षा से अधिकांश में दब तो जायेगी पर दमन के विरोध में वह सफलतापूर्वक फिर खड़ी हो सकती है। दो विश्व संहारक युद्ध पृथ्वी पर

से गुजर चुके हैं जिनके परिणाम दूर तक पहुंचे हैं इन परिणामों ने पृथ्वी के राजनैतिक नक्से और अन्तर्राष्ट्रीय सन्तुलन तथा सम्पूर्ण भविष्य को बदल दिया है और यदि अब ऐसा ही कोई तीसरा युद्ध हुआ तो वो और भी संकटपूर्ण होगा इसलिए हमें जो कुछ अब तक प्राप्त हो चुका है उसकी ओर तथा भविष्य में होने वाली प्राप्ति की ओर उचित आशावादी दृष्टि से देख सकते हैं किन्तु इस आशावाद के वशीभूत होकर हमें अवांछनीय लक्षणों, संकटमय प्रवृत्तियों तथा विकास कार्य में गम्भीर विघ्न होने की संभावनाओं यहाँ तक मानव संसार में होने वाली उन अव्यवस्थाओं की ओर से, जो संभवतः किये हुए कार्य को उलट भी सकती है, आँखें बन्द कर लेने की आवश्यकता है और न ही हमें ऐसा करना चाहिए। युद्ध का विलोपन इस युग का एक अतिप्रिय आदर्श एवं प्रत्याशा है।

आज अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बातें तो शान्ति स्थापना एवं निःशस्त्रीकरण की जाती हैं किन्तु कार्य सेनाओं की सुदृढ़ता के लिये किया जाता है। जो जितना आर्थिक रूप से सक्षम है उसी के अनुरूप तेजी से सेना के आधुनिकीकरण पर लगा हुआ है। उच्च तकनीकी युक्त, श्रेष्ठ कुशल सेनायें ही आज के वैश्विक व्यवस्था में राजनैतिक शक्ति का प्रतिबिम्ब मानी जाती हैं जिससे यह प्रतीत होता है कि ये सैन्य व्यवस्था अभी चिरकाल तक प्रासंगिक बनी रहने वाली है कम से कम राष्ट्रों की तैयारी देखकर यही लगता है। भारतीय सन्दर्भ में यदि अवलोकन किया जाये तो स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि सेना से अधिक अनुशासित, संगठन शायद ही कोई और हो। भारतीय सेना की छवि वैश्विक रूप से सकारात्मक एवं सर्वमान्य है और भारत की राजनैतिक शक्ति का पर्याय भी। यदि कोई राष्ट्र राजनैतिक रूप से शक्तिशाली बने रहना चाहता है तो उसे निरन्तर सेना की सुदृढ़ता पर निरन्तर ध्यान देने की आवश्यकता है। क्योंकि सेना द्वारा किये जाने वाले राष्ट्रीय हित के कार्य की दिशा एवं दशा निरन्तर बदलती जा रही है और सेना को भी अनेक मोर्चों पर जूझना पड़ रहा है। समस्त वैश्विक राज्य व्यवस्थाओं में सेना की अनिवार्यता एवं उपस्थिति स्पष्ट देखी जा सकती है। जो राज्य व्यवस्थायें आर्थिक रूप से कमजोर हैं वे भी सैन्य शक्ति की सुदृढ़ करने में लगी हैं क्योंकि सेना सुरक्षा एवं विकास रीढ़ बन चुकी है।

देश के समस्त विकास के कार्य सुरक्षात्मक वातावरण में ही कुशलतापूर्वक सम्पन्न हो सकते हैं और अभेद्य सुरक्षा सेना के माध्यम से ही संभव है। वाह्य एवं आन्तरिक आपदाओं, चुनौतियों एवं खतरों का सफलतापूर्वक निस्तारण करके सेनाएं निरन्तर अपनी सार्थकता को सिद्ध करती दिखलाई दे रही है। यहाँ तक कि राष्ट्र की राजनैतिक शक्ति का पैमाना सेनाएं ही बनती जा रही है। और यह प्रक्रिया निरन्तर गतिमान है। भविष्य में भी वही राज्य व्यवस्थायें विश्व पटल पर नई शक्ति के रूप में उभरेगी जो सैनिक रूप से अत्यधिक सुदृढ़ होगी। राष्ट्रीय केन्द्रीयकरण का विकास मुख्यतः दो आवश्यकताओं के कारण होता है इसमें से पहली और अत्यधिक अनिवार्य भी, सुदृढ़ता, एकचित्तता और अन्य राष्ट्रों के संयुक्त और केन्द्रीयभूत प्रतिकार की आवश्यकता है। चाहे यह प्रतिकार वाह्य उत्पीड़न से बचने के लिए किया गया हो या राष्ट्रीय हितों और महत्वाकाक्षांओं की पूर्ति में इस पर दबाव डालने के लिए। युद्ध एवं सैनिकवाद का केन्द्रीकारक प्रभाव अर्थात शक्तियों को केन्द्रीभूत करने की उसकी मांग बहुत पुराने समय से इतिहास का एक सामान्य तथ्य बन चुकी है और राजनैतिक व्यवस्था की श्रेष्ठता में कुशल सेना की आवश्यकता सदैव अनुभूति की जाती रहेगी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्री अरविन्द – मानव एकता का आदर्श, युद्ध एवं आत्मनिर्णय, पाण्डुचेरी, 1969।
2. अशोक कुमार – भारत की आन्तरिक सुरक्षा : मुख्य चुनौतियाँ, मैक्ग्राहिल एजूकेशन (इण्डिया) प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 2015।
3. पुष्पेश पंत – अन्तर्राष्ट्रीय संगठन, मैक्ग्राहिल एजूकेशन (इण्डिया) प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 2015।
4. आर. पी. गोयल – सुरक्षा, निःशस्त्रीकरण और विश्व शान्ति, सुमित इण्टरप्राइजेस, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2007।
5. धर्मपाल – ट्रेडीसन्स ऑफ इण्डियन आर्मी, द पब्लिकेशन डिवीजन मिनिस्ट्री ऑफ इन फारमेशन एण्ड ब्राडकास्टिंग, गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया, 1961।
6. के. एस. श्रीवास्तव – सैनिक कानून की रूपरेखा, चन्द्र प्रकाश एण्ड ब्रदर्स, हापुड़, 1973।
7. डी. के. पालित – द एसेन्सियल ऑफ मिलिट्री नॉलेज, ई. डी. वी. पब्लिशिंग एण्ड डिस्ट्रीब्यूटिंग कम्पनी, देहरादून, 1968।
8. इन्दु प्रकाश – युद्ध का विज्ञान, मनमोहन प्रकाशन, नई दिल्ली।
9. आर. ए. माशेलकर – ज्ञान का युग एवं भारत, संस्करण 2006, प्रभात पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
10. पुष्पेश पन्त – 21वीं शताब्दी में अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, मैक्ग्राहिल एजूकेशन (इण्डिया) प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 2015।

◈◈

RNI : UPMUL00620/24/1/2014-TC ISSN : 2394-4366

Received: 04 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

पण्डित दीन दयाल उपाध्याय : एक युगपुरुष

– डॉ. ज्ञानप्रभा अग्रवाल
एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष – अर्थशास्त्र विभाग,
जुहारी देवी गर्ल्स (पी. जी.) कालेज, कानपुर–208004 (उत्तर प्रदेश)

ई–मेल :
kanpur.gyanprabha@gmail.com

सारांश

दीन दयाल जी अपनी समृद्ध संस्कृति के आधार पर अपने देश का विकास करना चाहते थे और अंग्रेजों द्वारा छोड़ी गई पश्चिमी अवधारणाओं को समाप्त करना चाहते थे। आजादी के तुरन्त बाद भारत में लोकतंत्र की स्थापना हुई थी। उन्होंने लोगों की सोच बदलने का प्रयास किया और कहा कि लोकतंत्र केवल लोगों को गुलाम बनाने या उनका शोषण करने के लिए नहीं है अपितु मजदूरों, गरीबों एवं पिछड़े वर्ग के लोगों की समस्यायें दूर करने एवं उनके उत्थान के लिए है। व्यक्ति देश का नागरिक मात्र ही नहीं वरन् राष्ट्रसेवक या राष्ट्रपुत्र होता है और देश एक भौगोलिक भूखण्ड या संवैधानिक इकाई ही नहीं अपितु एक सांस्कृतिक अवधारणा है। वस्तुतः एकात्म मानववाद को यदि संक्षेप में व्यक्त करें तो यह सिद्धान्त मानव विकास की राह में विवेक के प्रयोग से वर्तमान युग के अन्तर्द्वन्द्वों एवं विरोधाभासों के मध्य समायोजन का सिद्धान्त है। उपाध्याय जी के जीवन में एक संघ के प्रचारक के अतिरिक्त जीवन्त पत्रकार का रूप की देखने को मिलता है। वे देश की राजनीतिक एवं आर्थिक व्यवस्था में आमूल–चूल परिवर्तन करना चाहते थे, अतः उन्होंने शिक्षा के भारतीयकरण पर बल दिया। अपनी संस्कृति के प्रति निष्ठा ही भारतीय राष्ट्रवाद का आधार है। उन्हीं के शब्दों में विदेशी धारणाओं के प्रतिबिम्ब पर आधारित मानव सम्बन्धी अपुष्ट विचारों के मुकाबले में विशुद्ध भारतीय विचारों पर आधारित मानव–कल्याण का सम्पूर्ण विचार करके एकात्म मानववाद के रूप में उन्हीं सुपुष्ट भारतीय दृष्टिकोण को नये सिरे से सूचीबद्ध करना है।

भारतीय जनसंघ, वर्तमान में भारतीय जनता पार्टी के अध्यक्ष एवं राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के चिंतक एवं संगठनकर्ता पण्डित दीन दयाल उपाध्याय का जन्म 25 सितम्बर, 1916 में ग्राम– जगला चन्द्रभान, मथुरा (उत्तर प्रदेश) में हुआ। अत्यन्त तेजस्वी एवं बहुमुखी प्रतिभा के धनी पण्डित दीन दयाल जी ने कानपुर के सनातन धर्म कालेज से बी. ए. की परीक्षा प्रथम श्रेणी उत्तीर्ण की, तत्पश्चात् आगरा के सेण्ट जॉन्स कालेज से अंग्रेजी में एम. ए. की डिग्री प्रथम श्रेणी में प्राप्त की। प्रशासनिक परीक्षा में उत्तीर्ण होने के बावजूद भी उन्होंने अंग्रेज सरकार की नौकरी नहीं की। कानपुर में बी. ए. करने के दौरान ही दीन दयाल जी राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के संस्थापक डी. हेडगेवार के सम्पर्क में आये तथा पढ़ाई पूरी करने के पश्चात् संघ का दो वर्षों का प्रशिक्षण पूर्ण कर संघ के जीवनव्रती प्रचारक हो गये और अपना सम्पूर्ण जीवन संघ के प्रचार में ही समर्पित कर दिया।

21 अक्टूबर, 1951 में डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी की अध्यक्षता में भारतीय जनसंघ की स्थापना हुई। गुरू जी गोलवरकर की प्रेरणा से उद्भूत इस संघ का प्रथम अधिवेशन 21 अक्टूबर, 1952 में कानपुर में हुआ, जिसमें पारित किये गये 15 प्रस्तावों में से 7 प्रस्ताव उपाध्याय जी के द्वारा प्रस्तुत किये गये। डॉ. मुखर्जी ने उनकी कार्यकुशलता एवं क्षमता से प्रभावित होकर कहा था कि यदि मुझे दो दीन दयाल मिल जाय, तो मैं भारतीय राजनीति जनसंघ का नक्शा बदल दूं। 1967 में कालीकट अधिवेशन में उपाध्याय जी को भारतीय जनसंघ का अध्यक्ष निर्वाचित किया गया, परन्तु मात्र 432 दिन तक ही वे इस पद पर रह सके। 10–11 फरवरी, 1968 की रात्रि में मुगलसराय स्टेशन के एक यार्ड में की गई इनकी हत्या के साथ ही एक महान दार्शनिक, योग्य नेता, नैतिकतापूर्ण व्यक्तित्व एवं उच्च विचारों के धनी, एकात्म मानववाद का मूलमंत्र देने वाले, भावी भारतीय राजनीति की अपार संभावनाओं के स्रोत, साम्यवाद एवं पूंजीवाद के घोर आलोचक एवं एक युग प्रवर्तक व्यक्तित्व का सदैव के लिए अन्त हो गया। हमारे पूर्व प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी बाजपेई ने उनके बारे में कहा था कि श्री उपाध्याय दूर –दृष्टि वाले, सम्पूर्ण देश का विचार करने वाले राजपुरुष थे। वे भौतिक विचारक, कुशल संगठनकर्ता और सबको साथ लेकर चलने में विश्वास करते थे।

उपाध्याय जी जनसंघ के राष्ट्र जीवन–दर्शन के निर्माता माने जाते हैं। उनका उद्देश्य स्वतंत्रता की पुनर्रचना के प्रयासों के लिए विशुद्ध भारतीय तत्व–दृष्टि प्रदान करता था। उन्हें जनसंघ की आर्थिक नीति का रचनाकार माना जाता है। उनके विचार से आर्थिक विकास का मुख्य उद्देश्य सामान्य मानव का सुख है। उनके द्वारा लिखित अनेक पुस्तकों में भारतीय राजनीति–विकास की एक दिशा, अर्थनीति का अवमूल्यन, एकात्म मानववाद की योजनायें एवम् राष्ट्र जीवन की दिशा मुख्य है।

एकात्म मानववाद सम्बन्धी विचार पण्डित दीनदयाल उपाध्याय जी द्वारा 22 से 25 अप्रैल, 1965 को मुंबई में दिये गये चार व्याख्यानों के रूप में प्रस्तुत किया गया था। यह विचाार न केवल सम्पूर्ण समाज, सृष्टि या संस्कृति के सन्दर्भ में हैं वरन् समाज की इकाई के रूप में व्यक्ति के समेकित उन्नयन का भी दर्शन प्रस्तुत करता है। इस अवधारणा के मूल्य में व्यक्ति, परिवार, समाज, देश, विश्व और फिर अनन्त ब्रह्माण्ड को समाहित किया गया है जिसमें एक घटक से दूसरे और फिर दूसरे से तीसरे का विकास होता जाता है। सभी एक–दूसरे से जुड़कर अपना अस्तित्व साधते हुए एक–दूसरे के पूरक एवं स्वाभाविक सहयोगी हैं। इनके मध्य कोई संघर्ष नहीं है।

दीन दयाल जी अपनी समृद्ध संस्कृति के आधार पर अपने देश का विकास करना चाहते थे और अंग्रेजों द्वारा छोड़ी गई पश्चिमी अवधारणाओं को समाप्त करना चाहते थे। आजादी के तुरन्त बाद भारत में लोकतंत्र की स्थापना हुई थी। उन्होंने लोगों की सोच बदलने का प्रयास किया और कहा कि लोकतंत्र केवल लोगों को गुलाम बनाने या उनका शोषण करने के लिए नहीं है अपितु मजदूरों, गरीबों एवं पिछड़े वर्ग के लोगों की समस्यायें दूर करने एवं उनके उत्थान के लिए है। व्यक्ति देश का नागरिक मात्र ही नहीं वरन् राष्ट्रसेवक या राष्ट्रपुत्र होता है और देश एक भौगोलिक भूखण्ड या संवैधानिक इकाई ही नहीं अपितु एक सांस्कृतिक अवधारणा है। वस्तुतः एकात्म मानववाद को यदि संक्षेप में व्यक्त करें तो यह सिद्धान्त मानव विकास की राह में विवेक के प्रयोग से वर्तमान युग के अन्तर्द्वन्द्वों एवं विरोधाभासों के मध्य समायोजन का सिद्धान्त है।

अन्त्योदय का भाव पण्डित दीन दयाल जी के एकात्म मानववाद के सह–उत्पाद के रूप जन्मा। इस अवधारणा में यह सुनिश्चित किया जाता है कि सरकार द्वारा निर्णय इस प्रकार से लिये जायें कि पंक्ति में खड़े अन्तिम व्यक्ति को भी उसका लाभ मिल सके। उनके अनुसार संविधान के अर्न्तगत जिस प्रकार सभी नागरिकों को वोट देने का अधिकार प्राप्त है, उसी प्रकार सभी नागरिकों को कार्य करने का अधिकार भी सरकार द्वारा सुनिश्चित किया जाना चाहिए। सरकार का दायित्व है कि देश के सभी नागरिकों हो उनकी योग्यता एवं क्षमता के आधार पर भेदभाव नहीं होना चाहिए। उनका मानना था कि इसके माध्यम से ही लोगों को सामाजिक न्याय मिलेगा और वे आत्मनिर्भर हो सकेंगे। एक विकासशील अर्थव्यवस्था में छोटे व कुटीर उद्योगो का रोजगार सृजन में महत्वपूर्ण भूमिका होती है, अतः सरकार को इस क्षेत्र में लगे व्यक्तियों को आर्थिक सहायता प्रदान की जानी चाहिए।

उपाध्याय जी स्वदेशीकरण के अनुयायी थे, अतः उन्होंने विदेशों से किसी भी प्रकार की आर्थिक सहायता लेने का विरोध किया। उनके अनुसार विदेशी पूंजी के

माध्यम से देश में बड़े उद्योगों की स्थापना करने से अपने देश के लोगों को रोजगार नहीं मिलेगा, उनका शोषण होगा और वे देश के विकास में अवरोधक सिद्ध होंगे। वे उपभोक्तावादी संस्कृति के भी घोर विरोधी थे। उनके अनुसार वर्ग संघर्ष एवं साम्यवादी विचारधारा के उदय का मुख्य कारण उपभोग ही है। भारतीय संस्कृति अधिकाधिक उत्पादन, न्यायपूर्ण वितरण एवं नियंत्रित उपभोग पर आधारित है और इसके अनुसरण से ही मानवता एवं देश का विकास सम्भव है।

एक पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में व्यक्ति का उद्देश्य केवल अधिकाधिक धन अर्जित करना होता है अतः एक उद्योगपति के समस्त निर्णय लाभ एवं हानि पर निर्भर करते हैं। इस प्रतियोगिता में किसी भी प्रकार नियम, कानून एवं नियंत्रणों को स्वीकार करना अन्यायपूर्ण प्रतीत होता है। ऐसी स्थिति में गरीब एवं अमीर के बीच खाई बढ़ती जाती है एवं देश में आर्थिक असमानता बढ़ती जाती है। ऐसी स्थिति में समाज के कुछ लोगों के पास आर्थिक शक्ति केन्द्रित हो जाती है जिसके कारण सांस्कृतिक एवं सामाजिक मूल्य नष्ट हो जाते हैं जो कि देश के विकास में बाधक है। पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के विरोध में समाजवादी अर्थव्यवस्था का उदय हुआ जिसके अर्न्तगत सम्पूर्ण आर्थिक शक्तियाँ राज्य के पास केन्द्रित होती हैं। परिणामस्वरूप वैयक्तिक विकास संभव नहीं होता। पण्डित दीनदयाल उपाध्याय ने दोनों आर्थिक प्रणालियों का विरोध किया और एकात्मक मानववाद पर आधारित आर्थिक एवं विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था का समर्थन किया।

उपाध्याय जी के जीवन में एक संघ के प्रचारक के अतिरिक्त जीवन्त पत्रकार का रूप की देखने को मिलता है। वे देश की राजनीतिक एवं आर्थिक व्यवस्था में आमूल–चूल परिवर्तन करना चाहते थे, अतः उन्होंने शिक्षा के भारतीयकरण पर बल दिया।

अपनी संस्कृति के प्रति निष्ठा ही भारतीय राष्ट्रवाद का आधार है। उन्हीं के शब्दों में विदेशी धारणाओं के प्रतिबिम्ब पर आधारित मानव सम्बन्धी अपुष्ट विचारों के मुकाबले में विशुद्ध भारतीय विचारों पर आधारित मानव–कल्याण का सम्पूर्ण विचार करके एकात्म मानववाद के रूप में उन्हीं सुपुष्ट भारतीय दृष्टिकोण को नये सिरे से सूचीबद्ध करना है।

यह मानव कल्याण के समग्र विचार का समर्थन करता है। एकात्म मानववाद का दर्शन अनियन्त्रित उपभोक्तावाद तथा तीव्र औद्योगीकरण का विरोध करता है, क्योंकि इसका लाभ सर्वाधिक निर्धन व्यक्ति तक नहीं पहुँचता। यह सिद्धान्त वर्तमान में सभी के समावेशी विकास में सहायक है। यह दर्शन, लोकतंत्र, सामाजिक समानता एवं मानवाधिकारों के विचारों का भी समर्थन करता है। इसका उद्देश्य समाज के प्रत्येक व्यक्ति को गौरवपूर्ण जीवन प्रदान करने का है एवं उन सिद्धान्तों एवं अवधारणाओं को प्रोत्साहित करना है जो श्रम, प्राकृतिक संसाधन एवं पूँजी के उपयोग को संतुलित करने में सक्षम हो। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में आपराधिक तत्व, धन की शक्ति इत्यादि समाज एवं राजनीति को व्यापक रूप से प्रभावित कर रहे हैं अतः यह सिद्धान्त और अधिक प्रासंगिक हो जाता है। विश्व में, जहाँ जनसंख्या का एक बड़ा भाग निर्धनता से ग्रसित है, इस सिद्धान्त का प्रयोग एक वैकल्पिक मॉडल के रूप में दिया जा सकता है जिसमें सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक आवश्यकताओं का समन्वय हो।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. महेश जे. मेहता, उपाध्याय का इंटीग्रल ह्यूमैनिज्म : कान्सैप्ट एण्ड इट्स एप्लीकेशन्स, एडिशन : दीन दयाल उपाध्याय कमिटी आफ अमेरिका, 1980।
2. डी. बी. त्यागी, पंडित दीन दयाल उपाध्याय, आइडियोलाजी एण्ड पर्सेप्शन : ऐन इंक्विस्ट (न्यू डेहली) सुरूचि प्रकाशन, 1988।
3. महेश चन्द्र शर्मा, दीनदयाल उपाध्याय : कृतित्व एवम् विचार, न्यू डेहली, वसुधा पब्लिकेशन ।
4. वसंत राज पण्डित, सेक्रेटरी, दीनदयाल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, एडिटर्स, नोट –ख, अप्रैल 2002।
5. बापूराव मोघे, मैन आफ मैनी क्वालिटीज इन डेस्टीनेशन सुधाकर राजे, न्यू डेलही, दीनदयाल उपाध्याय रिसर्च इन्डटीट्यूट 1978।
6. नाना जी देशमुख, द मैन एण्ड द थाट इन डेस्टीनेशन न्यू डेहली : दीन दयाल रिसर्च इन्डटीट्यूट 1978।
7. शान्ति भूषण : विचारक एवं प्रचारक इन डेस्टीनेशन, न्यू डेहली : दीन दयाल रिसर्च इन्स्टीट्यूट 1978।
8. हरिश्चन्द्र वर्धमान, पण्डित दीन दयाल उपाध्याय : व्यक्तित्व एवम् जीवन–दर्शन, न्यू डेहली : दीन दयाल रिसर्च इन्डटीट्यूट न्यू डेहली।
9. सी. पी. शशिकर, पण्डित दीनदयाल उपाध्याय, आइडियोलॉजी एण्ड पर्सेप्शन : कान्सेप्ट आफ राष्ट्र, न्यू डेहली, सुरुचि प्रकाशन 1989 ।

◈◈

Received: 04 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

दलित मानवाधिकार

– डॉ. ममता गंगवार
एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष–
इतिहास विभाग,
महिला महाविद्यालय, किदवई नगर,
कानपुर–208011 (उत्तर प्रदेश)

ई–मेल :
mamtagangwar12@gmail.com

''मानव अधिकार सभ्यता का सार हैं, ये मानव के व्यक्तिगत जीवन, उसकी गरिमा, समानता एवं स्वतंत्रता के लिए अपरिहार्य है।''

– पं. जवाहर लाल नेहरू

मानव व्यक्तित्व के विकास हेतु आवश्यक तथा मानव को मानव होने के कारण मिलने वाले अधिकार मानवाधिकार कहलाते है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने 10 अक्टूबर सन् 1948 को मानवाधिकारी की सार्वभौमिक घोषणा की थी, जिसके अनुसार– ''मानवाधिकार मानव परिवार के सभी सदस्यों की जन्मजात गरिमा, सम्मान और अतिरिक्त अधिकतमर की स्वीकारोक्ति है और यह विश्व में शान्ति, न्याय और स्वतंत्रता की बुनियाद है। घोषणा में 11 अनुच्छेद है अनुच्छेद 1 में महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव जो पुरुषों के साथ इनकी समानता को नकारता है या सीमित करता है मानव गरिमा के विरुद्ध अपराध है मानव गरिमा के विरुद्ध अपराध है। स्वतंत्र भारत के गणतंत्रात्मक संविधान में प्रत्येक नागरिक को स्वतंत्रता, समानता व भ्रातृत्व का अधिकार प्रदान किया गया है। संविधान के अनुच्छेद 15 में धर्म, मूल, वंश जाति, लिंग अथवा जन्म स्थान के आधार पर विभेद प्रतिबन्ध, अनुच्छेद 16 में लोक नियोजन विषय के अवसर की समानता, अनुच्छेद 17 में अस्पृश्यता का अन्त, अनुच्छेद 18 में उपाधियों का अन्त, अनुच्छेद 19 में स्वतंत्रता का अधिकार, अनुच्छेद 20 में अपराधों के लिये दोष के विरुद्ध अधिकार, अनुच्छेद 21 में प्राण व दैहिक स्वतंत्रता का अधिकार, अनुच्छेद 22 में गिरफ्तारी एवं निरोध से संरक्षण का अधिकार, अनुच्छेद 23 से 24 के विरूद्ध अधिकार, अनुच्छेद 32 से 35 में संवैधानिक उपचारों का अधिकार नागरिक को प्रदान किये गये[1] अधिकार ही मानवाधिकार है। मानव अधिकार सुरक्षा अधिनियम (प्रोटैक्टशन ऑफ द राइट एक्ट) 1993 की धारा–2 (ए) के अनुसार, ''मानवाधिकार का अर्थ वो अधिकार है, जो किसी भी व्यक्ति को संविधान द्वारा प्रदत्त है या फिर अन्तर्राष्ट्रीय कानून में वर्णित है और जो भारत की न्यायपालिका द्वारा लागू किया जा सकता है, अधिकार जैसे जीने का, स्वतंत्रता का, बराबरी का, गरिमा और सम्मान का अधिकार महिलाओं की सुरक्षा व अधिकार देने के लिये सरकार ने समय–समय पर बहुत से अधिनियम बनाये जिसमें प्रमुख –

☛1937 – हिन्दू स्त्रियों को सम्पत्ति का अधिकार ।

☛1956 – स्त्रियों व कन्याओं का अनैतिक व्यापार निरोधक अधिनियम।

☛1992 –93 – राष्ट्रीय महिला कोष की स्थापना।

☛2005 – घरेलू हिंसा अधिनियम।

संवैधानिक प्रावधानों को कारगर बनाने हेतु तथा समाज में समानता का भाव बनाने हेतु भारत सरकार ने और भी कई अधिनियम

बनाये जैसे – अस्पृश्यता अपराध अधिनियम 1955, नागरिक अधिकार अधिनियम– 1955, अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 सिर पर मैला ढोने के रोजगार तथा शुष्क (जलविहीन) शौचालयों का निर्माण निषेध अधिनियम 1993 (ए) देवदासी प्रथा उन्मूलन अधिनियम, न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1948, समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976, बाल श्रम निषेध अधिनियम 1986, अन्तर्राष्ट्रीय प्रवासी कर्मकार (नियोजन, विनिमय और सेवा शर्त) अधिनियम 1970, राष्ट्रीय अनुसूचित जाति एवं जनजाति आयोग, राष्ट्रीय सफाई कर्मचारी आयोग आदि जैसे विभिन्न अधिनियम और संगठन दलित मानवाधिकारों की रक्षा की बात करते हैं, किन्तु यह अत्यन्त दुःख की बात है कि दलित वर्ग को अपनी समस्याओं से अब भी छुटकारा नही मिल पा रहा है। भारत में दलित मानवाधिकार हनन के कुछ कारण निम्नवत् हैं –

● भौतिकतावादी युग में धन की लोलुपता, स्वार्थपरता एवं अहं का भाव तथा नैतिकता में ह्रास आदि मानवाधिकारों का उल्लंघन करने वाले तत्व हैं।

● आतंकवाद मानवाधिकार का एक बड़ा शत्रु है जो विश्व में सुरसा की भाँति मुँह फैलाये घूम रहा है और न जाने कितनी जिन्दगियों को तबाह तथा लाचार कर रहा है।

● राजनीतिक सत्ता की हवस भी मानवाधिकारों का उल्लंघन करने पर आमादा हो जाती है।

● बहुत से धार्मिक मुद्दे भी मानवाधिकार विरोधी गतिविधियों में संलग्न हो जाते हैं। धर्म, जो सबको उदारता व सहिष्णुता का पाठ पढ़ाता है, उसी के नाम पर धार्मिक कट्टरता मानवाधिकारों के हनन का कारण बनती है। इस कट्टरता का ही परिणाम है कि सुखमय जीवन, शान्तिपूर्ण विकास तथा आर्थिक विकास के जन्मजात अधिकार से वंचित कर दिया जाता है।

● जातिगत भेदभाव सामाजिक न्याय एवं मानवाधिकारों का हनन करते हैं।

● साम्प्रदायिक विषमता की भावना सामाजिक व्यवस्थाओं तथा भावनाओं में जहर घोलने का काम करती हैं जिसके कारण मानवाधिकार का हनन होता है।

● पुलिस प्रशासन का अनुकूल व प्रतिकूल रवैया का होना न कि निष्पक्षता का होना।

● जातिगत भेदभाव भी सामाजिक न्याय व मानवाधिकारों का हनन करते हैं।

● साम्प्रदायिक विशमता की भावना भी सामाजिक व्यवस्थाओं तथा भावनाओं में जहर घोलने का काम करती हैं, जिसके कारण मानवाधिकार का हनन होता है।

भारतीय इतिहास में दलितों की स्थिति पर सूत्रपात करने से ज्ञात होता है कि प्राचीन काल से ही दलित एक ऐसा तबका रहा है जो उपेक्षित, तिरस्कृत, शोषित, पीड़ित, वंचित और असुरक्षित रहा है। विश्व के सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश भारत में आज इक्कीसवीं सदी में भी यह वर्ग बहिष्कृत जिन्दगी जीने के लिये मजबूर हैं। भारत की जनसंख्या का लगभग 1/6 भाग (दलित) संविधान द्वारा प्रदत्त मूलाधिकारों तथा संयुक्त राष्ट्र संघ के मानवाधिकारों के सर्वव्यापी घोषणाओं के प्रावधानों से बहुत दूर है इस दलित वर्ग की पहचान भारतीय संविधान में अनूसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के रूप में की जाती है।

आजादी के 74 वर्ष पश्चात् भी हम समाज के इस बड़े हिस्से को भारत की मुख्य राष्ट्रीय धारा में नही जोड़ सके हैं। आज भी यह बहिष्कृत समाज भय, भूख, गरीबी, लाचारी तथा भ्रष्टाचार के चलते नारकीय जीवन जीने के लिये अभिशप्त है। जीने का अधिकार देता संविधान इस बहिष्कृत अर्थात् भारतीय दलित समाज को बराबरी का सामाजिक दर्जा देने की किताबी संसदीय बात तो करता है, परन्तु असलियत में यह सारी कागजी कार्यवाही है, जब कि जमीनी सच इससे कोसो दूर उस उदास बूढ़े, भूख तथा बेरोजगारी से बेहाल दलित समाज का चेहरा दिखाता है। सूचना का अधिकार, जीने का अधिकार, बोलने की आजादी, दोनों हाथों को रोजगार, एक अदद सत्य तथा जीने की कशिश किस मनुष्य समाज को नहीं चाहिए? आज प्रश्न यह है कि स्वतंत्र भारत मे इस तथाकथित स्वतंत्र नाद के नीचे वह सब कुछ मौन, वे –आवाज तथा निरीह होकर रह गया है, जो शायद इस स्वतंत्र भारत की पहली आवाज है। हाशिये के बाहर पड़ा भारतीय दलित समाज आज आत्म–सम्मान तथा बहिष्कृत जिन्दगी से मुक्ति पाने का संघर्ष एवं अपने आत्म सम्मान की लड़ाई लड़ रहा है।[2] वही कुछ दलित वर्ग के लोग उच्चतम व प्रतिष्ठित पदो पर आसीन हैं और सम्मानपूर्ण जीवन जी रहे हैं।

शहरी दलित कुछ हद तक आर्थिक, शैक्षिक, राजनैतिक रूप से सम्पन्न हैं अथवा इनसे विपन्न ग्रामीण

दलित, दोनों की आज भी भेदभाव रहित बराबरी के स्थान तथा एक परिमानव जीवन के मौलिक मानवाधिकार के लिये संघर्षरत हैं और अभी भी गरिमामय जीवन यापन करना इनके लिये दिन में सपने देखने के समान है। आज भी सामाजिक न्याय से दूर यह वर्ग 'इन्सान' का दर्जा प्राप्त नहीं कर सका हैं, जिसके प्रमुख कारण अशिक्षा, अंधविश्वास, वर्गगत असमानता तथा जातिवाद एवं जातिगत श्रेष्ठता का भाव हैं। शिक्षा प्राप्त करने में इस वर्ग को बहुत सी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। एक रिपोर्ट के अनुसार – ''अनुसूचित जाति और जनजाति के छात्र–छात्राओं के बारे में अध्यापकों की न्यूनतम अपेक्षाए होती है और झुग्गी बस्तियों में रहने वाले गरीब बच्चों के प्रति तो उनका अपमानजनक और उत्पीड़नकारी व्यवहार रहता है। अध्यापकों के मन में 'वंचित' और कमजोर सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, भाषाओं और अन्तर्निहित बौद्धिक क्षमताओं के बारे में मुखर व मौन धारणाएँ होती है।[3] नेशनल कैम्पेन ऑन दलित ह्यूमन राइट्स की रिपोर्ट में भी 94 स्कूलों के सर्वे के आधार पर बताया गया है – जातिगत आधार पर मानवता की सीमाओं को लांघकर विभेद किया जा रहा है और जिससे बड़ी संख्या में दलित बच्चे अपनी आगे की पढ़ाई जारी नहीं रख पाते।[4] इसी क्रम में दैनिक जागरण (कानपुर संस्करण) 30 सितम्बर, 2000 को छपी घटना रखना चाहती हूँ, जिसमें स्पष्ट रूप से मानवाधिकार का उल्लंघन कर दलित बच्चों के साथ अन्याय दृष्टिगत होता है। खबर के अनुसार बदायूँ, में एक विद्यालय की प्रधानाचार्या ने चार बच्चों को इसलिये स्कूल से निकाल दिया क्योंकि ये अनुसूचित जाति के थे।[5] संवैधानिक सामाजिक समानता की अवधारणा को भी नकारती हुई सच्चाई है जिससे समाज में जातिगत उत्पीड़न एवं वैमनस्य दिग्दर्शित होता है। 2001 में उत्तर प्रदेश के दलित साक्षरता के आँकडे बताते हैं कि प्रति 100 व्यक्ति पर अनुसूचित जाति की साक्षरता दर 46.3 तथा अनुसूचित जनजाति की 35.1 थी तथा सम्पूर्ण भारत में प्रति 100 व्यक्ति में 64.8 थी, जिसमें 75.3 पुरुष तथा 53.7 स्त्रियाँ थी।[6]

इसी तरह हम दलित स्त्रियों की स्थिति देखते हैं तो पाते हैं कि भारतीय समाज में दलित स्त्री तो दोहरे शोषण का शिकार है – एक तो अपनी जाति के कारण दूसरा अपने लिंग के कारण। परिवार के दलित स्त्रियों की हालत बंधुआ मजदूरों से कुछ कम नहीं। दलित स्त्रियों में साक्षरता दर कहीं–कहीं तो 10 प्रतिशत से भी कम है।[7] आज भी दलित महिला सरपंच 'गुदयाबाई' झण्डारोहण करने पर सरेआम बेइज्जत की जाती है। दलित आदिवासी महिलाएँ आज भी हल नहीं छू सकती है। छू देने की स्थिति पर उन्हें बैल की जगत जोत कर भूसा खाने पर मजबूर किया जाता है।[8]

मानवाधिकारों की इस कड़ी में हम देखते हैं कि महिलाओं का उत्पीड़न तथा उन पर अत्याचार तो जैसे आम बात हो गई है। समाचार पत्र ऐसी घटनाओं से प्रतिदिन रंगे हुए मिलते हैं, जैसे उत्तर प्रदेश में हुए वन्दना, पूजा, कविता, दिव्या, शीलू और प्रिया आदि के साथ होने वाले बलात्कार एवं हत्या से सम्बन्धित काण्ड युवतियों की लुटती, अस्मिता तथा मानवाधिकारों की हत्या को प्रत्यक्ष बयां कर देते हैं। 12 फरवरी, 2011, पृष्ठ 4 दैनिक जागरण में छपी खबर ''दलित किशोरी को बंधक बना गैंगरेप'' मानवता की हत्या बयां करती मिलती है। प्रशासन का सख्त रूख होने के बाद भी दुष्कर्मियों को इसका खौफ नहीं है। कानपुर के अर्मापुर में एक दलित किशोरी को बंधक बनाकर सामूहिक दुष्कर्म किया गया। आठ माह बाद आरोपियों के चंगुल से छूटकर घर पहुँची किशोरी ने थाने में रिपोर्ट दर्ज करने के लिये तहरीर दी पर पुलिस ने टरका दिया, फिर डी. आई. जी. के आदेश पर किशोरी का मेडिकल कराकर रिपोर्ट दर्ज कर ली गई। एस. ओ., अर्मापुर उल्टा उस किशोरी को ही दोषी सिद्ध करने में लगे थे। उनका कहना था कि लड़की ने अपनी मर्जी से निकाह किया था, अब तलाक हो जाने पर वह दुष्कर्म का आरोप लगा रही है जब कि लड़की के राजमिस्त्री का काम करने वाले पिता का कहना है कि लड़की 20 जुलाई को घर से बाहर कूड़ा फेंकने गई थी, उसी समय इलाके के रहने वाले मुशर्रफ अपने साथियों के साथ उसे उठा ले गया। डी. आई. जी. राजेश राय के मुताबिक लड़की और उसके परिजनों के आरोप के आधार पर पुलिस रिपोर्ट दर्ज कर मामले की पूरी छानबीन कर रही है।

बड़े ही खेद का विषय है कि भारत में ही नहीं वरन् विश्व स्तर के अन्य समाचारों में भी स्त्री शोषण, अत्याचार, बलात्कार व अपहरण जैसी खबरे प्रसारित हो रही है।

बी. बी. सी. हिन्दी 6 फरवरी, 2011 के अनुसार – उत्तर प्रदेश में दलित मुख्यमंत्री (सुश्री मायावती) के बावजूद दलितों पर बलात्कार के मामले बढ़े। तीन युवकों ने दलित युवती के कान काट दिये बलात्कार की कोशिश

नाकाम रहने पर लखनऊ से 120 किमी. दूर उदौली गांव की घटना थी। समाचार एजेंसी पी. टी. आई. ने इलाके के पुलिस अधीक्षक राम भरोसे के हवाले से बताया है कि हमलावरों ने 16 वर्षीय युवती के नाक और हाथ भी काट दिये। एक युवक गिरफ्तार किया गया और युवती को कानपुर इलाज हेतु ले जाया गया।[9] 18 फरवरी, 2011 – भोपाल, मैं दलित हूँ, इसलिये वो मुझे स्कूली बच्चों को खाना परोसने से रोकते हैं। अशोक नगर के छेलाई गाँव से आई आंगनवाड़ी कार्यकर्ता चंपाबाई ने राज्यस्तरीय सुनवाई में कहा।[10]

यह तो दलित महिलाओं के मानवाधिकारों का हनन था। इसी प्रकार सामाजिक न्याय और मानवाधिकारों की अवहेलना प्रतिदिन होती रहती है, जिसके विश्वसनीय साक्ष्य हमारे समाचार–पत्र तथा मीडिया के अन्य साधन हैं। 29 अप्रैल, 2001 के दैनिक जागरण में छपी खबर को हम प्रमाण के रूप में ले सकते हैं, उत्तर प्रदेश में अलीगढ़ के अतरौली कोतवाली क्षेत्र के ग्राम बढ़ौली में दबंग सवर्णों ने एक बाल्मीकि की बारात को अपने इलाके से गुजरने का विरोध करते हुए बारातियों पर पथराव तथा दूल्हे और बारातियों को जातिसूचक शब्दों का प्रयोग कर अपमानित करते हुए मारा–पीटा और उनका सामान लूट लिया।[11] यह घटना स्पष्ट रूप से मानवाधिकारों का उल्लंघन और हनन करती हुई प्रतीत होती है, ऐसी न जाने कितनी घटनाएँ आज भी घटित हो रही है। 16 फरवरी, 2011 के दैनिक जागरण के अनुसार, काकादेव कानपुर पाण्डुनगर निवासी व उन्नाव के रेशम विभाग में तैनात सहायक निदेशक डॉ. आर. के. तिवारी की माँ को उनके भाइयों ने तीन वर्ष पूर्व सम्पत्ति हड़पने के उद्देश्य से हत्या कर दी थी, तिवारी जी ने भाइयों के खिलाफ रिपोर्ट दर्ज कराई थी। इसमें इनके यहाँ काम करने वाला नौकर राजू दिवाकर गवाह था। तिवारी का आरोप है कि भाइयों ने थाने में मिलीभगत कर मुकदमें में फाइनल रिपोर्ट लिखवा दी। उन्होंने मुकदमे को कोर्ट में चुनौती दी। कुछ दिन बाद राजू के कोर्ट में गवाही देने की जानकारी होने पर उन्होंने रविवार को राजू को बेल्ट और डण्डों से पीटा। वह भाग कर थाने पहुँचा तो पुलिस ने रिपोर्ट दर्ज नहीं की तथा काकादेव एस. ओ. राजेश द्विवेदी ने उल्टा राजू पर ही आरोप लगाया और कहा कि उसने चोट के निशान खुद बनाये हैं और उसके आरोप निराधार है, जब कि श्री तिवारी की पत्नी के अनुसार जब ये राजू को बचाने दौड़ी तो उनकी भी पिटाई की गई। इस घटना में कई लोगों के बयान तथा राजू की छपी फोटो खूब ही सच्चाई बया कर रही है कि उसके मानवधिकारों का हनन हुआ है। बाद में मामला सी. ओ. के पास पहुँचा तो उन्होंने उसका मेडिकल कराकर रिपोर्ट दर्ज करने का आदेश दिया।[12]

मानवाधिकारों की अवहेलना जनता तथा पुलिस प्रशासन के साथ–साथ अपनों द्वारा भी होती ही रहती हैं, जिसमें पिता, पति, भाई, पुत्र आदि करीबी अपनों से सम्बन्धित न जाने कितनी घटनाये हमारे समाचार–पत्र उजागर करते है। '3 मई 2006 को जगवीर पर उसके रिश्तेदारों ने प्राणघातक हमला किया, लेकिन रिपोर्ट आज तक नहीं लिखी गई। यह शिकायत, पश्चिमी उत्तर प्रदेश के जिला गाजियाबाद के साहिबाबाद थाने की है। यह सीधे–सीधे मानवाधिकार का उल्लंघन है। अब जगवीर ने मानवाधिकार आयोग का दरवाजा खटखटाया है।[13] पुलिस द्वारा सरेआम मानवाधिकार का उल्लंघन करती हुई घटना है कि 9 जून, 2006 को बागपत थाने में सम्बन्धित गाँव ससरपुर में चार दरिन्दों ने जंगल में घास काट रही दो गर्भवती महिलाओं के साथ बलात् दुश्कर्म किया। जानकारी मिलने पर पुलिस ने रफा–दफा कर दिया। इसी जिले के कस्बा अमीर नगर सराय में अपनी छः माह की बीमार बच्ची को चिकित्सक के पास ले जा रही महिला को दुकान में खींच कर दुष्कर्म किया गया। शिकायत करने जब वह सिंधावली थाने पहुँची तो पुलिस ने रिपोर्ट लिखने के बजाय उसे डाँट मार कर भगा दिया।[14]

पुलिस कर्मियों को मानवतापूर्ण व संवेदनशील बताने के अनेक कार्यक्रमों के बावजूद देश में औसतन रोजाना 4 व्यक्तियों की पुलिस हिरासत में मौत होती है। इसका सबसे बड़ा कारण है कि आज भी स्वतंत्र भारत में अग्रेजों द्वारा बनाया गया 1861 का पुलिस कानून लागू है। न्यायालयों ने कई बार कहा कि पुलिस जनता की रक्षा और सुरक्षा के लिये है। जनता को पुलिस का कल्याणकारी चेहरा दिखाई देना चाहिए न कि अत्याचारी और दमनकर्ता का। न्यायालयों द्वारा कहने के बावजूद भी इस पुराने पड़ चुके कानून मे कोई महत्वपूर्ण संशोधन नहीं हुए हैं। 1961 के कानून की पृष्ठभूमि हमारा प्रथम स्वतंत्रता संग्राम था। उस समय पुलिस को ऐसे तत्वों के दमन के लिये तैयार किया जाना था जो ब्रिटिश राज के विरोध में जरा भी सिर न उठाये, पुलिस को मुख्य रूप से दमन, उत्पीड़न और अत्याचार का दायित्व सौंपा गया

था। पराधीन देश के लोगों को काबू में रखने के लिये पुलिस को निरंकुश शक्तियाँ प्रदान की गई थी। पुलिस अपने अफसरों के अतिरिक्त अन्य किसी के प्रति उत्तरदायी भी नहीं थी। आज भी पुलिस बलों में सामाजिक वास्तविकता और लोकतांत्रिक अधिकारों की आवश्यकता के प्रति कोई जागरुकता दृष्टिगोचर नहीं होती, जबकि आज स्थितियाँ पूरी तरह बदल चुकी हैं। हम गणतंत्रीय व्यवस्था में शासित एक कल्याणकारी राष्ट्र के निवासी हैं। पुलिस जनता की स्वामी न होकर उनकी सेवा व उनके कल्याण के लिये बनाई गई है।[15] अतः पुलिस कर्मियों के विचारों व व्यवहार में परिवर्तन अति आवश्यक है।

सामाजिक न्याय की मुख्य अवरोधक तत्व जातिवाद के कारण हम देखते हैं कि उच्च वर्गों द्वारा दलितो को समाज में आत्मसात् नहीं किया गया है, उनके साथ किसी न किसी रूप में विभेद किया जाता है। विभिन्न शोधों में यह प्रमाणित हो चुका है कि भारतीय उपमहाद्वीप के लोगों में आपस में किसी प्रकार की जीनी' विशिष्टताएँ या विभिन्नताएँ नहीं हैं, इसलिये जैवशास्त्रीय दृष्टिकोण से सभी व्यक्ति समान है। आज इक्कीसवी सदी में भी यह कड़वी सच्चाई है। कि भारत के सभी धर्मों के अधिकांश सवर्णजन मन से दलितों की उपेक्षा ही करते है। ग्रामीण अंचलों में तो खुले तौर पर उनकी उपेक्षा दृष्टिगत होती है, हाँ नगरीय क्षेत्रों में जो परस्पर मित्रवत् व्यवहार दिखाई देता है वह सही मायने में कही न कहीं स्वार्थ और मजबूरीवश होता है। जैसे प्रतिष्ठित डाक्टरों से इलाज करवाने तथा रक्त की आवश्यकता पड़ने पर बिना किसी जातीय पड़ताल के रक्त लेने में उन्हें कोई गुरेज नहीं होता। इनसे मधुर सम्बन्ध बनाने, वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करने, उनके साथ उदारतापूर्ण व सम्मानपूर्ण व्यवहार में संकोच क्यों?

भारत में जातिवाद के चलते होने वाला दलित उत्पीड़न अपनी क्रूरता और अमानवीयता से नस्लवादी उत्पीड़न को भी पीछे छोड़ देता है। संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार की एक उप समिति की 31 जुलाई, 2000 में हुई बैठक में सरकार ने दलित समुदाय में व्यवसाय पर आधारित सभी पक्षपातो एवं उत्पीड़न को समाप्त करने पर अपनी सहमति जताई है। सभी प्रकार के नस्ली भेदभाव को समाप्त करने के लिये आयोजित संयुक्त राष्ट्र कन्वेंशन में उसने अपने पड़ोसी देश नेपाल और श्रीलंका में जातीय उत्पीड़न को समाप्त करने का आवाहन भी किया था।[16] सरकार का यह बयान व्यवसायों में निष्पक्षता को लेकर दिया गया है पर समाज में व्यवहारिक रूप से अभी भी भेद–भावपूर्ण वातावरण बना हुआ है। भारत में जहाँ राजनीतिक दल विभिन्न समूहों के आपसी संघर्षों को अपने संकीर्ण हितों की पूर्ति के लिये इस्तेमाल करके स्थितियों को खतरनाक बना देते हैं, मानवाधिकार आन्दोलन को अपने कार्यक्रम में अन्तर–सामुदायिक संघर्षों के शान्तिपूर्ण समाधान या प्राथमिकता देनी चाहिए।

'भारत में मानवाधिकारों की विचारधारा का विकास करने की जरूरत है। मानवाधिकार आन्दोलन एक सार्वभौमिक विचारधारा है – जून, 1993 में वियना में यह ठीक ही स्वीकार किया गया था लेकिन भारत में इसे भारतीय सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक तथा आर्थिक स्थितियों के अनुरूप बदलना होगा। यह इस आन्दोलन के लिये आत्म विश्लेषण का समय है, ताकि वह भविष्य के लिये स्पष्ट कार्ययोजना तैयार कर सके।'' मानवाधिकारों के प्रति समाज में व्यापक जागरुकता, स्वीकृति तथा संवेदना उत्पन्न करने के लिये मानवाधिकार शिक्षण की आवश्यकता है। स्कूल, कॉलेज के विद्यार्थियों, शिक्षा–शिक्षण की आवश्यकता है। स्कूल, कॉलेज के विद्यार्थियों, शिक्षा–संस्थाओ के बाहर के लोगों, पुलिस, संशस्त्र बलों, अर्धसैनिक बलों, प्रशासकीय सेवा में लगे व्यक्तियों, डाक्टरों, मीडिया के लोगों तथा ऐसे अन्य सभी व्यवसायों में कार्यरत व्यक्तियों को मानवाधिकार की शिक्षा दी जानी चाहिए जो जनता से सीधे सम्पर्क में आते है। – भारत में मानवाधिकार शिक्षण सर्वाधिक उपेक्षित रहा है। 1980 में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने न्यायमूर्ति एस. एम. सीकरी की अध्यक्षता में मानवाधिकार शिक्षण पर एक कमेटी नियुक्त की थी। इसकी रिपोर्ट 'ब्लूप्रिंट फॉर प्रमोशन ऑफ ह्यूमन राइट्स एजूकेशन इन इण्डिया ऐट आल लेवल्ल' को 1985 में यू.जी.सी. ने स्वीकार कर लिया था लेकिन आज यह एक दुर्लभ एवं विस्मृत दस्तावेज हैं। पिछले कई वर्षों में स्वैच्छिक ग्रुपो ने दिल्ली में मानवाधिकार–शिक्षण के लिये राष्ट्रीय परिषद् बनाने के प्रयास किये हैं। इस पर केन्द्रीयभूत ढाँचे के निर्माण की प्रक्रिया चल रही है। मानवाधिकार शिक्षण को सभी क्षेत्रों के कर्मचारियों के प्रशिक्षण का एक अंग बनाया जाये। मानवाधिकार ग्रुप विभिन्न पाठ्यक्रम अध्ययन तथा अध्यापन के लिये सामग्री तथा शिक्षण संस्थानों से बहार के नागरिकों के लिए दृश्य–श्रव्य सामग्री तैयार करने के

ISSN : 2394-4366

विशेशज्ञों की समितियाँ भी बना सकते हैं। स्वैच्छिक ग्रुपों के लिये मंत्रालयों जैसी सरकारी एजेंसियों तथा यू. जी. सी., राष्ट्रीय शिक्षा एवं अनुसंधान परिषद् और नवगठित राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग जिसे मानवाधिकारों की शिक्षा देने की जिम्मेदारी सौंपी गई है– जैसे स्वायत्त निकायों के साथ मिलकर काम करने में कोई समस्या नहीं होनी चाहिए। सरकारी–गैर सरकारी संगठनों की आपसी प्रतिद्वन्द्विता को इस तरह के संयुक्त शैक्षिक लक्ष्यों के रास्ते में नहीं आना चाहिए। इसके अतिरिक्त विनाश करने वाले हथियारों, विभिन्न समूहों के आपसी संघर्षों के समाधान तथा सामान्य रूप से शान्ति के प्रति संगठित सरोकार का अभाव भी मानवाधिकारों का एक उपेक्षित पक्ष है।[17]

मानवाधिकार और उनकी रक्षा एक सार्वभौमिक तथ्य है। मानवाधिकारों के संरक्षण व उनके प्रति आदर व चिन्ता आज के समय की माँग है। इन अधिकारों की रक्षा की एकमात्र गारण्टी परस्पर सद्भाव ही है। जहाँ यह सद्भाव नहीं रहता तथा समाज में रहने वाले लोग एक वर्ग एक–दूसरे के प्रति असहिष्णुता का व्यवहार करने लगते हैं, वहीं पर संस्कारों को हस्तक्षेप करने की आवश्यकता पड़ती है। यह हस्तक्षेप आमतौर पर पुलिस बल के रूप में सामने आता है। इसलिए पुलिस का यह पहला कर्तव्य होता है कि वह मानवाधिकारों की रक्षा करे। इसके लिये समाज, राजनेता व सरकार का भी दायित्व है कि वह पुलिस बलों का मनोबल बनाये रखने में सहायक हो।[18] आज भी भारतीय दलित समाज मानवाधिकारों से वंचित तथा गुलामी की त्रासदी भुगतने के लिए मजबूर है उक्त स्थिति में बदलाव आना राष्ट्र प्रगति तथा मानवतावाद के लिये अति आवश्यक है।

'वसुधैव कुटुम्बकम्', सर्वे भवन्तु सुखिनःसर्वे सन्तु निरामयः संघे शक्ति की अवधारणा रखने वाले देश में 'जियो और जीने दो' का आदर्श सद्भाव, सहिष्णुतापूर्ण भाव युक्त सांस्कृतिक विरासते भी मानवतावाद के अधिकारों की अवहेलना तथा उल्लंघन को भौतिकतावादी युग में रोक नहीं पा रही है। अपनी विरासत में मिले विशिष्ट आदर्शों को बनाये रखने तथा मानवाधिकारों की सुरक्षा के लिय अत्यन्त आवश्यक है। हम सभी नागरिकों को समझदारी संवेदनशीलता व विचारशीलता से अपने दायित्वों का निर्वाह करने की आवश्यकता है और अपने स्तर पर गाँव, कस्बे व शहर में दलितों पर हो रहे उत्पीड़न और मानवाधिकार करने वाले मन्द लोगों के विरुद्ध आवाज उठाकर पारस्परिक सौहार्द्र बनाये रखने के लिए प्रयासरत रहे, जिससे स्वस्थ व स्वच्छ सामाजिक वातावरण बने और लिंग जाति, धर्म व सम्प्रदाय को लेकर किसी तरह का विवाद न होकर परस्पर सभी लोग सम्मानपूर्वक प्रगति पथ पर आगे बढ़ सकें और राष्ट्र की विकासशीलता में योगदान दे सके और भारत को विकसित राष्ट्रों की श्रेणी में खड़ा कर सकें। हम सभी नागरिकों का दायित्व है कि संविधान तथा मानवाधिकार के सिद्धान्तों के प्रति सम्मानपूर्वक व्यवहारिक रूप में अपनी निष्ठा व्यक्त करे तथा उनका अनुपालन करे जिससे कि समाज में समानता का भाव जाग्रत हो तथा ''जियो और जीने दो' का सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयः तथा संघे शक्ति के हमारे सांस्कृतिक विरासत से प्राप्त आदर्श साकार हों।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. A Journal of Asia for Democracy and Development, Published by the Council for Peace, Development and Cultural Unity, Modi Nagar, Jain Mandir Road, Morena, Vol X (2) 2010 ISSN – 0973 – 3833, p-78
2. रत्तू, डॉ. कृष्ण कुमार – भारतीय दलित और मानवाधिकार – जातिवाद और संवैधानिक संरचना, बुक इन्क्लेव, जयपुर, प्रथम संस्करण–2002, पृ.–विषय सूची से पहले लेखक द्वारा लिखा गया जीने के अधिकारी (प्रस्तावना के रूप में)।
3. 2006– ''नेशनल ग्रुप ऑन प्रॉब्लम्स ऑफ शेड्यूल कॉस्ट एण्ड ट्राइव चिल्ड्रेन'' की रिपोर्ट।
4. नेशनल कैम्पेन ऑन दलित ह्यूमन राइट्स सर्वे रिपोर्ट (94 स्कूलों पर)।
5. 30 सितम्बर 2000 का दैनिक जागरण, कानपुर संस्करण।
6. सांख्यिकीय डायरी उ. प्र., अर्थ एवं संख्या प्रभाग, राज्य नियोजन संस्थान, लखनऊ, उ. प्र., 2008।
7. जमाल, डॉ. मीता एवं पुरवार, डॉ. मीना (सम्पा.) सामाजिक परिवर्तन के युग पुरुष – डॉ. अम्बेडकर, आशा प्रकाशन, कानपुर, प्रथम संस्करण 2010, पृ. 320
8. वही, पृ. 3219.www.bbc.co.uk / hindi / india / 2011 / 2/ 11010.www.bhaskar.com / article / mp.bpl.mp.ash.
11. 29 अप्रैल, 2001, दैनिक जागरण, कानपुर संस्करण।
12. 16 फरवरी, 2011, दैनिक जागरण, कानपुर संस्करण, पृ. 7।
13. गौतम, रूपचन्द – दलित मानवाधिकार, कान्ती पब्लिकेशन, दिल्ली, 2008, पृ. 127।
14. वही, पृ. 126, 127।
15. दिसम्बर, 2006, कुरूक्षेत्र।
16. गौतम, रूपचन्द–पूर्वोक्त, पृ. 135।
17. संचेतना पत्रिका – सितम्बर – दिसम्बर – 1994, गौतम रूपचन्द्र, पूर्वोक्त, पृ. 244–45।
18. गौतम रूपचन्द– पूर्वोक्त, पृ0 214।

◈◈

RNI : UPMUL00620/24/1/2014-TC ISSN : 2394-4366

Received: 04 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

किशोरावस्था में किशोर एवं किशोरी में स्वास्थ्य के प्रति सजगता एवं पोषक तत्व के ज्ञान स्तर का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. रन्जू कुशवाहा
एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष – गृह विज्ञान विभाग,
जुहारी देवी गर्ल्स (पी. जी) कॉलेज, कानपुर–208004 (उत्तर प्रदेश)

ई–मेल :
Email :
ranju.redme@gmail.com

– डॉ. प्रियंका सिंह
असिस्टेन्ट प्रोफेसर – समाजशास्त्र विभाग,
रामकृष्ण विद्यावती महाविद्यालय, सकरन – बिछिया, उन्नाव–209825 (उत्तर प्रदेश)

ई–मेल :
priyanka.soc@gmail.com

किशोरावस्था जीवन की एक महत्वपूर्ण अवस्था है। इस अवस्था के सम्बन्ध में लोगों में अलग–अलग विचार हैं, जहाँ WHO ने 10–19 वर्ष को तो यूनाइटेड नेशन ने बहुत लम्बी अवधि 10 से 24 वर्ष आयु को किशोरावस्था माना है जब कि भारत सरकार व श्रम एवं कानून के तहत 14 साल के बच्चों को बालक माना गया है। इसी तरह मातृत्व एवं शिशु स्वास्थ्य कार्यक्रम के तहत 10 से 19 वर्ष को किशोरावस्था माना गया है लेकिन प्रस्तुत अध्ययन में किशोरावस्था के अन्तर्गत विशेषकर 13 से 19 वर्ष के उम्र के किशोर–किशोरियों को लिया गया है। (हेल्थ फोर मिलियन्स फरवरी–मार्च 2004)

सरकारी कार्यक्रमों एवं नीतियों में किशोरावस्था पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया है लगभग सभी कार्यक्रमों में महिलाओं और बच्चों पर ध्यान केन्द्रित किया गया है।

प्रायः देखा जाता है किशोर व किशोरियाँ जिन्होंने अपनी बाल्यावस्था में बहुत अच्छा आहार लिया है किशोरावस्था में बहुत ही असंतुलित आहार लेने लगते हैं। इसका कारण उनके अन्दर उत्पन्न हुई आत्मनिर्भरता की भावना तथा साथियों के प्रभाव से अपने शरीर की आकृति के प्रति चेतन होना। लड़कियाँ अपने शरीर के अतिभार के सम्बन्ध में विशेष रूप से जागरुक होती हैं इसलिए डाइटिंग की अवधारणा प्रचलित होती हैं, जबकि लड़के अपने शरीर के कम भार के लिए विशेष रूप से परेशान रहते है। अतः लड़कियों के शरीर में पोषक तत्वों की कमी की सम्भावना रहती है।

पौष्टिक तत्व –

भोजन के अन्दर विद्यमान वे सभी तत्व जो शरीर निर्माण, ऊर्जा उत्पादन तथा शरीर की रोगो से रक्षा करने का कार्य करते हैं, पोषक तत्व कहलाते हैं। भोजन के अन्दर पाये जाने वाले इन सभी पोषक तत्वों को छः समूहों में विभाजित किया गया है –

1. प्रोटीन – प्रोटीन शरीर के सभी ऊतकों का निर्माण करता है और उसकी मरम्मत एवं क्षतिपूर्ति करता है। ग्रन्थियों के स्रावों, हार्मोनो, पाचक अन्य इन्जाइमों का निर्माण करता है। रोग रोधक को बनाता है और शरीर को ऊर्जा तथा ताप भी प्रदान करता हूँ। 1 ग्राम प्रोटीन से 4 कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है। यह दूध एवं दूध से बने पदार्थ, अण्डे, माँस, मछली, दालें, फलियाँ, सोयाबीन, तिल आदि में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है।

2. कार्बोहाइड्रेट – आहार में ऊर्जा का अधिकतर भाग में कार्बोहाइड्रेट से ही लिया जाता है। निम्न आर्थिक स्थिति के परिवारों में तो ऊर्जा का 90% भाग कार्बोहाइड्रेट से ही लिया जाता है। दूसरी तरफ उच्च वर्ग में 40% लिया जाता है। सामान्य रूप से 55 से 65% ऊर्जा का भाग कार्बोहाइड्रेट के द्वारा लिया जाना चाहिए। 1 ग्राम कार्बोहाइड्रेट 4 कैलरी ऊर्जा देता है। चावल, गेहूँ, बाजरा, मकई, चीनी, गुड़, सूखे फल, आलू, शकरकन्द इसके मुख्य प्राप्ति के स्त्रोत हैं।

3. वसा – वसा और लिपिड़, प्रकृति से प्राप्त उन भोज्य तत्वों के समूह को कहते है जो पानी में अघुलनशील होते हैं, चिकनाई लिये होते हैं तथा विभिन्न कार्बनिक द्रवों में घुलनशील होते हैं, एक ग्राम वसा से 9 कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है। घी, मक्खन, सभी प्रकार के तिलहन, बादाम, मृंगफली, मछली, यकृति, माँस आदि इसके प्राप्ति के साधन हैं।

4. खनिज लवण– कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन एवं वसा के अतिरिक्त एक और तत्व शरीर में उपस्थित रहता है। जिससे खनिज तत्व कहते हैं। यह तत्व शरीर में वृद्धि व निर्माण में सहायक होता है। हमारे शरीर के भार का 4% भाग खनिज तत्व से ही बना होता है। शरीर में कुल 24 प्रकार के खनिज तत्व होते है। यह हमारे शरीर में दाँतो व अस्थियों का निर्माण एवं सृदुढ़ बनाना, रक्त में उपस्थित हिमोग्लोबिन का निर्माण आयरण के द्वारा तथा अम्ल एवं क्षार का संतुलन आदि कार्य करता है। प्रमुख खनिज लवण है–आयरन, कैल्शियम, आयोडिन, सोडियम, फास्फोरस, सल्फर आदि।

5. विटामिन– विटामीन एक प्रकार के कार्बनिक यौगिक है, जिनकी भोजन में उपस्थिति बहुत कम मात्रा में होती है तथा जीवन में वृद्धि के लिए बहुत आवश्यक होते हैं। विटामिन का प्रमुख कार्य शरीर एवं रोगो से संघर्ष करने की क्षमता उत्पन्न करना है, इसलिए इन्हें सुरक्षात्मक पोषक तत्व कहते हैं। शरीर मे ंइसकी आवश्यकता बहुत कम होती है, परन्तु यह शरीर को स्वस्थ रखने के लिए आवश्यक है। आहार में इनकी कमी से शरीर रोगों से विकार ग्रस्त हो जाता है। विटामिन मूख्य रूप से छः प्रकार के होते हैं। जैसे– विटामिन A, B, C, D, E एवं K, एक का व्यक्ति के दैनिक आहार में इनकी एक निश्चित मात्रा होना अत्यन्त आवश्यक है।

6. जल – वायु के बाद जल मनुष्य की मौलिक आधारभूत आवश्यकता है। जल घोलक के रूप में कार्य करता है और शरीर की विभिन्न क्रियाओं को करने के लिए आवश्यक है। हमारे शरीर का अधिकांश भाग (66%) जल है। प्रायः सभी भोज्य तत्वों में जल की मात्रा विद्यमान होती है। अतः जल के बिना जीवन को जीना संभव नहीं है। भोजन के अर्न्तग्रहण, पाचन, अवशोषण, वह उत्सर्जन आदि कार्यो के लिए जल आवश्यक है। **(तालिका संख्या–1 देखिये)**

1. किशोरावस्था में संतुलित आहार (ग्राम में) –

किशोरावस्था में किशोर एवं किशोरी के सर्वागींण

तालिका–1

ICMR के पोषण विशेषज्ञों द्वारा प्रस्तावित भोज्य तत्वों की आवश्यक मात्रा

पोष्टिक तत्व	उम्र (13–15 वष)		उम्र (16–18 वर्ष)	
	किशोर	किशोरी	किशोर	किशोरी
कैलोरी	2600	2200	2800	2200
प्रोटीन (ग्राम)	51.7	45.1	53.1	44
कैल्शियम (ग्राम)	0.6–0.7	0.6–0.7	0.5–0.6	05.–0.6
आयरन (मि0ग्राम)	25	35	25	35
विटामिन 'ए' (मा0ग्राम)	750	750	750	750
थायमिन (मि0ग्राम)	1.3	1.1	1.5	1.1
राइवोप्लेविन (मि0ग्राम)	1.4	1.2	1.7	1.2
नायसिन (मि0ग्राम)	17	14	21	14
विटामिन 'सी' (मि0ग्राम)	50	50	50	50

स्रोत–श्रीमती उषा मिश्रा एवं सरिता सिंहल, आहार एवं पोषण विज्ञान 1989)

तालिका – 2
किशोरावस्था में संतुलित आहार (ग्राम में)

पोष्टिक तत्व	उम्र (13–15 वर्ष)	16–18 वर्ष	उम्र (13–18 वर्ष)
	किशोर	किशोर	किशोरी
अनाज	370-430	400-450	300-350
दालें	50-70	50-70	30-40
हरी पत्तेदार सब्ज़ियाँ	100	100	150
अन्य सब्जियाँ	150	175	150
फल	100	10	600-1000
दूध	600-1000	600-1000	30
वसा एवं तेल	35	40	50-100
मांस मछली व अण्डा	50	100-120	30
शक्कर व गुड़	30	40	30
मुगंफली आदि	30	50	30

स्त्रोत–श्रीमती उषा मिश्रा एवं सरिता सिंहल, आहार एवं पोषण विज्ञान (1989)

विकास को देखते हुये उनके आहार में विशेष ध्यान देना चाहिए। इस अवस्था में दोनो को अत्यधिक मात्रा में सभी प्रकार के पौष्टिक तत्वों की आवश्यकता होती है। इस अवस्था में यदि पोषक तत्वों का आभाव होता है तो किशोर एवं किशोरियों का शारीरिक विकास पूर्ण नहीं हो पाता है। वे कमजोर एवं कद में छोटे रह जाते है और शारीरिक भार में भी सामान्य वृद्धि नहीं होती है। भारत वर्ष में निर्धनता एवं अज्ञानता दो ऐसे कारण है जिनके 50% से भी अधिक किशोर एवं किशोरियों का विकास पूर्ण नहीं हो पाता है वह विभिन्न प्रकार की बीमारियों से ग्रस्ति हो जाते है। (तालिका संख्या–2 देखिये)

विभिन्न भोज्य समूहों में दूध की मात्रा पर इस अवस्था में विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए क्योंकि कैल्शियम व प्रोटीन की बढ़ी हुई आवश्यकता दूध के द्वारा पूरी होती है। विशेष रूप से शाकाहारी व्यक्तियों के आहार में दूध पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। इस अवस्था में अधिकतर पोषक तत्वों से ही सम्बन्धित ज्ञान की कमी एवं भोजन सम्बन्धी आदतें ठीक न होने के कारण किशोर व किशोरियाँ दैनिक प्रस्तावित मात्रा के अनुसार भोज्य तत्व अपने भोजन द्वारा नहीं ले पाते हैं। उनके आहार में कैल्शियम विटामिन–ए तथा विटामिन–सी विशेष रूप से कम रहते है, इसके अतिरिक्त लड़कियों के आहार पर अधिकतर आयरन की भी कमी रहती है।

उद्देश्य –

किशोर वर्ग समाज का एक महत्वूपर्ण अंग है जिसके स्वास्थ्य पर समाज तथा देश का उज्जवल भविष्य टिका है। विभिन्न स्त्रोतों से ज्ञात हुआ है कि किशोर व किशोरियों में स्वास्थ्य के प्रति सजगता एवं पोषक तत्वों से सम्बन्धी जानकारियाँ आधी अधूरी हैं, जिनसे उनका स्वास्थ्य एवं व्यक्तित्व दोनो प्रभावित होता है।

प्रस्तुत अध्ययन में लिंग के आधार पर स्वास्थ्य के प्रति सजगता एवं भोजन के पोषक तत्वों के ज्ञान के स्तर का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। इसके अन्तर्गत निम्न उद्देश्यों को निर्धारित किया गया है :–

1. किशोर एवं किशोरियों में स्वास्थ्य के प्रति सजगता का पता लगाना।

2. किशोर एवं किशोरियों भोजन में उपस्थित पोषक तत्वों के ज्ञान स्तर का पता लगाना।

प्रस्तुत अध्ययन में उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुये निम्न उपकल्पनाओं का निर्माण किया गया है जो इस प्रकार से है –

1. प्रायः किशोरियाँ किशोरों की अपेक्षा स्वास्थ्य के प्रति अधिक सजग होती है।

2. प्रायः किशोरों को भोजन के पोषक तत्वों की

जानकारी किशोरियों की तुलना में अधिक होती है।

अध्ययन पद्धति –

प्रस्तुत अनुसंधान में दो शोध प्रारूप – अन्वेषणात्मक एवं गुणात्मक शोध प्रारूप का सहारा लिया गया है। प्रस्तुत शोध में पटना नगरीय क्षेत्र को अपना समग्र चुना गया है निदर्शन की इकाई में वैसे किशोर व किशोरियों का चुनाव किया गया है जिनकी उम्र 13 से 19 वर्ष के बीच है। 200 किशोर तथा किशोरियों अर्थात 100 किशोर एवं 100 किशोरियों का चयन किया गया है जो पटना शहर के अन्तर्गत आने वाले महाविद्यालय एवं 10+2 विद्यालय के है। तथ्यों को संकलित करने के लिए साक्षात्कार अनुसूची का उपयोग किया गया है एवं उपकल्पनाओं के जांच के लिए काई वर्ग (Chi-Square) का प्रयोग किया गया है।

तथ्यों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण –

प्रस्तुत शोध में प्राप्त किए गये आंकड़ों के आधार पर किशोरावस्था में स्वास्थ्य के प्रति सजगता एवं पोषक तत्वों सम्बन्धी ज्ञान स्तर का विश्लेषण किया गया है जो निम्न प्रकार है– **(तालिका संख्या–1–3 देखिये)**

किशोर एवं किशोरियों में स्वास्थ्य के प्रति सजगता–

किशोरवस्था में शारीरिक विकास के साथ किशोर–किशोरियों में अपनी अलग पहचान बनाने की प्रकृति में वृद्धि होती है। इसलिए किशोरों–किशोरी स्वयं को सजने–संवरने पर विशेष बल देने लगते हैं।

तालिका संख्या–1

लिंग के आधार पर उत्तरदाओं का विवरण		
लिंग	संख्या	प्रतिशत
किशोर	100	50
किशोरी	100	50
कुल	200	100%

तालिका संख्या–2
उत्तरदाताओं की माताओं की शैक्षणिक स्थिति

माता की शैक्षणिक स्थिति	किशोर	किशोरी	कुल	प्रतिशत
निरक्षर	19	9	28	14
मैट्रिक	34	41	75	37.5
इंटर	13	26	39	19.5
स्नातक या अधिक	34	24	58	29
कुल	100	100	200	100

इस प्रकार तालिका से स्पष्ट है कि उच्च शिक्षित माताओं की संख्या अधिक है।

तालिका संख्या–3
उत्तरदाताओं के पिताओं की शैक्षणिक स्थिति

पिता की शैक्षणिक स्थिति	किशोर	किशोरी	कुल	प्रतिशत
निरक्षर	4	5	9	4.5
मैट्रिक	16	4	20	10
इंटर	14	11	25	12.5
स्नातक या अधिक	66	80	146	173
कुल	100	100	200	100

इस प्रकार तालिका से स्पष्ट है कि उच्च शिक्षित पिताओं की संख्या अधिक है।

किशोर–किशोरियों में स्वास्थ्य के प्रति सजगता

उत्तरदाता	योग / व्यायाम / संतुलित आहार पर ध्यान देते है	कुछ नहीं करते	कुल
किशोर	81	19	100
किशोरी	88	12	100
कुल	169	31	200
प्रतिशत	84.5%	15.5%	100%

सज–संवरकर वे न केवल मानसिक रूप से प्रसन्न और संतुष्ट होते हैं बल्कि अपने आप को दूसरे के लिए आकर्षक भी दिखना चाहते हैं। आधुनिक वातावरण में मीडिया पात्रों को अपना आदर्श मानकर स्वयं उनके जैसा दिखना चाहते हैं। जहाँ किशोर विभिन्न प्रकार के जिमों में जाकर अपना गठीला बदन बनाने का प्रयास करते हैं, वहीं किशोरियाँ अपनी आकृति को डाइटिंग द्वारा संतुलित करने की कोशिश करती हैं। किशोरियों में किशोरों की अपेक्षा स्वास्थ्य के प्रति सजगता अधिक होती हैं क्योंकि वे मानती हैं कि शारीरिक सुन्दरता से अपने दोस्तों व विपरीत लिंगीय सदस्यों के प्रति आकर्षण स्वाभविक है।

उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुये प्रस्तुत अध्ययन में निम्न उपकल्पना का निर्माण किया गया है –

प्रायः किशोरियाँ–किशोरों की अपेक्षा स्वास्थ्य के प्रति अधिक सजग होती हैं। इस उपकल्पना की जांच एकत्रित किए गए आंकड़ों के आधार पर किया गया जिसे निम्न सारिणी में प्रस्तुत किया गया है– **(टेबिल देखिये)**

$x^2 = 1.87, df - 1$

x^2, 0.01 स्तर पर सार्थक नहीं है।

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि कुल 200 उत्तरदाताओं में से 169 (84.5%) स्वास्थ्य के प्रति सजग है जो स्वस्थ रहने के लिए योग, व्यायाम एवं संतुलित आहार पर ध्यान देते है जिनमें 81 (40.5%) किशोर व 88 (44%) किशोरी हैं जब कि 31 (15.5%) ऐसे उत्तरदाता है जो स्वास्थ्य के प्रति उदासीन हैं अर्थात् वे स्वस्थ रहने के लिए कुछ नहीं करते हैं जिनमें 19 (9.5%) किशोर व 12 (6%) किशोरियाँ हैं। इस प्रकार प्रतिशत वितरण से स्पष्ट है कि किशोरियों किशोरों की अपेक्षा स्वास्थ्य के प्रति अधि सजग नहीं हैं। इस उपकल्पना की सत्यता की जांच के लिए सांख्यिकीय विधि काई–वर्ग (x^2) का प्रयोग किया गया और पाया कि (x^2) 0.01 स्तर पर सार्थक नहीं है। इस प्रकार यह उपकल्पना असत्य प्रमाणित हुई।

उपरोक्त परिणाम का संभवतः कारण यह है कि किशोर व किशोरियों को बाह्रय जगत से सम्पर्क स्थापित करने का समान अवसर प्राप्त है। वे विभिन्न लोगों से सामाजिक अंतः क्रिया करते हैं जिनसे उनका ज्ञान विस्तृत होता है। परम्परागत समाज में केवल किशोरों को ही बाह्रय जगत से सम्पर्क होता है इसलिए वहाँ किशोरों को किशोरियों से अधिक ज्ञान है जब कि बदलते परिवेश में किशोरियों की भी सामाजिक प्रक्रिया में भागीदारी बढ़ रही है। इसी कारण आज किशोरियों को किशोरों के समान भोजन के पोषक तत्वों का ज्ञान है।

निष्कर्ष एवं सुझाव –

प्रस्तुत शोध के अन्तर्गत किशोर एवं किशोरी वर्ग में स्वास्थ्य के प्रति सजगता एवं पोषक तत्वों के ज्ञान सम्बन्धी आहार को प्रमाणित करने वाले विभिन्न पहलुओं से सम्बन्धित ज्ञान स्तर को जांचने की कोशिश की गई है। प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण से प्राप्त निष्कर्षों को इस प्रकार दर्शाया गया है–

सर्वेक्षण में पाया गया कि अधिकांश उत्तरदाताओं के माताएं और पिता भी उच्च शिक्षित है। चयनित क्षेत्र में प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट पाया गया कि किशोर–किशोरियों में स्वास्थ्य के प्रति सजगता समान है। आज के प्रतियोगितावादी समाज में जहाँ सभी अपने स्वस्थ रहने के लिए स्वास्थ्य नियमों का सहारा ले रहे हैं। वहीं किशोर–किशोरी भी स्वस्थ शरीर पाने के लिए प्रयासरत रहते हैं। किशोर–किशोरियाँ अपनी आकृति नायक–नायिकाओं की तरह आदर्श शरीर पाने के लिए योग, व्यायाम, जॉगिंग, डाइटिंग और संतुलित आहार आदि पर ध्यान देते हैं।

अध्ययन में यह भी पाया गया कि किशोर

किशोरियों में 182 (91%) को भोजन के पोषक तत्वों संबंध ज्ञान है और साथ ही यह भी स्पष्टताः पाया गया कि किशोरों के किशोरियों से इस सम्बन्ध में अधिक ज्ञान नहीं है अर्थात् किशोर–किशोरियों को समान रूप से भोजन के पोषक तत्वों का ज्ञान है।

अध्ययन के परिणाम के आधार पर इसके संभवतः यह कारण है कि संचार माध्यमों टेलीविजन, रेडियो, समाचार पत्र, पत्रिकाएं द्वारा भोजन के पोषक तत्वों का महत्व समय–समय पर प्रसारित किया जाता है, जिससे किशोर–किशोरियों को इस विषय पर आवश्यक जानकारी प्राप्त हो रही है। संचार माध्यमों का प्रभाव किशोर वर्ग पर समान रूप से पड़ रहा है। इसी कारण भोजन के पोषक तत्वों की जानकारी किशोर व किशोरी दोनो को है।

अतः किशोर–किशोरियों में स्वास्थ्य के प्रति सजगता एवं भोजन में उपस्थित पोषक तत्वों की जानकारी दोनों को समान रूप से है।

किशोरावस्था एक महत्वपूर्ण अवस्था हैं इस अवस्था में होने वाले शारीरिक और मानसिक परिवर्तन अत्यन्त महत्वपूर्ण है। ये दोनों परिवर्तन एक–दूसरे पर आश्रित होते हैं। इनके व्यक्तित्व, रुचि, अभिरुचि एवं जीवन के मूल्य सबके निर्माण की आधारशिला इसी अवस्था में रखी जाती है। किशोर–किशोरी के उत्तम स्वास्थ्य के लिए आहार में पर्याप्त पोषण की आवश्यकता होती है। इसके लिए किशोर–किशोरी में यह भावना जागृत करनी चाहिए जिससे वे संतुलित आहार ग्रहण करें। किशोरावस्था में पोषक तत्वों के महत्व को भी जानना अति आवश्यक है, ताकि वे अपना स्वास्थ्य अच्छा रख सकें। स्वास्थ्य के प्रति सजगता के किशोरों एवं किशोरियों को स्वास्थ्य प्रद भोजन सम्बन्धी आदतें अपनानी चाहिए, क्योंकि गलत आदत आगे चलकर जीवन में ह्रदय रोग, मधुमेह आदि गम्भीर बिमारियो का कारण बन सकता है। अतः कहा जा सकता है कि संतुलित आहार स्वस्थ शरीर का आधार है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. कानगो, मंगला (2002), ''पोषण एवं पोषाहार'' पंचशील प्रकाशन जयपुर।
2. चेतना, 1998, हेल्थ एजूकेशन एंड डेवलपमेंट और एडोलेसेंट, चेतना परस्पेक्टिव।
3. गोपालन, सी. एण्ड एस. कौर (1992)'' वूमन एण्ड न्यूट्रीशन इन इंडिया, न्यू दिल्ली एन एण्ड आई।
4. मिश्रा, श्रीमती ऊषा एवं सिहल, सरिता, आहार एवं पोषण विज्ञान, साहित्य प्रकाशन, आगरा, संस्करण 1989, पेज नं. 258-260।
5. नेशनल फैमिली हेल्थ सर्वे (NFHS-II), 1989-99 रैपिड हाउसहोल्ड सर्वे–रिप्रोडक्टिव एण्ड चाइल्ड हेल्थ (RHS-RCH), 1989-99।
6. रश्मि, नूतन (2002) ''उच्च विद्यालय जाने वाले विद्यार्थियों के सम्पूर्ण व्यक्तित्व विकास पर पोषाहार का प्रभाव पटना के संदर्भ में, पी. एच. डी. शोध प्रबन्ध।
7. सिंह वृन्दा (2003) ''आहार नियोजन'' श्याम प्रकाशन, जयपुर।
8. बंसल, अविनाश, (2006) किशोर से युवा होने तक अग्रवाल पब्लिकेशन हाउस।
9. श्रीमती ऊषा मिश्रा, अल्का अग्रवाल, तेरहवाँ संस्करण 2014, डॉ. रीना खनूजा, तृतीय संस्करण 2011।

◈◈

Received: 05 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के शैक्षिक विचारों का मूल्यांकन एवं वर्तमान परिस्थितियों में उनकी प्रासंगिकता

– शिव प्रकाश
शोधार्थी –
शिक्षा संकाय,
कलिंगा विश्वविद्यालय, कलिंगा,
रायपुर–492101 (छत्तीसगढ़)

ई–मेल :
spvishwakarma81@gmail.com

शोध निर्देशक
– डॉ. विजय कुमार गुप्ता
एसोसिएट प्रोफेसर –
शिक्षक शिक्षा विभाग,
कलिंगा विश्वविद्यालय, कलिंगा, रायपुर –492001 (छत्तीसगढ़)

ई–मेल :
rineegupta1987@gmail.com

सारांश

आधुनिकता की दौड़ में सम्प्रति मानव का जीवन इतना जटिल एवं समस्याग्रस्त होता जा रहा है कि उसे न आत्मशक्ति मिल पा रही है और न ही संतोष। तेज गति वाली जिन्दगी में मनुष्य अपनी प्राचीन धरोहर को भूलता जा रहा है वर्तमान समय में मानव भौतिकवादी युग में अपने को ठीक ढंग से समायोजित नहीं कर पा रहा है। आज के मानव का दृष्टिकोण पूर्ण रूप से भौतिकवादी है। उसका ध्यान सदैव अपनी भौतिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने में लगा रहता है। फलतः वह अपने मन की शान्ति और अपने अन्दर के वास्तविक आनन्द को खो चुका है। आज हमें इसकी रक्षा करनी चाहिए। इन्हीं सब समस्याओं को दृष्टिगत रखते हुए इस अध्ययन में गुरूदेव टैगोर के शैक्षिक कार्यों की वर्तमान समय में उपयोगिता को ढूढ़ने का प्रयास किया गया है। श्री रवीन्द्रनाथ टैगोर शिक्षा को केवल आध्यात्मिक अथवा बौद्धिक राज की प्राप्ति ही नहीं मानते थे बल्कि वह शिक्षा को शारीरिक, आर्थिक सामाजिक मानसिक तथा आध्यात्मिक विकास हेतु आवश्यक समझते थे। इसके द्वारा मनुष्य में विश्वबन्धुत्व की भावना का विकास होता है। अतः वर्तमान समय में भी शिक्षा का यथार्थवादी दृष्टिकोण होना चाहिए जिसके अन्तर्गत केवल ज्ञानर्जन करना ही नहीं बल्कि बालक का सर्वांगीण विकास करना शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए।

मुख्य शब्द– गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर, शैक्षिक विचार, मूल्य, प्रासंगिकता।

प्रस्तावना –

पूर्ण ज्ञान की प्राप्ति के लिए मनुष्य को आत्म ज्ञान व भौतिक ज्ञान की आवश्यकता पड़ती है। ज्ञान के अन्वेषण में पहला प्रश्न यही आता है कि स्वाभाविक तथा दृश्यमान जगत की घटनाएं कैसे घटती हैं। तत्पश्चात् यह भी प्रश्न उठता है कि ये क्यों होते है, जैसा कि दर्शन शास्त्र प्रश्न करता है कि हाईड्रोजन एवं आक्सीजन के मिलने पर जल तो बनता है पर अन्य तत्वों के मिलने पर जल क्यों नहीं बनता।

दर्शन एक सम्पूर्ण ज्ञान है, जबकि शिक्षा एकांगी/तकनीकी, जीव विज्ञान, इत्यादि के क्षेत्रों में पृथक–पृथक ज्ञान है जिसका एक दूसरे से विशेष सम्बन्ध नहीं है, दर्शन ही एक ऐसा विषय है जिसकी आवश्यकता दार्शनिक क्षेत्र के अतिरिक्त सभी प्रकार के विज्ञानों में पड़ती है। ज्ञान के सभी क्षेत्रों में अन्तिम प्रश्न क्यों का है। आज के वैज्ञानिक तथा तकनीकी युग में प्रत्येक मानव के मन में एक प्रकार की अशान्ति की ज्वाला धधक रही है मनुष्य इससे मुक्ति पाना चाहता है। परन्तु यह शान्ति

केवल दर्शन ही दे सकती है, विज्ञान या तकनीकी नहीं। क्योंकि केवल दर्शन के माध्यम से ही मनुष्य यह जान सकता है कि जीवन का सत्य क्या है तथा उसे कैसे प्राप्त किया जा सकता है। प्राचीन काल से वर्तमान काल के दार्शनिकों के मन में यह पूर्ण विश्वास है कि मानव एक वृहद विश्व व्यवस्था का एक अंश है। अतः यह अनिवार्य सत्य है कि प्रत्येक शिक्षा का उद्देश्य यही होना चाहिए कि शिक्षार्थी इस वृहद सृष्टि में अपना स्थान और आत्मोन्नति का ज्ञान प्राप्त करें।

उपरोक्त उक्तियों की सत्यता एक संक्षिप्त उदाहरण से ही प्रमाणित हो जायेगी यदि हम एक ओर फास्ट एलास्टर, न्यूटन इत्यादि और दूसरी ओर बुद्ध, क्राइस्ट, सुकरात इत्यादि को देखें तो हमें तत्काल ही यह प्रतीत हो जायेगा कि वैज्ञानिकों ने किसी स्थिर सिद्धान्त की शान्ति को किसी भी प्रकार नहीं प्राप्त किया जबकि महान दार्शनिकों ने मानव तथा विश्व सृष्टि के घनिष्ट सम्बन्ध को निश्चित रूप से ज्ञात कर पूर्ण शान्ति को प्राप्त कर लिया। फास्ट तथा एलेस्टर सारे जीवन तक वैज्ञानिक गंवेषणा करते रहें, परन्तु सत्य का अन्वेषण न कर सकने के कारण, अन्त में आत्महत्या करने पर दृढ़ हो गये।

न्यूटन से भी इस सन्दर्भ में पूछने पर उन्होंने बताया कि ज्ञान रूपी समुद्र का कुछ भी अंश मैं नहीं प्राप्त कर सका। केवल मैं अभी समुद्र के किनारे बैठकर रोड़ एकत्र कर रहा हूँ। इसके विपरीत डायजेनिस से जब सम्राट अलेक्जेन्डर ने पूछा कि आप मुझसे क्या चाहते है? इसके उत्तर में डायजेनिस ने कहा कि मैं सब कुछ पा चुका हूँ केवल आप कृपा करके भगवान की दी हुई इन किरणों को रोकिये। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि वे सम्पूर्ण ज्ञान के आनन्द में मग्न थे। अतएव हम यह निर्विवाद रूप से कह सकते है कि बिना दर्शन की सहायता से कोई भी ज्ञान पूर्ण नहीं। प्रत्येक दृश्यमान घटना की एक वाह्य तथा आन्तरिक अवस्था हैं। प्रथम को प्रत्यक्ष ज्ञान दूसरे को परोक्ष ज्ञान कहते है। प्रत्यक्ष ज्ञान की विषय वस्तु विज्ञान एंव तकनीकी इत्यादि है। जब कि दर्शन परोक्ष ज्ञान की विषय वस्तु है। इन दोनों से सम्बन्ध के बिना शिक्षा अपूर्ण है। प्रत्येक मानव के जीवन का चरम तथा परम् लक्ष्य शान्ति आत्मोन्नति है। चेतन रूप से अथवा अचेतन रूप से मानव सर्वदा तथा उचित रूप से आत्मनिर्माण की ओर अग्रसर हो रहा है। अर्थात् वह प्रत्येक क्षण में स्वयं को खोज रहा है तथा स्वयं में जो आत्म शक्ति तथा क्षमता गुप्त रूप से अवस्थित है उसको प्रकट करने की तथा उसको पूर्ण रूप से प्राप्त करने की स्वाभाविक चेष्टा करता रहता है, इस गति को कार्य रूप में परिणित करने के लिए परीक्षा की आवश्यकता है। मानव केवल अन्दर से तथा वातावरण से ही पूर्ण मानवता की प्राप्ति कर सकता है। मानव का नियम सही है कि मानव क्रम विकास के उच्च से उच्चतर मार्ग पर तब तक चलता रहता है जब तक न उसे दिव्य जीवन प्राप्त हो जाये। इस उद्देश्य की प्राप्ति में शिक्षा पूर्ण रूपेण सहायता प्रदान करती है। शिक्षा दो प्रकार की होती है। प्रथम वाह्य द्वितीय आन्तरिक। मानव की प्रथम उच्चतम शिक्षा यही है कि उसमें यह भावना तथा ज्ञान जागृत हो कि वह स्वयं शरीर और जीवन नहीं है परन्तु वह मनोभव हैं साथ ही साथ शिक्षा का उद्देश्य यही होना चाहिए कि उस मन को इस प्रकार शिक्षित करना जिससे मन को क्रमोन्नति द्वारा मानव पूर्ण मनुष्यत्व या पूर्ण मानवता की प्राप्ति हो अतएव हमारे सामने दो प्रकार की शिक्षा अनिवार्य है। प्रथम योग द्वारा इन्द्रियों पर नियन्त्रण तथा क्षमता प्राप्त करना और द्वितीय नैतिक शिक्षा।

वर्तमान अध्ययन की आवश्यकता –

अतीत वर्तमान को मजबूत करता है। किसी भी देश का अतीत उसकी भावी प्रेरणा एवं वर्तमान का मूल स्त्रोत है। अति प्राचीन काल से भारत सिद्ध पुरुषों एवं युग निर्माताओं का देश रहा है। श्री टैगोर भी उनमें से एक थे। जिन्हें नवयुग की नवचेतना का मूर्तिमान पुरुश माना जाता है।

आधुनिकता की दौड़ में सम्प्रति मानव का जीवन इतना जटिल एवं समस्याग्रस्त होता जा रहा है कि उसे न आत्मशक्ति मिल पा रही है और न ही संतोष। तेज गति वाली जिन्दगी में मनुष्य अपनी प्राचीन धरोहर को भूलता जा रहा है वर्तमान समय में मानव भौतिकवादी युग में अपने को ठीक ढंग से समायोजित नहीं कर पा रहा है। आज के मानव का दृष्टिकोण पूर्ण रूप से भौतिकवादी है। उसका ध्यान सदैव अपनी भौतिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने में लगा रहता है। फलतः वह अपने मन की शान्ति और अपने अन्दर के वास्तविक आनन्द को खो चुका है। आज हमें इसकी रक्षा करनी चाहिए। इन्हीं सब समस्याओं को दृष्टिगत रखते हुए इस अध्ययन में गुरूदेव टैगोर के शैक्षिक कार्यों की वर्तमान समय में उपयोगिता को ढूढ़ने का प्रयास किया गया है।

समस्या कथन –

प्रस्तुत समस्या का शीर्षक ''गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के शैक्षिक विचारों का मूल्यांकन एवं वर्तमान परिस्थितियों में उनकी प्रासंगिकता'' है।

उद्देश्य –

प्रस्तुत अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं –

1. गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के दार्शनिक, सामाजिक, प्रजातान्त्रिक, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय विचारों का अध्ययन करना।

2. गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के शिक्षा दर्शन–शिक्षा का अर्थ, उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षा–विधियाँ, गुरू–शिष्य सम्बन्ध आदि सम्बन्धी विचारों से अवगत होना।

3. टैगोर की धार्मिक शिक्षा, जन शिक्षा, स्त्री शिक्षा, ग्रामीण शिक्षा, आदि के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करना।

4. गुरूदेव द्वारा प्रतिपादित मानव विकास सम्बन्धी विचारों का अध्ययन करना।

5. वर्तमान समय में गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के शैक्षिक विचारों की उपयोगिता का निष्पक्ष मूल्यांकन करना।

गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के शैक्षिक विचारों का मूल्यांकन एवं वर्तमान परिस्थितियों में उनकी प्रांसगिकता –

श्री गुरुदेव रवीन्द्रनाथ जी अपने शिक्षा दर्शन में मानव की आध्यात्मिक उन्नति पर बहुत अधिक बल दिया है। वे भारतीय प्रकृतिवाद के प्रणेता कहे जा सकते हैं, परन्तु भौतिकवादी प्रकृतिवाद की लीक को छोड़ कर उन्होंने आध्यात्मिक प्रकृतिवाद का आश्रय लिया। उनके विचारों में तात्कालिक कृत्रिम सामाजिक परम्पराओं के प्रति एक प्रखर प्रतिक्रिया दिखाई देती है। उन्होंने लिखा है ''समन्वयवाद को शिक्षा जगत के समक्ष एक नया अध्याय बनाया जिसकी सराहना विश्व स्तर पर की जाती है, यही श्री टैगोर की सबसे बड़ी देन भी मानी जाती है। उन्होंने अपने इस नये सिद्धान्त के आधार पर समूचे विश्व में एक नया रूप लिया। यह था भौतिकता आध्यात्मिक जीवन के समन्वय पूर्व पश्चिम के बीच समन्वय के ये विचार आज विश्व भर में चर्चित हैं। श्री टैगोर की रचना गीतांजलि की व्याति के साथ–साथ उनके विश्व बोध दर्शन का अनुसरण शिक्षा जगत में बखूबी किया जा रहा है। यही कारण है कि उनके द्वारा स्थापित विश्व भारती के आदर्शों का अनुसरण आज पूरे भारत की शिक्षा संस्थायें कर रही है।

श्री टैगोर जी ''विश्व–बन्धुत्व'' को आध्यामिक एकता तथा विश्व बन्धुत्व के रूप में प्रतिपादित किया। इसके साथ–साथ उन्हें देशभक्ति का महत्व ज्ञात था गुरुदेव देश प्रेम के महत्व को स्वीकार करते थे। उनकी नजर में देश प्रेम का अर्थ था अपने देश व उस देश व उसकी परम्परा से तादात्म्य स्थापित करना। गुरूदेव का अपने पूर्वजों की छोड़ी गयी सांस्कृतिक थाती के प्रति अपूर्व सम्मान था। वे मातृभूमि का अपमान कत्तई बर्दास्त नहीं करते थे। उनकी देशभक्ति में जाति, धार्मिक, कटुता तथा राजनीति अशान्ति के लिए कोई स्थान नहीं था। अपने इसी दृष्टिकोण के कारण ही उन्होंने महात्मा गाँधी जी के असहयोग आन्दोलन का समर्थन नहीं किया इसी विचार के कारण गुरुदेव ने भारत में 'कम्यूनल अवार्ड' लागू किये जाने का विरोध किया।

श्री टैगोर ने सामाजिक पुनः निर्माण की तरफ बल दिया। गुरूदेव की मान्यता थी कि हमारे पूर्वजों ने राज्य के बजाय समाज को सशक्त बनाया था।

उन्होंने शिक्षा का आधार राष्ट्रीय तथा मातृभाषा में तैयार करने का विचार दिया तथा अन्तर्राष्ट्रीय भाषा को भी अपनाया जाये इस दिशा में कार्य किया। उन्होंने पाठ्यक्रम के सन्दर्भ में इतिहास, भूगोल, विज्ञान एवं साहित्य के अध्ययन के साथ–साथ नृत्य, संगीत, कला, अभिनय, भ्रमण, बागवानी, समाजसेवा पर बल दिया। साथ ही स्वशासन, खेलकूद, व्यायाम तथा गृह प्रबन्ध जैसी क्रियायें भी सम्मिलित की।

शिक्षण विधि के संदर्भ में श्री टैगोर ने क्रिया द्वारा शिक्षा, भ्रमण द्वारा सीखना, स्व–प्रयास एवं स्वाध्याय द्वारा शिक्षा, वाद–विवाद एवं प्रश्नोत्तर विधि, प्रत्यक्ष अनुभव विधि आदि का सहारा लिया था।

श्री टैगोर जो शिक्षा में अनुशासन को नैतिक विकास के लिए आवश्यक मानते थे लेकिन वे वाह्य अनुशासन के एवं दमनात्मक अनुशासन के घोर विरोधी थे। वे अनुशासन को ही उपयुक्त मानते थे। उनका मानना था कि बच्चे स्वभाव से अनुशासनहीन नहीं होते बल्कि जब उनकी स्वतंत्र क्रियाओं में बाधा उत्पन्न होती है तब वे अनुशासनहीन हो जाते है।

श्री टैगोर ने जन–शिक्षा, स्त्री–शिक्षा, धार्मिक–शिक्षा एवं राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा पर विशेष बल दिया था।

शिक्षा के क्षेत्र में उनका सबसे बड़ा योगदान ''विश्व–भारती'' विद्यालय हैं। जहाँ स्नातक, स्नातकोत्तर, शोध स्तर तक की शिक्षा दी जाती है। जहाँ उन्होंने आदर्शों का अनुसरण करते हुए पूर्वी एवं पाश्चात्य सभ्यता में सामन्जस्य स्थापित किया है। उन्होंने जान ड्यूवी, फ्रोवेल तथा पेस्तालॉजी की भाँति अपने विचारों

को व्यवहार रूप में क्रियान्वित किया। विश्व भारती के स्वतंत्र वातावरण में स्वक्रिया स्वाध्याय प्रयोग तथा दृश्य श्रवण सामग्री पर बल दिया जाता है। पाठ्यक्रम का आधार पूर्व अनुभव क्रियाशीलता तथा जीवन से सम्बन्धित यथार्थवादी, उपयोगी तथा जीवन के सभी पक्षों पर आधारित ज्ञान को बनाया गया। सौन्दर्य बोध की शिक्षा के लिए ललित कलाओं जैसे संगीत, नृत्य, कविता, अभिनय, तथा चित्र कला के लिए ''कला भवन'' चलाया गया। श्री टैगोर की शिक्षा तीन वादों मानवतावाद, आदर्शवाद एवं प्रकृतिवाद का समन्वित रूप थी। वास्तव में उन्होंने भारतीय शिक्षा और भारत वासियों के उत्थान के लिए काफी कुछ किया। शिक्षा के क्षेत्र में टैगोर जी के योगदान को डॉ. मुखर्जी ने इस प्रकार स्पष्ट किया है– ''श्री टैगोर आधुनिक भारत के शैक्षिक पुर्नस्थान के सबसे बड़े पैगम्बर थे। उन्होंने अपने देश के सामने शिक्षा के सर्वोच्च आदर्शों को स्थापित रखने के लिए निरन्तर संघर्ष किया। उन्होंने अपनी शिक्षा संस्थाओं में शैक्षिक प्रयोग किये, जिन्होंने उनको आदर्श जीवन का प्रतीक बना दिया।

टैगोर ने शिक्षा के नैतिक तथा आध्यात्मिक उद्देश्य को महत्व प्रदान किया है। इस आधार पर कहा जा सकता है कि विद्यार्थियों में आत्मनिर्णय और आत्मानुशासन की क्षमता होनी चाहिए। यह गुण शिक्षा के द्वारा ही विकसित किये जा सकते है। शिक्षा की प्रक्रिया जीवन से परिपूर्ण एवं व्यवहारिक होनी चाहिए। शिक्षा की प्रक्रिया अपरिचित से परिचित की ओर, समीप से दूर की और तथा सामान्य से विशिष्ट की ओर ले जाने वाली होनी चाहिए। शिक्षा की प्रक्रिया में स्वतन्त्र प्रयत्न एवं चिन्तन होना चाहिए था साथ ही इसमें क्रियाशीलता, खेल रचना तथा सृजन, आनन्द जिज्ञासा और रूचि का भी प्रयोग होना चाहिए। इन सभी तथ्यों को अपनाने से शिक्षण विधि प्रभावशाली हो सकती है।

वर्तमान समय में विद्यार्थियों में पाश्चात्य परम्पराओं के अन्धानुकरण करने की प्रवृत्ति बलवती होती जा रही हैं ऐसे समय में टैगोर के शिक्षार्थी से सम्बन्धित विचारों को अपनाना चाहिए। उनका मत था कि बालाकं को अपने शारीरिक तथा मानसिक विकास के साथ ही नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास हेतु सदैव प्रयत्नशील रहना चाहिए। पाठ्यक्रम के सम्बन्ध में रवीन्द्रनाथ टैगोर का विचार था कि पाठ्यक्रम जीवन के अनुभवों से सम्बन्धित होना चाहिए। उनके अनुसार पाठ्यक्रम में कुछ सीमित क्रियाओं को स्थान नहीं देना चाहिए वरन् इसके अन्तर्गत अनेक क्रियायें सम्मिलित होनी चाहिए। पाठ्यक्रम का चयन राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय आधारो पर होना चाहिए। जिससे एकता एवं अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग को बनाये रखा जा सके। इसके अन्तर्गत प्रकृति और मनुष्य की शिक्षा में सन्तुलन स्थापित किया जाना चाहिए। इस प्रकार आज विद्यालय में टैगोर के क्रिया–प्रधान पाठ्यक्रम की व्यवस्था करनी चाहिए। शिक्षा द्वारा बालकों में उच्चकोटि की धार्मिक भावना को विकसित किया जाना चाहिए जिससे उनमें मानवता का कल्याण करने की क्षमता का विकास हो सके। शिक्षा के द्वारा छात्रों को 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम' जैसे मूल्यों का साक्षात्कार कराना चाहिए। धार्मिक शिक्षा के प्रति गुरूदेव का दृष्टिकोण वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ग्रहणीय है। टेगोर ने मानव सेवा को सबसे बड़ा धर्म माना है। आज भारत में धर्म को इसी रूप में स्वीकार करना चाहिए। राष्ट्रीय शिक्षा के अन्तर्गत देशवासियों के सचिव मूल्यों, परम्पराओं, प्रथाओं तथा आदर्शों को स्वाभाविक रूप से विकसित करना चाहिये। राष्ट्रीयता के साथ ही विश्व–कल्याण को भी महत्व दिया जाना चाहिए।

रवीन्द्रनाथ टैगोर के व्यवसायिक शिक्षा सम्बन्धी विचार अत्यन्त व्यापक थे। आज भारत में उनके व्यावसायिक विचारों को लागू करने की आवश्यकता है। वर्तमान समय में अति तीव्र गति से बढ़ती जनसंख्या ने बड़ी संख्या में बेरोजगार उत्पन्नकर दिये है। इसके लिये विद्यालयों में हस्तकौशल, कृषि तथा उद्योग–धन्धों की शिक्षा जानी चाहिए। शिक्षा की व्यवस्था प्रारम्भिक स्तर पर प्रकृति के शान्त, स्थान पर होने चाहिए। बालकों को प्रकृति के सम्पर्क में रहकर शिक्षा प्रदान की जानी चाहिये क्योंकि प्रकृति से घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करने से विद्यार्थियों में आनन्दानुभूति होती है। बालकों को शिक्षा स्वतन्त्र प्रयासों के द्वारा ही प्राप्त की जानी चाहिए। शिक्षा का माध्यम मातृभाषा होनी चाहिये क्योंकि इसके द्वारा सम्पूर्ण राष्ट्र को शिक्षित किया जा सकता है। मातृभाषा के माध्य से ही जनसाधारण को शिक्षित किया जा सकता है। अतएव शिक्षा को मातृभाषा के माध्यम द्वारा ही प्रदान करके उसे सहज एवं सरल बनाना चाहिए तथा साथ ही शिक्षा प्राप्त करने का स्थान सुन्दर, सामाजिक तथा प्राकृतिक रूप के अनुकूल वातावरण में होना चाहिए।

टैगोर स्त्री–शिक्षा के प्रबल समर्थक थे उनका कहना था कि प्राथमिक तथा उच्च शिक्षा स्त्री तथा पुरूषों के लिये समान होना चाहिए और माध्यामिक स्तर पर बालिकाओं के लिये गृह–विज्ञान अनिवार्य विषय होना चाहिए। हमारे देश में आज तक गुरुदेव के अनुसार शिक्षा

की व्यवस्था होती रही है परन्तु वर्तमान समय में स्त्रियों तथा पुरुषों की शिक्षा में किसी भी स्तर परभेदभाव करने का विरोध किया जा रहा है। टैगोर के अनुसार स्त्री शिक्षा का स्तर उसी प्रकार उठाया जाना चाहिये, जिस प्रकार पाश्चात्य देशों में उठाया गया है। इसे लिये उन्होंने स्त्रियों के लिये पृथक विद्यालय खोलने का सुझाव दिया है।

टैगोर के अनुसार गांवों के पुर्ननिर्माण हेतु ग्रामीण शिक्षा की व्यवस्था करनी चाहिए ग्रामवासियों को कृषि, हस्तकौशल, स्वास्थ्य आदि की शिक्षा भी प्रदान की जाना चाहिए। उनका सुझाव था कि ग्रामीण शिक्षा के लिये विभिन्न प्रकार की समितियों को गठित किया जाना चाहिए और ग्रामों में सभी स्तरों की शिक्षा की व्यवस्था होनी चाहिए। टैगोर के अनुसार ग्राम के समग्र जीवन को समझना एवं जानना चाहिए। उनका मानना था कि ग्राम की समस्याओं को विच्छन्न तथा पृथक ढंग से विचार करना ठीक नहीं अतः उन पर समग्र दृष्टि से विचार करना चाहिए। गाँवों की शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, कला समाज तथा संस्कृति वहाँ के जीवन के परस्पर–सम्बद्ध विभिन्न पहलू होते है तथा इन समस्त पहलुओं से सम्बन्धित समस्याओं के समाधान में गहन चिन्तन करना चाहिए तथा इन समस्याओं का समाधन शिक्षा तथा अभिज्ञता द्वारा ही सम्भव है। समस्याओं का संतोषजनक समाधान मिल जाये तो उसे ग्रामवासियों के समक्ष प्रस्तुत करना चाहिए। टैगोर के अनुसार यदि व्यक्ति तथा समाज उन्हें प्रसन्नता के साथ ग्रहण कर सके, तभी ग्राम सेवा सार्थक है। आत्मशक्ति तथा सहकारिता ही ग्राम सेवा का आधार होना चाहिए। टैगोर का यह मानना था कि ग्रामीण विद्यालयों में पुस्तकालयों की भी व्यवस्था होनी चाहिए अध्ययन कार्य में सुविधा हो सके।

टैगोर भारत वर्ष के पिछड़ेपन का मूल कारण भारतीय जनता की अशिक्षा को मानते थे। अतः उनके अनुसार जनसाधारण की शिक्षा की समुचित व्यवस्था की जानी चाहिए और इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु अनेक विद्यालयों की स्थापना भी करनी चाहिए तथा जनपद में शिक्षा प्रदान करने का माध्यम मातृभाषा होनी चाहिए। टैगोर के अनुसार जन शिक्षा समाज के सहयोग से दी जानी चाहिए और यह शिक्षा पुस्तकीय न होकर व्यवहारिक होनी चाहिए तथा इसकी व्यवस्था निःशुल्क होनी चाहिए क्योंकि जब इस प्रकार की शिक्षा जन साधारण को दी जायेगी तो हमारा देश तथा व्यक्ति दोनों का ही कल्याण होगा।

रवीन्द्रनाथ टैगोर के अनुशासन सम्बन्धी विचार भी अत्यन्त उच्चकोटि के है। वह आत्मानुशासन को ही सच्चा अनुशासन मानते थे। इस प्रकार के अनुशासन की स्थापना प्रेम, सहानुभूति, सद्प्रेरणा तथा सद्भावना के आधार पर करनी चाहिए। टैगोर के अनुसार विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों का वातावरा ऐसा होना चाहिए जिससे कि बालकों में अनुशासनहीनता की भावना उत्पन्न ही न हो पाये। अतः शिक्षा प्रणाली सहयोग, मित्रता, सहकारिता पर आधारित होनी चाहिए तथा शिक्षक को स्वयं भी पूर्ण अनुशासित होना चाहिए जिससे वह बालकों में अनुशासन की भावना को विकसित कर सके।

निष्कर्ष–

श्री रवीन्द्रनाथ टैगोर शिक्षा को केवल आध्यात्मिक अथवा बौद्धिक राज की प्राप्ति ही नही मानते थे बल्कि वह शिक्षा को शारीरिक, आर्थिक सामाजिक मानसिक तथा आध्यात्मिक विकास हेतु आवश्यक समझते थे। इसके द्वारा मनुष्य में विश्वबन्धुत्व की भावना का विकास होता है। अतः वर्तमान समय में भी शिक्षा का यथार्थवादी दृष्टिकोण होना चाहिए जिसके अन्तर्गत केवल ज्ञानर्जन करना ही नहीं बल्कि बालक का सर्वांगीण विकास करना शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अल्तेकर (1979) ''प्राचीन भारतीय शिक्षण पद्धति'' मनोहर प्रकाशन, वाराणसी।
2. चौहान, नरेन्द्र सिंह (1981) – ''व्यवहारपरख शोध के वैज्ञानिक आयाम'' श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा।
3. घोष, शिशिर कुमार (2002) – ''रवीन्द्रनाथ ठाकुर'', साहित्य अकादमी, रवीन्द्र भवन 35 फिरोजाशाह मार्ग, नई दिल्ली।
4. जायसवाल, सीताराम – ''विश्व के कुछ महान शिक्षक'', न्यू बिल्डिंग्स अमीनाबाद, लखनऊ संस्करण।
5. पाण्डेय, राम सकल (1988) – ''शिक्षा समीक्षा'' प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
6. राय, क्षितीश (1961) – ''गुरुदेव रवीन्द्रनाथ'' पुराना सचिवालय दिल्ली
7. सिंह, डॉ. बी. एन. (1997) – ''भारतीय सामाजिक चिन्तन,'' विवेक प्रकाशन, जवाहर, नगर दिल्ली।
8. सैयदेन, के. जी. (1962) – ''भारतीय शैक्षणिक विचारधारा'', मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ।
9. शिवनाथ (1973) – ''रवीन्द्रनाथ साहित्य की समीक्षा'' हिन्दी समिति, उत्तर प्रदेश शासन, लखनऊ।
10. सिंह, डॉ. सुरेन्द्र (1971) – ''सामाजिक अनुसंधान'' उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ एकादमी, लखनऊ।
11. टैगोर, रवीन्द्रनाथ (2000) – ''गीतांजलि' साहित्य सृष्टि'' दिल्ली संस्करण।

◈◈

RNI : UPMUL00620/24/1/2014-TC ISSN : 2394-4366

Received: 05 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

महिला सशक्तिकरण में स्वयं सहायता समूहों की भूमिका : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

– डॉ. सीमा आर्य
एसोसिएट प्रोफेसर –
समाजशास्त्र विभाग,
डी. ए–वी. कॉलेज, कानपुर – 208001 (उत्तर प्रदेश)

ई–मेल :
seemagangola14@gmail.com

रजनी शुक्ला
शोधार्थिनी
समाजशास्त्र विभाग,
डी. ए–वी. कॉलेज, कानपुर – 208001 (उत्तर प्रदेश)

ई–मेल :
shuklarajni40@gmail.com

शोध सार

महिला सशक्तिकरण का तात्पर्य महिलाओं के सर्वांगीण विकास से है, जिसमें महिलाओ के जीवन के सभी क्षेत्रों जैसे – सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि में सुदृढ़ता आ सके। अर्थात् महिला सशक्तिकरण का वास्तविक अर्थ तभी सार्थक होगा जब महिलाएँ आर्थिक रूप से सबल होकर अपने पैरों पर खड़ी हो सकेंगी। ग्रामीण महिलाओं को स्वावलम्बी और आत्मनिर्भर बनाने में स्वयं सहायता समूह एक अहम भूमिका निभा रहे हैं। महिला स्वयं सहायता समूह एक अनौपचारिक संघ के रूप में कार्य करता है। सामान्यतः स्वयं सहायता समूह एक ही सामाजिक, आर्थिक पृष्ठभूमि से आने वाले लोगों का ऐसा स्वैच्छिक संगठन है जो अपनी रहन–सहन की परिस्थितियों में सुधार करने के लिए स्वेच्छा से एक साथ आते हैं। जिसके सदस्य एक–दूसरे के सहयोग के माध्यम से अपनी साझा समस्याओं का समाधान करते हैं। समूहों के कार्य के माध्यम से लघु उद्योगों को बढ़ावा मिलता है, जिसके द्वारा महिलाएँ इन समूह कार्य के माध्यम से अपनी छोटी–छोटी बचत कर आत्मनिर्भर बनती हैं। सामाजिक आर्थिक और स्वयं के जीवन को सुदृढ. बनाने में स्वयं सहायता समूहों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। प्रस्तुत लेख ग्रामीण महिलाओं के विकास एवं सशक्तिकरण में स्वयं सहायता समूहों की भूमिका के समाजशास्त्रीय विश्लेषण का एक प्रयास है।

प्रमुख शब्द : महिला सशक्तिकरण, स्वावलम्बन, विकास, सामाजिक, आत्मनिर्भरता।

प्रस्तावना–

महिलाएँ हमारे उज्जवल समाज के विकास में कई 'सुदृढ़ एवं रचनात्मक' भूमिकाएँ निभाती हैं, जैसे– परिवार की उचित देख–भाल, कृषि एवं पशु–पालन सम्बन्धी कार्य, उद्यमी, नर्स और शिक्षा प्रदाता इत्यादि। अतः किसी भी राष्ट्र का विकास तभी संभव है जब वहाँ की महिलाएँ आत्मनिर्भर और विकसित होंगी। विकास से हमारा तात्पर्य यह होना चाहिए, जिसमें कि समस्त लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति करने में उन्हें विशेष अवसर प्राप्त हो सके। प्रत्येक व्यक्ति आत्मनिर्भर हो तथा अपनी समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति करने में स्वयं सक्षम हो तथा अपने जीवन को बेहतर बना सके, वह रोजगारविहीन न हो। किसी भी महिला का आत्मनिर्भर न होना उस परिवार, समाज तथा राष्ट्र के विकास में एक बाधा है। अतः दुनिया की आधी आबादी होने के बाद भी महिलाओं का अपने मूल अधिकारों से दूर होना निर्णय प्रक्रिया में भागीदारी न प्राप्त होना

एंव स्वावलम्बन की कमी होना उनकी अपनी प्रगति में बाधा के साथ ही देश एवं समाज के टिकाऊ विकास के लिए बडी समस्या का विषय है। समाज की प्रत्येक महिला का सामाजिक, आर्थिक रूप से सशक्त होना ही उस समाज के विकास व आत्मनिरर्भता के स्तर को तय करता है, साथ ही भविष्य के विकास को सुरक्षित एवं संरक्षित रखता है।

महिलाओं की आबादी भारत की कुल आबादी का लगभग 49 प्रतिशत है। इस प्रकार महिलाएँ न केवल आधी आबादी का प्रतिनिधित्व करती हैं अपितु शेष आधी आबादी की वृद्धि एवं विकास में महत्वपूर्ण योगदान भी देती हैं। महिला सशक्तिकरण के प्रमुख आधार तत्व इस प्रकार हैं, जिनके द्वारा ही महिलाओं की स्थिति मे सुधार सम्भव हो रहा है –

☛ प्रारम्भिक शिक्षा तथा उच्च शिक्षा को बढ़ावा देना। ☛ स्वास्थ्य। ☛ कानूनी संरक्षण। ☛ आर्थिक एंव राजनीतिक गतिविधियों में भागीदारी। ☛ निर्णय प्रक्रिया में भागीदारी। ☛ जागरुकता।

इस प्रकार ग्रामीण महिलाएँ सशक्तिकरण के इन आधारभूत तत्वों के द्वारा सदियों से गरीबी, अज्ञानता, अंध–विश्वास एवं घुटनभरी परम्पराओं तथा रीतिरिवाजों के वातावरण व मजबूरी भरे जीवन से स्वतंत्र होकर स्वयं व समाज का विकास करने सक्षम हो रही हैं।

महिला सशक्तिकरण –

महिला सशक्तिकरण का अभिप्राय महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक रूप से शक्ति सम्पन्न बनाना है। उन्हें पुरुषों के बराबर वैधानिक, राजनैतिक, शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में उनके परिवार, समुदाय, समाज एवं राष्ट्र की सांस्कृतिक पृष्ठ–भूमि में निर्णय लेने की स्वतंत्रता से है। इस प्रकार महिला सशक्तिकरण का मुख्य उद्देश्य स्त्री–पुरुष के बीच भेदभाव को कम करना, उनमें समानता, स्वतंत्रता तथा आत्मनिर्भरता की भावना का विकास करना है।

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 8 मार्च, 1975 में अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस की शुरुआत की गई, तब से विश्व में महिला सशक्तिकरण एक जागरुकता अभियान के रूप में आरम्भ हो गया। 2001 का वर्ष महिला सशक्तिकरण वर्ष के रूप में मनाया गया। यह सरकारी तथा गैर–सरकारी प्रयत्नों का ही परिणाम है कि महिलाएँ आज आत्मविश्वास व साहस के साथ आगे बढ रही हैं। स्वतंत्रता के पश्चात से अब तक महिला कल्याण से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार की योजनाएँ एवं नीतियाँ केन्द्र एवं राज्य सरकारों द्वारा संचालित की जाती रही हैं ताकि महिला सशक्तिकरण के उद्देश्य को सम्पूर्णता से प्राप्त किया जा सके।

महिला सशक्तिकरण से अभिप्राय महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक एवं राजनीतिक स्तर पर आत्मनिर्भर कर सशक्त करने से है। सशक्तिकरण से आशय केवल शक्ति का अधिग्रहण नहीं है, वरन् यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से महिलाओं में इतनी जागरुकता उत्पन्न की जा सके कि वे स्वावलम्बी बनकर सामाजिक, आर्थिक संसाधनों पर नियंत्रण प्राप्त कर सकें। महिला सशक्तिकरण के द्वारा महिलाओं को आर्थिक रूप से सुदृढ़ बनाया जाए तथा वे अपने अधिकार, सम्मान एवं योग्यता का सही प्रयोग कर विकास की ओर अग्रसर हो सके। अतः महिला सशक्तिकरण की राष्ट्रीय नीति का उद्देश्य महिलाओं की प्रगति, विकास एवं आत्मशक्ति को सुनिश्चित करना है। महिलाओं के सशक्तिकरण के लिये केन्द्रीय स्तर पर महिला एवं बाल विकास विभाग मंत्रालय का गठन किया गया है। महिला तथा बाल विकास विभाग की स्थापना वर्ष 1985 में मानव संसाधन विकास मंत्रालय के एक अंग के रूप में की गई एवं 30 जनवरी, 2006 से इस विभाग को मंत्रालय का दर्जा दे दिया गया। इस मंत्रालय का प्रमुख उद्देश्य महिलाओं तथा बच्चों के समग्र विकास को बढ़ावा देना था। इसी प्रकार समय–समय पर वैश्विक स्तर से लेकर स्थानीय स्तर तक अनेक संस्थायें एवं संगठन महिलाओं के सशक्तिकरण एवं उनसे जुड़े विभिन्न मुद्दों पर सक्रियता से काम कर रहे हैं।

महात्मा गाँधी के अनुसार– ''हमारा सर्वप्रथम प्रयास ज्यादा से ज्यादा महिलाओं को उनकी वर्तमान स्थिति के लिए जागरुक करना होना चाहिए''। डॉ. अरुण कुमार सिंह के अनुसार– ''महिला सशक्तिकरण का अर्थ महिलाओं को शक्ति सम्पन्न युक्त बनाना है जिससे वह अपने जीवन को उचित व व्यवस्थित तरीके से व्यतीत करने में स्वयं सक्षम हो सके''। स्वामी विवेकानन्द ने भी कहा कि देश के विकास के लिए हमे भारत की महिलाओं को सशक्त बनाना होगा। महिलाओं की स्थिति के सुधार के बिना सम्पूर्ण विश्व का कल्याण नहीं हो सकता। जब महिला एक कदम उठाती है तो परिवार के साथ ही गाँव और राष्ट्र विकास की ओर बढ़ता है।

इस प्रकार महिला सशक्तिकरण से तात्पर्य महिलाओं में आत्मनिर्भरता का विकास करना है। जिसके माध्यम से महिलाओं को समाज में स्वतंत्रता, समानता का

अनुभव प्राप्त हो सके।

स्वयं सहायता समूह –

स्वयं सहायता समूह सामूहिक सामाजिक और आर्थिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए बनाए गए सामान्य हितों वाले लोगों का स्वैच्छिक संघ है। ये समूह सामूहिक हित तथा लाभ के लिए कार्य करते हैं। इन समूहों में सामान्यतः 15–20 महिलाएँ शामिल होती हैं। भारत में 90 प्रतिशत से अधिक समूह महिलाओं द्वारा बनाए जाते हैं। स्वयं सहायता समूह का प्रारम्भिक संचालन सदस्यों से बचत एकत्र करनें के साथ शुरू होता है। इस समूहों का मुख्य उददेश्य महिलाओं में बचत करने की आदत का विकास करना होता है। इन समूहों द्वारा जरूरतमंद सदस्यों को समय पर ऋण प्रदान किया जाता है। स्वयं सहायता समूह के मूल सिद्वांत में समूह दृष्टिकोण, आपसी विश्वास, संगठन एकजुटता, मितव्ययिता की भावना, माँग आधारित ऋण, कौशल प्रशिक्षण क्षमता निर्माण और सशक्तिकरण है। स्वयं सहायता समूह गरीब लोगों के माध्यम से अपनें स्वयं के व्यवसाय या रोजगार के लिए एक छोटी राशि का ऋण प्रदान करते हैं।

☛ यूनिसेफ –''स्वयं सहायता समूह अपनी आवश्यकता पूर्ति तथा समस्या समाधान के लिए सामूहिक रूप से प्रयास करने के एक विशिष्ट साधन के रूप में कार्य करता है।''

☛ चिन्मय तपोवन ट्रस्ट –''स्वयं सहायता समूह ग्रामीण गरीब लोगो का एक बैंक है जो एक सूक्ष्म वित्त के रूप में चलाये जाते हैं।''

☛ कटार सिंह और राजी गैन के अनुसार– ''स्वयं सहायता समूह एक स्वैच्छिक संगठन के रूप में भारत में कार्य करता है जिसमें सदस्य किसी सामूहिक उददेश्य की प्राप्ति करने के लक्ष्य से एकत्रित होते हैं।''

☛ अम्बेडकर हस्तशिल्प विकास योजना के अनुसार –''स्वयं सहायता समूह एक ऐसा सामान पृष्ठभूमि रखने वाले लोगों का समूह है जिसमें कम से कम दस शिल्पी, जो कि एक व्यवसाय में लगे होते हैं जो स्वेच्छा से सामूहिक संस्कृति में आने के लिए तैयार हो और नियमानुसार नियमित रूप से बचत करके सामूहिक कोष का निर्माण करते हैं। इस सामूहिक कोष व अन्य अनुदान और मदद से वह अपने हस्तशिल्प का विकास करने का सफल प्रयास करते हैं।''

राष्ट्रीय ग्रामीण आजीाविका मिशन के अन्तर्गत महिलाओं को रोजगार देने और आत्मनिर्भर बनाने के लिए स्वयं सहायता समूह की योजना एक महत्वपूर्ण कार्य कर रही है। समूहों के कार्य के माध्यम से लघु उद्योगों को बढ़ावा मिल रहा है जिसके माध्यम से महिलाएं इन समूह कार्य के माध्यम से अपनी छोटी–छोटी बचत कर आत्मनिर्भर बन रही हैं। स्वयं सहायता समूह जितना ही छोटे आकार का होता है उतना ही वह समूह तीव्र गति से विकास करने में सक्षम भी होता है।

सरकार द्वारा लगातार वो ही विशेष स्थितियाँ तथा परिस्थितियाँ बनायी जाती रही हैं जिससे ग्रामीण महिलाओं के विकास व उनको आगे बढ़ने के लिए अवसर प्राप्त हो सके। सतत् विकास लक्ष्य 5– के द्वारा महिला–पुरुष समानता को प्राप्त करने और सभी महिलाओं तथा लड़कियों को सशक्त बनाने का लक्ष्य रखा गया। भारत की नौवी पंचवर्षीय योजना (1997–2002) के दौरान ही स्वयं सहायता समूहों को जमीनी स्तर पर विकासात्मक योजनाओं के कार्यान्वयन मे उपयोग में लाया गया।

महात्मा गांधी जी के आत्मनिर्भर भारत के निर्माण में ग्राम स्वराज का सन्दर्भ यही था कि जब प्रत्येक गाँव अपनी जरूरतो को पूरा करने में स्वावलम्बी होगा तभी वहाँ सच्चा ग्राम स्वराज स्थापित हो सकता है। गांधी जी ने ग्रामों की उन्नति के लिए कुटीर उद्योगों की तरक्की पर विशेष रूप से बल दिया।

स्वयं सहायता समूह गरीब महिलाओं का समूह है जो स्वयं अपनी मदद करने में सक्षम होती है। यह समूह एक समान सामाजिक, आर्थिक पृष्ठभूमि से आयी महिलाओं का समूह होता है जो नियमित रूप से थोड़ी–थोड़ी बचत करते हैं एवं अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति ठीक ढंग से करना सीखते हैं ।

वर्ष 1992–93 में बांग्लादेश में लघुवित्त सिद्धांत के जनक अर्थशास्त्र के प्रोफेसर श्री मोहम्मद यूनुस के द्वारा इस विचार को रखा गया। मोहम्मद यूनुस के द्वारा बांग्लादेश में एक छोटे से गाँव में 4–5 लोगो के समूह के द्वारा इसकी शुरुआत की गई और एक निश्चित बचत के द्वारा उन्हें बहुत सफलता भी मिली। जिसके बाद स्वयं सहायता समूह लघुवित्त का विकास अन्य देशों में एक व्यवस्था के रूप में होने लगा। वर्तमान में राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन के अन्तर्गत यह व्यवस्था भारत में ग्रामीण महिलाओं को आत्मनिर्भर तथा सशक्त बनाने के लिए स्वयं सहायता समूह योजना के रूप में महत्वपूर्ण कार्य कर रही है।

स्वयं सहायता समूह लघु वित्त आधारित ऐसे समूह हैं, जिसमें महिलाएं किसी भी प्रकार की आर्थिक –

सामाजिक समस्या का समाधान अपने समूह के निर्णयों के द्वारा दूर करने में स्वयं सक्षम होती हैं। भारत में आर्थिक उदारीकरण (1991–92) के दौरान स्वयं सहायता समूहों को विशेष रूप से प्रोत्साहन प्रदान किया गया। स्वर्ण जयन्ती ग्रामीण स्वरोजगार योजना के द्वारा देश भर में लगभग 20 लाख स्वयं सहायता समूहों को बैंकों से जोड़ कर 1.6 करोड़ ग्रामीण परिवारों को औपचारिक बैंक व्यवस्था तक पहुँच मिली। इस योजना का मुख्य उद्देश्य राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन के द्वारा महिलाओं को स्थानीय स्तर पर रोजगार उपलब्ध कराना है। 2011–2014 के दौरान देश में 50 लाख स्वयं सहायता समूह थे जो 2018 में बढ़कर 20 लाख हो गए हैं। जिसमें 2.25 से अधिक परिवारों को जोड़ा गया है। ग्रामीण विकास मंत्रालय ने महिलाओं के आर्थिक विकास के स्तर को ऊँचा उठाने के लिए स्वयं सहायता समूह से जुड़ी ग्रामीण महिलाओं को प्रति वर्ष कम से कम 1 लाख रुपये कमाने में समक्ष बनाने के लिए 28 अक्टूबर 2021 में राज्यों, बीएमजीएफ (बिल एण्ड मेलिडां गेट्स फाउंडेशन) और टीआरआईएफ (ट्रांसफोमेशन रूरल इंडिया फांउडेशन) के साथ मिलकर एक हितधारक परामर्श कार्यशाला का भी आयोजित किया । प्रदेश में इस समय करीब 3.65 लाख समूहो के माध्यम से करीब 40 लाख से अधिक महिलाएँ जुड़ी हैं। अगले 2 वर्षों में 25 मिलियन ग्रामीण स्वयं सहायता समूह की महिलाओं को आजीविका की सहायता प्रदान करने का लक्ष्य भी रखा गया।

स्वयं सहायता समूह के उद्देश्य –

स्वयं सहायता समूहों के द्वारा निर्धन महिलाओं में बचत करने की आदत का विकास होता है अतः उन्हे आर्थिक मजबूती का अनुभव होता है।

- स्वयं सहायता समूहों द्वारा महिलाओं में सामूहिक निर्णय क्षमता, स्वतन्त्रता, समानता, आत्मनिर्भरता व सशक्त होने की भावना का विकास होता है।
- स्वयं सहायता समूहों द्वारा महिलाओं में नेतृत्व क्षमता तथा जागरूकता का विकास होता है।
- स्वयं सहायता समूह द्वारा महिलाओं को बचत व ऋण दोनो प्रकार की बैंकिग गतिविधियों से जुड़ने का अवसर प्राप्त होता है।
- स्वयं सहायता समूह द्वारा महिलाओं में एकता, विश्वास और सहयोग की भावना का विकास होता है।

इस प्रकार स्वयं सहायता समूह विभिन्न प्रकार के उद्देश्यों के द्वारा महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक रूप से सशक्त बनाने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका को निभाता है। स्वयं सहायता समूह ग्रामीण गरीब महिलाओं को ऋण की जरूरतों की पूर्ति के लिए बैंक की गतिविधियों को बढ़ावा देता है तथा जिसके माध्यम से महिलाएं जागरुक होकर अपनी सामाजिक आर्थिक स्थिति में सुधार कर स्वयं का तथा देश का विकास करने में सफल होती हैं।

स्वयं सहायता समूह की उपयोगिता –

- ग्रामीण निर्धन महिलाएँ समूह के माध्यम से अपनी समस्याओं का सामूहिक प्रयास के द्वारा समाधान कर रही है। अतः ग्रामीण महिलाएँ समूह में कार्य अपनत्व की भवाना बढ़ाने के साथ अत्यन्त सफल हो रही हैं।
- ग्रामीण गरीब महिलाओं की क्षमता को समूह कार्य के माध्यम से पहचाना जा सकता है तथा उसे विकसित किया जा सकता है।
- स्वयं सहायता समूह के माध्यम से गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों के लाभ निर्धनतम लोगों तक पहुँचाये जा सकते हैं तथा व्यापक स्तर पर रोजगार गरीबो को उपलब्ध कराए जा सकते हैं।
- स्वयं सहायता समूह से जुड़ने के बाद महिलाओं में आत्मविश्वास तथा स्वयं के प्रति सम्मान का विकास होता है।
- ग्रामीण क्षेत्र व समाज में व्याप्त कुप्रथाएं व गलत निर्णय तथा अन्याय किया जाता है तो इन समूहों के द्वारा उसके खिलाफ सामूहिक रूप से आवाज उठा सकते हैं।
- ग्रामीण निर्धनों विशेषकर महिलाओं जो औपचारिक बैंकों से आवश्यक सेवाएं प्राप्त करने में असमर्थ होती हैं। उन्हें वित्तीय सेवाएं उपलब्ध कराने में स्वयं सहायता समूह अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
- स्वयं सहायता समूह की महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक सुरक्षा का अनुभव होता है।
- बचत करने की आदत में बढ़ोत्तरी होती है तथा आर्थिक मजबूती प्राप्त होती है।

महिला सशक्तिकरण में स्वयं सहायता समूहों की भूमिका –

1. स्वयं सहायता समूह से जुड़ने पर महिलाओं ने अपनी आर्थिक–सामाजिक स्थिति में सुधार पाया। 100 प्रतिशत महिलाए इस बात के पक्ष में पाई गई कि उनकी आर्थिक स्थिति में पहले की तुलना में सुधार हुआ है।

2. महिलाओं द्वारा स्वयं सहायता समूह के

प्रशिक्षण शिविरों में प्रशिक्षण प्राप्त करने से उनकी कार्य कुशलता व जागरुकता में वृद्धि हुई।

3. स्वयं सहायता समूहों से जुड़ी महिलाओं में सामाजिक रूप से यह प्रभाव हुआ कि पारिवारिक कलह में कमी आयी। इन समूहों की महिलाएं जो पुरुषों पर आर्थिक रूप से आश्रित थी स्वयं आर्थिक रूप से सक्षम हो पा रही हैं।

4. स्वयं सहायता समूह ग्रामीण महिलाओं में आर्थिक स्वावलम्बन का प्रभावशाली माध्यम है और समूहों में कार्य करनें के कारण महिलाओं में सामूहिक निर्णय लेने की क्षमता का विकास होता है। अन्त में महिलाओं को स्वयं सहायता समूहों से सही अर्थों में लाभ तब मिलेगा जब हर महिला रोजगार को अपना उददेश्य बनाए। सही मायनों में महिला सशक्तिकरण तभी सम्भव है जब महिला आर्थिक विकास की ओर मजूबती से काम होगा। महिलाओं के आर्थिक, सामाजिक स्वावलंबन के लिए स्वयं सहायता समूहों को ज्यादा से ज्यादा उद्यमिता की तरफ बढ़ना चाहिए। स्वयं सहायता समूह ग्रामीण महिलाओं को स्वयं आगे बढ़ा कर लघु उद्योगों द्वारा आर्थिक रोजगार को अपनी आय का मुख्य स्रोत बनाने का प्रयास है। इसके माध्यम से जहाँ एक तरफ आश्रितों की संख्या कम होगी, वहीं दूसरी तरफ आर्थिक विषमता भी कम होगी। इस प्रकार स्वयं सहायता समूह महिलाओं के आर्थिक स्वावलम्बन से पहले उन्हे आर्थिक विकास का एक स्रोत प्रदान करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। महिला सशक्तिकरण की अवधारणा महिलाओं के सम्पूर्ण विकास से सम्बन्धित है। स्वयं सहायता समूह से जुड़ने के पश्चात् महिलाएं सामाजिक, आर्थिक रूप से आत्मनिर्भरता को महसूस कर पा रही हैं।

निष्कर्ष –

ग्रामीण महिलाओं को स्वावलम्बी और आत्मनिर्भर बनाने में स्वयं सहायता समूह अहम भूमिका निभा रहे हैं। ग्रामीण महिलाएं इन समूहों से जुड़कर न केवल आर्थिक रूप से बल्कि सामाजिक रूप से सशक्त हो रही है। स्वयं सहायता समूह आर्थिक व सामाजिक परिवर्तन का एक मंच बनकर उभरे हैं, जिनके माध्यम से उसके अधिकतर सदस्यों में जागरुकता एवं विभिन्न सामाजिक–आर्थिक समस्याओं को हल करने की पर्याप्त क्षमता का विकास हो रहा है। इस प्रकार स्वयं सहायता समूह से जुड़कर महिलाओं में जागरुकता आयी, वे अपने समूह की समस्याओं को सामूहिक निर्णय के द्वारा समाधान करने में स्वयं सक्षम हुई है। अतः देश के आर्थिक विकास को गति देने मे स्वयं सहायता समूह की मुख्य भूमिका को समझते हुए इन्हें और सशक्त आधार प्रदान करना होगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भालसे मंजुला, आचार्य रेखा (2012) 'स्व सहायता समूह का भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर प्रभाव' Indian streams research Journal Volume 2, Issue .9.
2. शर्मा नारायण प्रेम, झा कुमार संजीव, विनायक वाणी, (2008) 'महिला सशक्तिकरण एंव समग्र विकास ' नई दिल्ली।
3. नईम मुहम्मद (2014) 'महिला सशक्तिकरण चुनौतियाँ एवं समाधान' नई दिल्ली।
4 मिश्र रोहित (2011) 'समाज कार्य एंव महिला सशक्तिकरण' न्यू रायल बुक कम्पनी, लखनऊ।
5 कुमार रविन्द्र (2015) – 'महिला सशक्तिकरण पर गैर सरकारी योजनाओं का योगदान (जयपुर जिले के विशेष सन्दर्भ), ISSN: 2455–596 AIJRA Vol.II Issue IV.
6. कुमारी प्रियका (2016) 'वैश्वीकरण के वोरे में महिला सशक्तिकरण एक समाजशास्त्रीय विश्लेशण Journal of Socio Educational & Cultural Research, Vol-2, No. 5, ISSN:2394-2878.
7. त्रिपाठी के. के. डॉ. वाडकर, के. एस. डॉ. (2021) 'स्वयं सहायता समूह' योजना , सितम्बर।
8. मिश्रा आभा (2016) 'महिला सशक्तिकरण एंव स्वयं सहायता समूह : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण रांची जिले के नामकुम प्रखण्ड के विशेष संदर्भ में' जर्नल ऑफ सोशियो –एजुकेशन एण्ड कल्चर रिसर्च VOL. 2, No - 5
9. त्रिपाठी मधुसूदन प्रो. (2012) – 'स्वयं सहायता समूह और महिलाएं ' खुशी पब्किेशन्स नई दिल्ली।
10. शर्मा रमा, मिश्रा के.एम. (2012) 'महिला विकास' अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस नई दिल्ली।
11. भारद्वाज निधि (2012) 'महिला सशक्तिकरण' शीतल प्रिन्टर्स, जयपुर।
12. सिंह एन. वी. ,जनमेजय सिंह (2010) 'आधुनिकता एवं नारी सशक्तिकरण', रावत पब्लिकेशन , नई दिल्ली।
13. Sadavarte N. Mahavir Dr.(2017) Self Help Group and Comprehensive Empowerment of Women in Rural Area'RUT Printer and Publisher JALNA (MS) INDIA.
14. सोलंकी प्रभा रानी डॉ. – 'सशक्तिकरण एवं महिला सहकारिता' के. के. पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
15. WWW.nabard.orj
16- http//Wed.nic.in महिला एवं बाल विकास विभाग भारत सरकार।
17. कुमार नवीन ,(2015) ''सामाजिक परिवर्तन में स्वयं सहायता समूह की भूमिका'' बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी पटना ।
18. https://aajeevika .gov.in.
19. दीक्षित अनुपमा (2021) 'महिला सशक्तिकरण और स्वयं सहायता समूह 'Innovation The Research Concept, Vol-6,ISSN :2456-5474 .

Received: 05 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

वैदिक एवं आधुनिक गृह निर्माण व्यवस्था

– डॉ. अनुपमा कुमारी
एसोसिएट प्रोफेसर –
गृहविज्ञान विभाग,
कानपुर विद्या मन्दिर महिला महाविद्यालय, स्वरूप नगर, कानपुर–208001 (उत्तर प्रदेश)

ई–मेलः
anupamasheelsagar@gmail.com

सारांश

हर व्यक्ति का एक सपना होता है कि उसका अपना एक घर हो जिसे वह अपनी आवश्यकता के अनुरूप बना सके। वैदिक काल से लेकर आज तक भवन निर्माण हेतु बहुत सारे बदलाव हुए हैं। जैसे पहले घरों में खुला स्थान हुआ करता था, जिसे आंगन कहते हैं। अब वह आंगन लुप्त होता नजर आ रहा है। वहीं शौचालय अक्सर घर के बाहर ही हुआ करते थे, परन्तु आजकल मल्टीस्टोरी भवनों में शौचालय सहित कमरों की व्यवस्था होती है जो कि व्यक्तियों के लिए ज्यादा सुविधाजनक है, क्योंकि आजकल इस आपाधापी भरी जिन्दगी में समय की बहुत कमी हो गया है। जिसकी वजह से व्यक्ति ऐसे सामान और सामग्रियों को महत्व देता है जिससे उसके समय की बचत हो।

शब्द कुंजी – व्यवस्था, चयन, भूमि, मकान, परिवार।

आज के बदलते परिवेश में गृह निर्माण सम्बन्धी दृष्टिगत रखते हुए मानव गृह निर्माण नहीं करवाता बल्कि उसका प्रमुख उद्देश्य रहता है कि गृह निर्माण ऐसा हो जिसमें परिवार के सदस्यों का शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, सामाजिक, आध्यात्मिक, संवेगात्मक, क्रियात्मक विकास हो सके।

पारिवारिक गृह निर्माण के लिए निम्न आवश्यकतायें होती हैं–

वेदों में भी गृह निर्माण कला का उत्तम वर्णन मिलता है। अर्थववेद में कहा गया है कि नवनिर्मित भवन में हवन करने के पदार्थों को रखने का स्थान, अग्निहोत्र का स्थान, स्त्रियों का स्थान होना चाहिये। ऋग्वेद में एक मन्त्र में गृहनिर्माण के विविध सुखों का वर्णन मिलता है– 'हे गृहस्थों हम तुम्हारे निवास के लिये ऐसा घर बनाते हैं जिसमें सूर्य की किरणें खूब आयें, ऐसे घर में दैवीय प्रकाश का उदय हो जिससे तुम मोक्ष को प्राप्त हो जाओ।

अर्थववेद के तृतीय काण्ड के बारहवें सूक्त में गृह निर्माण वर्णन है कि किस प्रकार से समृद्धि से युक्त जीवन व्यतीत करना चाहिए। कहा है कि घर ''ध्रुव'' अर्थात् ऐसे दृढ़ और पक्के मजबूत बनाने चाहिये जिससे वे ऋतुओं के प्रभाव एवं भूकम्प आदि के झटकों को सहन कर सकें।

''उद्यमिंता प्रतिमितामथो परिमितामुत'' हमारी शाला उपमिता अर्थात् सूक्ष्मतापूर्वक माप (Measurement) करके बनाई गई हो, परिमिता अर्थात् उसकी प्रत्येक रचना का उसकी दूसरी रचनाओं के साथ तुलना करके अनुपात (Proportion) जान लिया गया हो। गृहनिर्माण के लिए वेदों में अनेक नामों का प्रयोग किया गया है जैसे– गायः – धार्मिक कार्यो हेतु, कृदर– अन्न के भण्डार, गर्त्तः– शयनकक्ष, हर्म्यम्–महल बंगला, छर्दि–त्याज्य का निष्प्रयोजन वस्तु स्थान आदि।

अंग्रेजी की एक कहावत है ''East or West Home is Best" घर में हम सुख–दुख, चिन्ता, भय आदि से मुक्त रह पाते हैं। प्रेम, दया,

करुणा, सहयोग, त्याग, मित्रता आदि का पाठ पढ़ते व सीखते हैं और विकास करते हैं।

भवन निर्माण की योजना बनाते समय निम्न बातों को ध्यान रखना चाहिये–

जगह ऊँची हो ताकि पर्याप्त रोशनी, धूप, हवा आदि प्राकृतिक सम्पदा मकान में सुगमता से प्रवेश करने के साथ वर्षा के पानी से किसी प्रकार का कोई नुकसान न पहुंचे, चारो तरफ खुला भाग हो, भूखण्ड अधिक व्यस्त, शोरगुल एवं भीड़भाड़ वाले स्थान पर न हो जैसे– रेलवे स्टेशन, बस स्टैण्ड, सिनेमाघर, मुख्य बाजार आदि क्योंकि ऐसे स्थान से ध्वनि प्रदूषण होता है। फैक्ट्री, कल कारखाने आदि भी न हों क्योंकि इससे वायु प्रदूषण फैलता है जिससे अस्थमा एवं श्वांस सम्बन्धी रोग हो जाते हैं।

भवन के आस–पास स्कूल, कालेज, अस्पताल, डाकघर, बैंक, बाजार, दफ्तर, मनोरंजन पार्क आदि हो जिससे आने जाने में समय, शक्ति व धन की बचत हो सके। पास–पड़ोस में सभ्य, सुशील, सुसंस्कृत व्यक्ति होने चाहिये जिससे बच्चों का उत्तम शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक विकास हो सके।

रेतीली भूमि में पानी सोखने की क्षमता का विलक्षण गुण होते हैं। अतः पानी धरती के भीतर बहुत गहराई तक चला जाता है। ऐसी भूमि पर बने मकान में सीलन नहीं रहती परन्तु इसमें नींव चौड़ी व गहरी होनी चाहिए। चिकनी भूमि में पानी सोखने की क्षमता अधिक होती है जिसके कारण ऐसी भूमि पर बने मकान में सीलन, कीड़े–मकोड़े, मच्छर आदि रहते हैं। इसके लिए भूमि में गहरी, चौड़ी नींव खोद कर नीचे के पानी को निकालकर कंकरीट बालू, सीमेन्ट, छोटे–छोटे पत्थर एवं पानी सोखने वाले जलसह यौगिकों का प्रयोग करना चाहिये। कंकड़ीली भूमि में पानी रिस–रिस की जमीन की तहों में काफी नीचे तक चला जाता है। ऐसी भूमि में घरेलू बागवानी, पेड़–पौधे आदि लगाना कठिन होता है। इस भूमि में चौड़ी नींव रखना चाहिए व इस पर बने मकान दिन के समय अधिक गर्म रहते हैं।

स्वास्थ्य एवं मजबूती की दृष्टि से ठीक नहीं होती है। इसमें कूड़ा–करकट, कंकड़ पत्थर, मिट्टी, गोबर, मल आदि की विषैली गैसें बनती हैं। यदि इस भूमि को उपयोग में लाना है तो इसमें कंकड़, पत्थर, मिट्टी आदि डालकर काफी समय तक यूँ ही छोड़ देनी चाहिये। रेतीली, चिकनी एवं कंकड़ीली भूमि मकान बनवाने की दृष्टि से उत्तम हैं परन्तु सबसे अच्छी भूमि वह है जिसके ऊपर एक मीटर नरम मिट्टी हो तथा नीचे कंकड़ीली ढलुआ जमीन हो ताकि पानी जमा न हो पाये।

प्रत्येक भूमि पर भवन में आमुख की स्थिति एक जैसी नहीं होती बल्कि विभिन्न जलवायु एवं भौगोलिक परिस्थितियों में भिन्नता के कारण इसमें परिवर्तन हो जाता है जैसे– ठंडे प्रदेशों में दक्षिणमुखी मकान अधिक उपयुक्त होते हैं क्योंकि ऐसे आमुख से दिनभर अधिक सूर्य प्रकाश एवं गर्मी मिलती है, परन्तु गर्म प्रदेशों के लिए उत्तरमुखी मकान ज्यादा उपयुक्त होते हैं क्योंकि इस दिशा में सूर्य की रोशनी एवं धूप कम पहुंचती है।

पर्याप्त वायु संवातन एवं रोशनी (सूर्य प्रकाश) की दृष्टि से देखा जाये तो पूरब पश्चिम का मकान अधिक अच्छा रहता है। मुख्य द्वार दक्षिण या पश्चिम दिशा में हो, दिन के समय काम आने वाले कमरों को उत्तर पूर्व की ओर रखें, शयनकक्ष को हवा में बहने की दिशा में रखें, भोजनकक्ष दक्षिण पूर्व, अध्ययन कक्ष–उत्तर पूर्व दिशा में रखें दक्षिणी दिशा में दीवारों में छज्जा या सनब्रेकर बनाने से दिन की धूप से बचा जा सकता है।

सर्वप्रथम नक्शा कुशल इंजीनियरिंग (आर्किटेक्ट) से बनवाना चाहिए जो कि परिवार की आवश्यकता उपयोगिता, स्थानीय परिस्थितियों जलवायु एवं आर्थिक स्थिति के अनुरूप होनी चाहिए और कुछ निम्न बिन्दुओं पर ध्यान देना चाहिए।

उचित संवातन एवं सूर्य के प्रकाश के लिए कुछ भाग खुला छोड़ना चाहिए। भूखण्ड का क्षेत्रफल 40′ X 60′ (चौड़ाई X लम्बाई) हो तो मकान में सामने की तरफ 10–12 फीट पीछे की तरफ 8–10 फीट खाली स्थान छोड़ना उपयुक्त रहता है।

मजबूती एवं दृढ़ता के लिए चौड़ी, ठोस नींव होनी चाहिए। नींव जितनी चौड़ी होगी भार वहन करने की क्षमता उसमें उतनी ही अधिक होगी। नींव की गहराई व ऊँचाई मकान की ऊँचाई पर निर्भर करती है।

हम उस ऊँचाई को कहते हैं जहाँ भवन निर्माण अथवा कमरों का निर्माण किया जाता है इसकी ऊँचाई सड़क से कम से कम 4–5 फीट ऊँची होनी चाहिए।

ये भी दो प्रकार की होती हैं–

(क) भार झेलने वाली या बाहरी दीवार – यह 9 इंच या 1 फुट की दीवार उपयुक्त रहती है।

(ख) पार्टीशन या अन्दर की दीवार – इन्हें विभाजक या पर्दे की दीवार भी कहा जाता है। 5–6 इंच मोटी होती है।

ऊँची छत, स्वास्थ्य, सुन्दरता एवं आरामदायिकता की दृष्टि से उत्तम होती है। ऊँची छतें गर्मी में ठंडक प्रदान करती है। कमरे में यदि (Air Conditioner) वातानुकूलन लगवाना है तो ऊँचाई कम रखनी चाहिये।

मकान देखने में सुन्दर, जीवन्त, लुभावन, मनमोहक एवं सौन्दर्य बिखेरने वाला होना चाहिये।

चलने में थकान अनुभव न हो पेड़ी (Steps) की

ऊँचाई अधिक नहीं होनी चाहिये। सामान्यतः सीढ़ी की ऊँचाई एवं चौड़ाई 1 : 2 में होनी चाहिये और सीढ़ी की ऊँचाई 15 सेमी हो तो चौड़ाई 30 सेमी होनी चाहिये।

शुद्ध ताजी एवं शीतल हवा के आवागमन के लिये खिड़की व दरवाजे की स्थिति इस प्रकार हो जो हवा बहने की दिशा में खुलते हों व देखने में सुन्दर, कलात्मक, शुद्ध, मजबूत एवं आकर्षक हों खिड़की–दरवाजों में जाली लगी हो जिससे मक्खी, मच्छर, आदि अन्दर प्रवेश न कर सके खिड़कियाँ आमने सामने हों ताकि उचित संवातन बना रहे।

शयनकक्ष की खिड़कियाँ, रोशनदान, भवन के बाहर की ओर खुलने चाहिये, रसोई में चिमनी लगी हो, एक्जॉस्ट पंखे की व्यवस्था हो।

शहरों में जलापूर्ति नल, हैण्डपम्प, बोरिंग आदि से की जाती है। यह स्वच्छ साफ होता है। प्रदूषण की संभावना कम होती है जब कि गाँवों में लोग आज भी कुएँ, नलों और तालाबों का जल प्रयोग में लाते हैं।

आधुनिक युग में घर के अनेक कार्य विद्युत उपकरणों की सहायता से किये जाते हैं। जैसे– मसाला पीसना, कपड़े धोना, झाड़ू लगाना, खाना पकाना आदि इनसे समय एवं शक्ति की बचत होती हैं अतः इसके लिए उचित विद्युत आपूर्ति होनी चाहिये।

नालियाँ पक्की ढलावदार होनी चाहिए। फ्लश विधि का शौचालय स्वास्थ्य की दृष्टि से अच्छा रहता है, इससे गन्दगी कम होती है। घरेलू कूड़े–करकट आदि गन्दगी फैलने में अहम् भूमिका निभाते हैं। अतः ढक्कनदार कूड़ेदान हो, जिसका विसर्जन दूर स्थान पर हो जिससे वातावरण प्रदूषित न हो।

अतः इन सभी व्यवस्थाओं के होने पर हम एक उत्तम गृह निर्माण की कामना करते हैं जिसमें कि हम आरामदायक सुरक्षित एवं स्वस्थ्य रह सकेंगे।

निष्कर्ष –

आज के युग में समाज के हर व्यक्ति का एक सपना होता है कि उसका अपना एक घर हो जिसे वह अपनी आवश्यकता और अपनी क्षमता के अनुरूप बना सके। वैदिक काल से लेकर आज तक भवन निर्माण हेतु बहुत सारे बदलाव हुए हैं। जैसे पहले घरों में खुला स्थान हुआ करता था, जिसे आंगन कहते हैं। अब वह आंगन लुप्त होता नजर आ रहा है। वहीं शौचालय अक्सर घर के बाहर ही हुआ करते थे, परन्तु आजकल मल्टीस्टोरी भवनों में शौचालय सहित कमरों की व्यवस्था होती है जो कि व्यक्तियों के लिए ज्यादा सुविधाजनक है, क्योंकि आजकल इस आपाधापी भरी जिन्दगी में समय की बहुत कमी हो गया है। जिसकी वजह से व्यक्ति ऐसे सामान और सामग्रियों को महत्व देता है जिससे उसके समय की बचत हो।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. गृह निर्माण एवं धन व्यवस्थापन – डॉ. (श्रीमती) वृन्दा सिंह ।
2. गृह निर्माण एवं गृह सज्जा – डॉ. स्नेहलता ।
3. व्यावहारिक ग्रह प्रबन्ध एवं साधन व्यवस्था – डॉ. (श्रीमती बेला भार्गव)।
4. ऋग्वेदीय ब्राह्मणों का सांस्कृतिक अध्ययन – आचार्य बलबीर।
5. वैदिक अर्थ व्यवस्था – महावीर ।
6. समाचार पत्रिकाएं ।
7. स्वविचार ।

◈◈

विशेष

प्रकाशन शोधकर्त्ताओं के लिए शोध प्रक्रिया का अन्तिम और अत्यन्त महत्त्वपूर्ण चरण होता है। शोध समाज की एक मूल्यवान उपलब्धि है, जिसके लिए इसे समाज के बीच आना ही चाहिए ताकि समस्त मानवता इसका लाभ उठा सके। वर्तमान में बेलगाम होती महंगाई, कम्प्यटूर टाइपिंग, कागज, मुद्रण सामग्री एवं प्रिंटिंग की दरों में उत्तरोत्तर बढ़ोत्तरी शोधार्थियों केद्वारा प्रकाशित होने वाले शोध-पत्रों केअवसरों को सीमित एवं संकुचित करते हैं।

संगोष्ठियों में शोध प्रपत्र का वाचन शोधार्थियों एवं शोधविदों के लिए एक महत्त्वपूर्ण अवसर होता है। अपने गुणवत्तापरक शोध कार्य को इन संगोष्ठियों के माध्यम से जनमत के बीच लाने का माध्यम बनता है। ऐसे अवसरों का लाभ उठाना ही हम सभी के लिए हितकर है, हम सभी आयें और समाज में आगे बढ़कर अधिक से अधिक सहयोग देकर इसे सफल बनाने के कार्य में हाथ बंटायें।

- प्रबन्धक सम्पादक

RNI : UPMUL00620/24/1/2014-TC ISSN : 2394-4366

Received: 05 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

उदारीकरण एवं वैश्वीकरण के दौर में केन्द्रीय सरकार की वर्तमान आर्थिक नीति का अध्ययन''

– डॉ. रवि रस्तोगी
सहायक आचार्य – वाणिज्य विभाग,
डॉ. राममनोहर लोहिया महाविद्यालय
कल्यानपुर, कानपुर–208017 (उ.प्र.)

सम्बद्ध – छत्रपति शाहू जी महाराज विश्वविद्यालय कानपुर

ई–मेल :
ravirastogi1981@gmail.com

सारांश

"भारत गाँवों का देश है, अतः सरकार को संतुलित अर्थव्यवस्था की दृष्टि से कुटीर तथा लघु उद्योगों के विकास को सर्वाधिक महत्व प्रदान करना चाहिये। अल्प पूँजी में अधिक रोजगार पैदा करने की क्षमता, आय व सम्पत्ति के समान वितरण, विकेन्द्रीकरण तथा संतुलित विकास, औद्योगिक शान्ति तथा शहरीकरण के दोषों से मुक्ति, मानवीय मूल्यों की दृष्टि से इन उद्योगों का हमारी अर्थव्यवस्था में अद्वितीय महत्व है।" इस प्रकार हम कह सकते हैं कि लघु एवं कुटीर उद्योग उत्तर प्रदेश की अर्थव्यवस्था के लिए अत्यधिक महत्व रखते हैं। उत्तर प्रदेश जैसी कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था में कृषि के सहायक के रूप में इन उद्योगों को बढ़ावा देकर प्रदेश की अर्थव्यवस्था को अधिक मजबूत एवं समृद्ध किया जा सकता है।

संकेत शब्दः उदारीकरण विदेशी पूंजी वैश्वीकरण औद्योगिक नीति।

प्रस्तावना –

प्रारम्भिक अवस्था में उदारीकरण विदेशी पूंजी और विदेशी तकनीकी को अपनाने में छूट का नाम था। किन्तु बाद में विदेशी पूंजी और तकनीकी का खुला आवाहन ही नहीं रह गया बल्कि विदेशी माल को भी खुला निमंत्रण बन गया। जिस देश और प्रदेश के देश भक्तों ने आजादी की लड़ाई के दौर में विदेशी माल का बहिष्कार किया था। उसी माल को आज अपनाने के लिए स्वागत किया जा रहा हैं एक–दो नहीं दुनियाँ के सभी उत्पादनों के लिए उत्तर प्रदेश उनकी खुली हुई बाजार है। सुदूर देहातों गाँवों को बड़ी सड़कों और बाजारों से जोड़ने के लिए सड़कों का जाल बिछाया जा चुका है। ट्रांजिस्टर, टेलीविजन, टेलीफोन, मोबाइल को गाँव–गाँव तक पहुँचाया गया अब गाँव के शिक्षितों ही नहीं अशिक्षित औरत–बच्चों और धनिक ही नहीं गरीबों को चाहे–अनचाहे बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के नये–नये उत्पादों से परिचित कराया और उपभोग के लिए रिझाया जा रहा है। निश्चित ही अतिकुशल निर्माताओं कारीगरों और अतिविकसित मशीनों से निर्मित नये विदेशी उत्पादों की गुणवत्ता अविकसित क्षेत्र के लोगों के लिए अति लुभावनी है। प्रभूत मात्रा में इनका उत्पादन हुआ है जिस कारण ये सस्ती भी हैं। इनकी तुलना में हस्तशिल्पियों और अविकसित मशीनों एवं औजारों की मदद से बना माल कम आकर्षक और महंगा भी दिखने लगा है।

उदारीकरण की ही देन है कि विदेशी पूंजी निवेश और तकनीक

से नयी–नयी कार मोटर साइकिल, टूथ पेस्ट ही नहीं बाथ रूम साफ करने के लिए ब्रश और आँगन बटोरने के लिए झाडू भी गाँवों तक पहुँचा है। बन के पत्तों से बनी पत्तलों और खजूर के झाडुओं की पूछ अब खत्म हो चली है। पत्तल और पुरवे की जगह प्लास्टिक की प्लेट और गिलास को बारातों में परोसा जा रहा है। विदेशी कपड़ों के रेडीमेड गारमेन्ट्स सुदूर गाँवों की बाजारों तक पहुँचने लगे है। जहाँ उत्सुकता के साथ बढ़े नहीं तो बच्चे अपना सके हैं नव जवानों को इसे अपनाने में परहेज नहीं है। ये और ऐसे सारे परिदृश्य है जो विधिवत विश्लेषण और तुलनात्मक अध्ययन समीक्षा की मांग करते है। इसके विश्लेषण ही इस तथ्य को उजागर करेगें। उदारीकरण ने उत्तर प्रदेश के औद्योगिक विकास को कितना प्रभावित किया है और अब उसके भौतिक साधनों और श्रमशक्ति की संभावनाओं को कितना प्रभावित करेगा।

उत्तर प्रदेश में उदारीकरण की नीति अपनाई जाने के पूर्व जो औद्योगिक संस्थान थे उनकी कार्य क्षमता उनके उत्पादन, उनके वितरण और निर्यात पर उदारीकरण की नीति ने क्या प्रभाव डाला। नये उद्योग धन्धों के स्थापना के लिए उत्तर प्रदेश के उद्यमियों को उदारीकरण में कितना प्रोत्साहन अथवा हतोत्साहित किया? विदेशी उत्पादनों के विक्रय के लिए उत्तर प्रदेश की बाजारों को खुला छोड़ा जाना नये उद्यमियों के लिए कैसा अवसर प्रदान करेगा ऐसे ही तिने गम्भीर प्रश्न है। जिनका अध्ययन किया जाना हमारे उद्देश्य का अंग है हमारा उद्देश्य है कि उपलब्ध तथ्यों के विश्लेषण से ऐसा निष्कर्ष निकाला जाना जिससे हमारा प्रदेश हमारी जनता बुद्धिजीवी और उद्योगपति भविष्य के लिए नई नीति अपना सके और विकास का पथ प्रसस्त कर सके।

उदारीकरण एवं वैश्वीकरण के दौर में केन्द्रीय सरकार की वर्तमान आर्थिक नीति भी निजीकरण एवं विनिवेश कार्य को पर्याप्त बढ़ावा एवं सहयोग प्रदान करने की है। सरकार निजीकरण एवं विनिवेश के माध्यम से जहाँ एक ओर सार्वजनिक उपक्रमों को बेहतर बनाने के लिए प्रेरित कर रही है, वहाँ दूसरी ओर इन उपक्रमों के कुशल प्रबन्धन इसके द्वारा न्यूनतम लागत पर अच्छी गुणवत्ता का माल एवं सेवाएं उपलब्ध कराकर वैश्विक प्रतिस्पर्धा में टिके रहने एवं इनके विकास के लिए प्रयासरत है निःसंन्देह गैर–सरकारीकरण से इन उपक्रमों में प्रबन्धकीय स्वायत्तता को बढ़ावा मिलेगा, राजनीतिक हस्तक्षेप में कमी आयेगी, आम जनता की खून पसीने की कमाई का दुरुपयोग रुकेगा। भ्रष्टाचार एवं लालफीताशाही के पाँव सिमटेंगे, कामचोरी की भावना समाप्त होगी, पारदर्शिता बढ़ेगा, उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि होगी। उदारीकरण की नीति का समावेश हुए एक दशक बीत चुका है। इसका मूल्यांकन किया जाना किसी बुद्धिजीवी के लिए उत्सुकता का कारण है। लेकिन विकास की मात्रा अन्धी दौड़ नहीं है। विकास मूलतः सही नीतियों तथा सुविचारित योजनाओं एवं सफल कार्यान्वयन पद्धति से ही प्राप्त किया जा सकता है।

नई आर्थिक नीति का महत्व आज विश्व व्यापीकरण के युग में और बढ़ गया है। आज उद्योगों को विश्वप्रतिस्पर्द्धा में अपने को स्थापित करना है। उसे गुणवत्ता में स्थापित होना है, दूसरे की तुलना में सस्ता उत्पाद तैयार करना है। लागत मूल्य कम करना है। आर्थिक विकास के अवसर बनाये रखते हुए आर्थिक विषमता को खत्म करना है। औद्योगिक विकास तो वार्षिक ही नहीं मासिक और साप्ताहिक मूल्यांकन की अपेक्षा करता है। ऐसी दशा में हमारे अध्ययन का गम्भीर महत्व है।

शोध का उद्देश्य –

समृद्ध प्राकृतिक संसाधनों अनुकूल जलवायु एवं उपजाऊ भू–सम्पदा से युक्त उत्तर प्रदेश जनसंख्या की दृष्टि से भारत का सबसे बड़ा प्रदेश है और पूरे प्रदेश के 9 प्रतिशत भू–भाग में फैला हुआ है। उत्तर प्रदेश की संस्कृति एवं जनजीवन परम्पराओं एवं आधुनिकता का विलक्षण संगम है। राज्य की अर्थव्यवस्था प्रमुख रूप से कृषि पर आधारित है।

कृषि प्रदेश के 70 प्रतिशत कर्मकारों को रोजगार प्रदान करती है एवं राज्य के सकल घरेलू उत्पाद में 45 प्रतिशत योगदान है। अनेक कृषि उत्पाद एवं कच्चे माल के उत्पाद में यह प्रदेश अग्रणी राज्य है उद्योगों के उपयोग से उत्तर प्रदेश में भूमि और जल जैसे मूल संसाधनों की प्रचुर मात्रा में उपलब्धता है। सम्पूर्ण राज्य में सड़कों तथा रेल–मार्गों का व्यापक एवं विस्तृत जाल बिछा दिया जाना चाहिए। तथा विभिन्न स्थानों पर हवाई परिवहन की सुविधा उपलब्ध उचित मात्रा में होनी चाहिए।

जनसंख्या की दृष्टि से देश का सबसे बड़ा प्रदेश होने के परिणाम स्वरूप यह प्रदेश औद्योगिक उत्पादों के मांग के दृष्टिकोण असीमित बाजार प्रदान करने की क्षमता भी रखता है। विगत वर्षों में उत्तर प्रदेश के विकास के लिए सतत् प्रयास एवं प्रसार अच्छी प्रकार से हो सके और इससे रोजगार लोगों को आसानी से मिल सके।

जिससे बेरोजगारी को दूर करने तथा गरीबी उन्मूलन के लक्ष्य को पूर्णतः प्राप्त करने के लिए प्रदेश के औद्योगिक विकास को तीव्र गति प्रदान करना प्रदेश की प्रथम प्राथमिकता होनी आवश्यक है। यह तभी हो सकता है जब प्रदेश के व्यापक और तेज गति से औद्योगीकरण के माध्यम से ही यह सम्भव किया जा सकता है।

उत्तर प्रदेश की नवीन औद्योगिक नीति का उद्देश्य राज्य की असीमित एवं अनन्त औद्योगिक सम्भावनाओं को साकार करना है, जो विभिन्न कारणों से अविकसित रही हैं। मूल रूप से उनका विकास किया जाना चाहिए। नवीन औद्योगिक नीति सन् 2017 तक निम्न उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास किया है–

1. औद्योगिक क्षेत्र में रोजगार का प्रतिशत 8 से बढ़कर 15 प्रतिशत करना है।

2. औद्योगिक विकास की वार्षिक दर 10–12 प्रतिशत प्राप्त करना है।

3. राज्य के सकल घरेलू उत्पाद में उद्योगों का अंश 20 प्रतिशत करने का उद्देश्य रखा गया है।

शोध अध्ययन विधि –

प्रस्तुत अध्ययन में तथ्य संकलन के प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों का प्रयोग किया गया है। यह शोध पत्र द्वितीयक संमक पर आधारित है। प्रस्तुत शोध पत्र में द्वितीयक संमक के लिये भारत सरकार की रिपोर्ट, वित्त मंत्रालय की रिपोर्ट, आदि से सम्बन्धित संमक लिये गये हैं।

उदारीकरण एवं वैश्वीकरण का औद्योगिक विकास

उदारीकरण के इस दौर में भारतीय दवा उद्योग की परिस्थितियाँ और परिभाषाएं बदल गयी हैं। सैकड़ों छोटी–मोटी भारतीय दवा कम्पनियां बन्द हो चुकीं हैं और जो मैदान में हैं वे दबाव में हैं, टूटकर बिखरने के कगार पर हैं। भारतीय दवा उद्योग उदारीकरण की सबसे बड़ी कीमत तबाही के रूप में चुका रहा है, और आगे हश्र और भी बुरा तय है। याद रहे, वहीं भारतीय दवा उद्योग है जिसने सार्वजनिक क्षेत्रों की दवा कम्पनियों की तबाही और उदारीकरण के आगमन पर सबसे ज्यादा तालियां पीटी थीं।

भारतीय सरकार ने भारतीय उद्योगों को अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा का सामना करने के लिए तो खुला छोड़ दिया है, लेकिन वह अपनी नीतियों में कोई बुनियादी परिवर्तन करने के लिए तैयार नहीं है। भारतीय उद्योग अभी भी उन्हीं पुरानी नीतियों से जकड़े हुए हैं। जहाँ तक लघु उद्योग की बात है, इन उद्योगों की उत्पादकता और गुणवत्ता सम्बन्धी समस्याओं का समाधान किये बगैर उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय बाजार का सामना करने के लिए छोड़ दिया गया है। लघु उद्योग उत्पादकता और गुणवत्ता में इतने अधिक पिछड़े हुए हैं कि वे अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा का समाना कर ही नहीं सकते हैं।[2] क्योंकि भारतीय उद्योग अपने पैरों पर खड़े हो गये हैं, परन्तु उनके बारे में उचित विचार या उसको गम्भीरता से विचार नहीं किया जा रहा है।

वैश्वीकरण एवं उदारीकरण ने 'असमान प्रतिस्पर्धा' को जन्म दिया है। यह प्रतिस्पर्धा है 'शक्तिशाली बहुराष्ट्रीय निगमों' और कमजोर भारतीय उद्योगों के बीच भारत की बड़ी औद्योगिक इकाइयाँ भी विदेशी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की तुलना में बहुत छोटी और बौनी है उनमें से बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ हजम कर चुकी हैं और कुछ सांस रोककर अपने अस्तित्व के अन्त का इन्तजार कर रही है। जैसा कि पश्चिमी बंगाल के एक संसद सदस्य ने कहा है, किया भारत के वैश्वीकरण का अर्थ है 'हाथियों के झुण्ड में एक चूहे का घुसना' (Integrating a Mouse into a herd of elephants)

औद्योगिक विकास के प्रमुख वाहक – जिला उद्योग केन्द्र

प्रदेश के अपेक्षित विकास के लिए जिला स्तर पर विभिन्न औद्योगिक संस्थायें व विकास योजनायें विकसित की गई हैं। लघु उद्योगों के विकास में जिला स्तर पर जिला उद्योग केन्द्र की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। यह संस्थान राज्य सरकार एवं केन्द्र सरकार के सहयोग से लघु उद्योगों की स्थापना और विभिन्न सुविधाओं को उपलब्ध कराने में विशेष मार्गदर्शन करता है। उ.प्र. वर्तमान में केवल 70 जिलों में जिला उद्योग केन्द्र लघु उद्योगों के विकास में अपनी संवायें दे रहे हैं। नवीन पाँच जिलों में यह कार्य पूर्ववती जिला उद्योग केन्द्र कर रहे हैं।

जिला उद्योग केन्द्रों द्वारा संचालित कार्यक्रम – जिला उद्योग केन्द्रों द्वारा संचालित कार्यक्रम का विवरण निम्न प्रकार हैं–

उद्यम वृत्ति विकास कार्यक्रम–

जिला उद्योग केन्द्र योजना का शुभारम्भ वर्ष 1978–79 में किया गया है। इस योजना का प्रारम्भ निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति हेतु किया गया है –

- लघु एवं ग्रामीण उद्योगों को प्रोत्साहित करके रोजगार के अधिकाधिक साधनों में वृद्धि के साथ–साथ औद्योगीकरण की गति में अधिक तीव्रता लाना।
- उद्योगों की स्थापना हेतु इच्छुक उद्यमियों को

तालिका–1

लघु क्षेत्र में पंजीकृत इकाइयां

वर्ष के अन्त तक	पंजीकृत इकाइयों की संख्या (लाखों में)
2010	10.79
2011	14.57
2012	24.55
2013	38.50
2014	41.58
2015	61.70
2016	72.71
2017	88.27

स्रोत : उद्योग निदेशालय जी.टी. रोड, कानपुर

एक ही छत के नीचे उद्योग स्थापना की समस्त जानकारी एवं सभी सुविधायें उपलब्ध करना।

● लघु एवं छोटे उद्योगों के विकास के लिए अवस्थापना का प्रबन्ध, तकनीकी जानकारी उद्यमिता विकास तथा सर्वेक्षण करना।

● लघु उद्यमियों को विभिन्न स्तरों पर अनुभूतियाँ/स्वीकृतियाँ शीघ्र जारी करने के उद्देश्य से जिला प्राधिकृत समिति (उद्योग बन्धु) की स्थापना प्रत्येक जनपद के जिलाधिकारी की अध्यक्षता में की गई हैं।

उपरोक्त उद्देश्यों की पूर्ति को कार्यरूप देने के लिए राज्य सरकार ने प्रत्येक जनपद में जिला उद्योग केन्द्र की स्थापना की है। इन जिला उद्योग केन्द्रों में लघु उद्योगों के अस्थायी/स्थायी पंजीकरण भूमि व भवन कच्चा माल, मशीन यंत्र उपकरण, संयंत्र तकनीकी मार्गदर्शन, ऋण एवं विद्युत आदि की सुविधा उपलब्ध कराने की व्यवस्था है। जिला उद्योग केन्द्र का वरिष्ठतम अधिकारी महाप्रबन्धक होता है, जिसके अधीन सुचारु रूप से कार्य संचालन हेतु प्रबन्धक (विपणन) परियोजना प्रबन्धक एवं प्रबन्धक (ऋण) आदि कार्यरत होते हैं। तहसील/ब्लाक स्तर पर उद्यमियों को जानकारी एवं अन्य सुविधायें उपलब्ध कराने के लिए सहायक प्रबन्धक कार्यरत हैं। ग्रामीण अंचलों में कार्यक्रम के प्रचार एवं प्रसार हेतु प्रत्येक विकास खण्ड के लिए एक सहायक विकास अधिकारी (उद्योग सेवा व्यवसाय) की व्यवस्था भी राज्य सरकार के नियोजन विभाग द्वारा की गई है।

जिला उद्योग केन्द्र का शुभारम्भ भारत सरकार की सहायता से किया गया था, जिसे प्रदेश सरकार द्वारा योजना पुनः परीक्षण कर महाराष्ट्र पैटर्न के आधार पर प्रत्येक जनपद में 30 पद रखे जाने का निर्णय लिया गया था, जिसको प्रदेश के 70 जनपदों में लागू कर दिया गया है।

उत्तर प्रदेश में उद्योगों की स्थिति –

उ.प्र. सरकार की नीति लघु एवं कुटीर उद्योगों को बढ़ावा देने की रही है। प्रदेश के विकास कार्यक्रमों में एवं पंचवर्षीय योजनाओं में उनकों ऊँची प्राथमिकता दी गई है। लघु एवं कुटीर उद्योगों का प्रदेश के आर्थिक विकास में क्या स्थान है तथा ये राष्ट्रीय महत्व की समस्याओं का किस सीमा तक समाधान कर सकते हैं?इसके वैज्ञानिक विश्लेषण के लिए लघु एवं कुटीर उद्योगों का उत्पादन, रोजगार, निर्यात आदि में प्रत्यक्ष योगदान व इनका अर्थव्यवस्था के विकास में अप्रत्यक्ष योगदान का संक्षिप्त विवरण निम्न है।

लघु क्षेत्र में पंजीकृत इकाइयां –

लघु क्षेत्र में कार्यरत औद्योगिक इकाइयों का वर्गीकरण दो प्रमुख भागों में किया जा सकता है। प्रथम राज्य के उद्योग निदेशालय में पंजीकृत इकाइयां और द्वितीय अपंजीकृत औद्योगिक इकाइयां। मुख्यालय उद्योग निदेशालय उ.प्र., कानपुर के अधीन आने वाले लघु उद्योगों के पंजीकरण की वर्षवार प्रगति निम्नानुसार है–

(तालिका – 1 पिछले पृष्ठ पर देखें)

स्पष्ट रूप से हम यह कह सकते हैं कि उत्तर प्रदेश में उदारीकरण के बाद आर्थिक विकास में उद्योगों

की भूमिका का दृष्टिगत रखते हुए उद्योगों मे तीव्र एवं सन्तुलित विकास हेतु अपेक्षित अवस्थापना सुविधाओं का प्रसार कर औद्योगिक विकास हेतु अनुकूल वातावरण के सृजन का प्रयास कुछ वर्षों अच्छा रहा है। औद्योगिक क्षेत्र की विभिन्न योजनाओं एवं कार्यक्रमों के कार्यान्वयन से उत्तर प्रदेश में त्वरित औद्योगिक विकास का मार्ग प्रशस्त हुआ है। राज्य सरकार द्वारा निर्धारित नई औद्योगिक नीति का उद्देश्य स्थापित औद्योगिक क्षमता का अधिकतम उपयोग उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि तथा नवीन तकनीकों का उपयोग किया जाना अभी बाकी है।

पंचवर्षीय योजनाओं में लघु एवं कुटीर उद्योग पर व्यय –

भारत सरकार और योजना आयोग ने लघु कुटीर उद्योगों के महत्व को स्पष्ट रूप से स्वीकार किया। इसका मोटा अनुमान योजनाओं के अन्तर्गत व्यय की बढ़ती हुई राशि से लगाया जा सकता है। भारत सरकार द्वारा लघु एवं कुटीर ड्योगों के विकास पर प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत 048 करोड़ रुपये, द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत रुपये 187 करोड़, तृतीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत रुपये 248 करोड़, तीन वार्षिक योजनाओं की अवधि में 126.10 करोड़ रुपये, चतुर्थ योजना काल में 242 करोड़ रुपये, पाँचवीं योजना अवधि में 610 करोड़ रुपये व्यय किये गये। इनका विवरण निम्न तालिका में है – **(तालिका – 2 देखें)**

यद्यपि योजनाओं के अन्तर्गत व्यय राशि में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है तथापि यह बड़े दुर्भाग्य की बात है कि लघु एवं कुटीर उद्योग जिनमें अधिक लोगों को रोजगार देने की क्षमता है तथा जिसमें श्रम–प्रबन्ध भी आसानी से किया जा सकता है, की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया जा रहा है। इस बात की पुष्टि इनके अन्तर्गत किये गये प्रतिशत व्यय से होती है। यह प्रतिशत व्यय केवल द्वितीय पंचवर्षीय योजना में 4 प्रतिशत से अधिक था जबकि अन्य योजनाओं में यह मात्र 2 प्रतिशत या उससे भी कम है।

निष्कर्ष एवं सुझाव –

उत्तर प्रदेश की औद्योगिक संरचना और उसमें औद्योगिक विकास का अत्यन्त पिछड़ापन वस्तुतः उद्योगों का अनियमित प्रसार और तहजनित क्षेत्रीय विषमताओं के कारण है। कुछ विशेष क्षेत्रों में उद्योगों का विकास पूंजी उपलब्धता नगरीकरण और उद्योगों के लिए मौलिक आवश्यकताओं की प्रतिपूर्ति करने वाले कारकों की उपलब्धता के कारण केन्द्रित है। कानपुर, लखनऊ, इलाहाबाद और गाजियाबाद जैसे जनपदों में औद्योगिक संकेन्द्रण अन्य जनपदों की तुलना में अधिक है। राज्य के कुछ क्षत्रों में उपयुक्त कारणों से औद्योगिक विकास के असन्तुलन की स्थितियाँ विद्यमान हैं। राज्य सरकार द्वारा इन्हें कम विकसित क्षेत्र के रूप में स्वीकार भी किया गया है। इस सन्दर्भ में उत्तर प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में जनसंख्या की वृद्धि दर का मूल्यांकन भी समीचीन है।

उत्तर प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में जनसंख्या

तालिका–2

पंचवर्षीय योजना कालों में हुए व्यय का विवरण

योजना काल	सम्पूर्ण भारत में	राज्यों में	उत्तर प्रदेश		
			व्यय	प्रतिशत भारत	प्रतिशत राज्य
प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951–56)	1960.00	1245.00	153.37	7.8	12.3
द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1956–61)	4672.00	2115.00	233.36	5.0	11.0
तृतीय पंचवर्षीय योजना (1961–66)	8577.00	4227.00	560.63	6.5	13.3
चतुर्थ पंचवर्षीय योजना (1969–74)	15779.00	7675.00	1165.57	7.4	15.2
पंचम पंचवर्षीय योजना (1974–79)	39426.00	20015.00	2909.23	7.4	14.5
षष्ठम पंचवर्षीय योजना (1980–85)	109292.00	49458.00	6594.31	6.0	13.3
सप्तम पंचवर्षीय योजना (1985–90)	218729.70	87492.40	11948.72	5.5	13.7
अष्टम पंचवर्षीय योजना (1992–97)	485457.31	187937.50	21679.82	4.5	11.5
नवम पंचवर्षीय योजना (1997–02)	859200.00	369839.00	41910.00	5.4	12.5
दशम् पंचवर्षीय योजना (2002–07)	1592300.00	671009.00	59708.00	3.7	8.9
ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007–12)	1859200.00	369839.00	41910.00	5.4	22.5
बारहवीं पंचवर्षीय योजना (2012–17)	2292300.00	871009.00	59708.00	3.7	138.9

वितरण की स्थिति से स्पष्ट होता है कि प्रदेश की जनसंख्या का एक तिहाई से भी अधिक भाग पूर्वी क्षेत्र में है। लेकिन औद्योगिक दृष्टि से इस क्षेत्र में उद्योगों की नितान्त कमी है। यह स्थिति विभिन्न क्षेत्रों की औद्योगिक विषमता और सन्तुलन को स्पष्ट करती है। इस परिप्रेक्ष्य में छठवीं, सातवीं एवं आठवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत प्रदेश में औद्योगिक विकास की नीतियों, दशाओं और उपलब्धियों का विश्लेषण भी किया गया है। जिससे औद्योगिक समस्याओं का पता आसानी से लगाया जा सकता है। उत्तर प्रदेश में उदारीकरण के परिप्रेक्ष्य में औद्योगिक विकास में जो उद्योग लगाये गये है जिनमें वृहद उद्योग, मध्यम उद्योग एवं लघु उद्योगों की समस्याओं को समझा जा सकता है और इसी आधार पर औद्योगिक विकास का पता लगाया जा सकता है।

सुझाव –

● उत्तर प्रदेश के औद्योगिक विकास में व्याप्त असन्तुलन एवं क्षेत्रीय प्रादेशिक विषमता के निवारण तथा राष्ट्रीय विकास दर में सामन्जस्य स्थापित करने हेतु आवश्यक है कि सम्बन्धित वाणिज्यिक एवं औद्योगिक नीति ऐसी होनी चाहिए कि उत्तर प्रदेश की अर्थव्यवस्था की विकृतियों का निराकरण कर सकें।

● निजी क्षेत्र के उद्योगों को भी प्रोत्साहन देने के लिए औद्योगिक संस्थाओं का निर्माण किया जाना चाहिए। इसमें सबसे महत्वपूर्ण योगदान उद्यमियों का होता है। उन्हें अच्छी प्रकार से प्रशिक्षित किया जाना चाहिए साथ ही प्रादेशित नीति में और अधिक उदारीकरण की नीति अपनायी जानी चाहिए।

● उत्तर प्रदेश औद्योगिक तकनीकी का स्तर अभी सामान्यतः निम्न है अतः उच्च तकनीकी के लाभ से लोगों को प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। साथ ही प्रशिक्षण एवं प्रबन्धन सुविधाओं का व्यापक प्रसार अपेक्षित ही इन प्रयासो से उत्तर प्रदेश की औद्योगिक क्षमता का पूर्ण एवं कुशल प्रयोग सम्भव हो सकेगा। इस प्रकार से निजी क्षेत्र के विनियोजन में वृद्धि उत्तर प्रदेश के औद्योगीकरण में सहायक सिद्ध हो सकेगी।

● लघु एवं कुटीर उद्योगों की रोजगार सृजन में बहुत महत्वपूर्ण है। इसके साथ ही वे समाज को विविध प्रकार के उत्पाद एवं सेवाएं उपलब्ध कराते हैं जो समाज के लिए अति आवश्यक है। राज्य सरकार को चाहिए कि इस सेक्टर का विकास भारी एवं मध्यम उद्योगों के साथ समन्वित एवं सन्तुलित कर दी जानी चाहिए। यह दोनों सेक्टर एक दूसरे के पूरक के रूप में विकसित किये जाने चाहिए।

● विद्युत बिलों का भुगतान ''मिनिमम चार्ज'' के बजाय वास्तविक खपत के आधार पर होना चाहिए ताकि इस प्रकार के उद्योगों पर आर्थिक अनावश्यक भार न पड़े। उद्योगों को प्रोत्साहित करने के लिए उत्तर प्रदेश व्यापार कर में धारा 4 क के अन्तर्गत छूट प्रदान की जाय।

● उद्योगों में मिनिमम ''वेजेज'' की सीमा समाप्त की जानी चाहिए। यदि यह सम्भव न हो तो ''वेजेज'' को ''उत्पादकता'' परफारमेंस से जोड़ा जाना चाहिए ताकि ''श्रमिकों'' दक्षता (इफिसेयन्सी) की बढ़ोत्तरी हो सके।

● टेक्सटाइल उद्योगों के और अधिक विकास हेतु ''टेक्सटाइल अपग्रेडेशन आफ फण्ड्स योजना'' (टफ योजना) को और अधिक सरलीकरण/उदारीकरण किये जाने की आवश्यकता है। साथ ही कच्चा माल यानथ्रेड आदि का आयात खोलना चाहिए, जिससे कच्चा माल सुगमता से उपलब्ध हो सके।

संदर्भ ग्रन्थ–सूची

1. डा. अग्रवाल, एन. एल. – भारतीय कृषि अर्थतंत्र सप्तम् संस्करण 1999, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ आकादमी, जयपुर।
2. डा. गुप्ता, के. एल. – भारत में लोक उद्योग, षष्टम संस्करण 1989–90 नव युग साहित्य सदन लोहा मण्डी, आगरा–2।
3. डा. गुप्ता, के. आर. – लिबराइजेशन एण्ड ग्लोबलाइजेशन ऑफ इण्डियन इकोनॉमी (1995) आटलांटिक पब्लिसर्स एवं डिस्ट्रीव्यूटर्स – नई दिल्ली।
4. चक्रवर्ती, राघवन – ग्लोबलाइजेशन मॉडल, 13 जुलाई, 1996 नं.–23।
5. जालान, विमल– भारत का आर्थिक संकट और समाधान, दूसरा संस्करण 2001 नेशनल बुक ट्रस्ट, इण्डिया। -S ग्रीनपार्क, नई दिल्ली–110016।
6. डा. जैन, एस. सी. एवं डा. मेमोरिया, चतुर्भुज – भारत की आर्थिक समस्याएं 13वाँ संस्करण, 1996 साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा।
7. दास, एन. – इण्डस्ट्रीयल इण्टरप्राइजेज इन इण्डिया, 1956 दि पब्लिक सेक्टर इन इण्डिया।
8. दास, नबाब गोपाल – इण्डस्ट्रीयल इण्टरप्राइजेज इन इण्डिया।
9. दूबे, अजय कुमार – भारत का भूमण्डलीयकरण, प्रथम संस्करण 2003 वीणा प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दरियागंज, नई–दिल्ली–110002।
10. धर एवं लिण्डाल – द रोल आफ स्माल इण्टरप्राइजेज इन इण्डिया इकोनॉमिक डेवलपमेन्ट 1988।

◈◈

RNI : UPMUL00620/24/1/2014-TC ISSN : 2394-4366

Received: 05 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

भारतीय जनचेतना, पुनर्जागरण और स्वामी दयानन्द सरस्वती

– डॉ. रीना चन्द्रा
विभागाध्यक्ष – शिक्षाशास्त्र विभाग,
डी. ए. वी. (पी. जी.) कॉलेज,
देहरादून–248001 (उत्तराखण्ड)

ई.मेलः
dr.reenachandra@rediffmail.com

सारांश

जिस देश में गंगा, यमुना और सरस्वती जैसी अविरल धारायें भारतवर्ष को पल्लवित व पुष्पित करती हों, उसी देश में स्वामी दयानन्द सरस्वती, रवीन्द्र नाथ टैगोर और स्वामी विवेकानन्द आदि महापुरुषों की दिव्य दृष्टि, कर्म, चिन्तन और शैक्षिक दृष्टि की अविरल ध्वनि और तरंगें आज भी देश को गौरवान्वित कर रही हैं। भारतवर्ष में आये बाहरी आक्रान्ताओं के विभिन्न शासन कालों, यथा 'मुस्लिम या मध्यकाल', मिशनरियों और ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना के फलस्वरूप पुरानी वैदिककालीन शिक्षा संस्थाओं विश्वविद्यालयों, राजनैतिक तथा सामाजिक परिस्थितियों में भी परिवर्तन होता चला गया तथा इनकी देश विरोधी नीतियों के कारण वैदिक काल से चली आ रही सभ्यता और संस्कृति को नष्ट–भ्रष्ट कर दिया। इस परिवर्तन ने भारतीयों को पराधीनता की ओर उन्मुख कर दिया। पराधीनता से स्वतंत्र अस्तित्व के संघर्ष के लिए 'भारतीय संस्कृति' और जन–चेतना को पुनः जागृति करने के लिए स्वामी दयानन्द सरस्वती ने 'आर्य–समाज', स्वामी विवेकानन्द ने 'रामकृष्ण मिशन' और रवीन्द्रनाथ टैगोर की 'विश्वभारती' आदि ने देश–विदेश और विशेशतः उत्तराखण्ड के कुमाऊँ क्षेत्र में वैदिक संस्कृति के आधार पर शिक्षण संस्थायें खोलकर मिशनरियों तथा ब्रिटिश सम्राज्य के विरुद्ध संघर्षरत होकर स्वतंत्रता आन्दोलन का पुनः सूत्रपात किया।

की वर्डस (Key Words) – स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वतंत्रता आन्दोलन, आर्य–समाज, शिक्षण संस्थायें, भारतीय जनचेतना, पुनर्जागरण, संघर्ष।

प्रस्तावना –

स्वामी दयानन्द का जन्म गुजरात राज्य के टंकारा नामक स्थान में एक ब्राह्मण परिवार में सन् 1824 को हुआ था। बचपन का नाम 'मूलशंकर' था। उनकी बाल्यावस्था में शिवमंदिर में पूजा के समय एक मूषक घटना ने उनकों विचलित कर दिया कि ईश्वर जब अपनी रक्षा नहीं कर सकता है तो वह अपने भक्तों की रक्षा कैसे करेगा? इसी प्रकार जीवन मृत्यु से सम्बन्धित कई घटनायें भी देखी, जिसके कारण विरक्ति का भाव उत्पन्न होने पर वह सत्य की खोज में घर को त्यागकर निकल गये। इधर–उधर भ्रमण किया, कई सन्यासियों और महात्माओं से मिले, तर्क–व्याख्यान किये पर उनको 'सत्य' के सम्बन्ध में संतुष्टि नहीं प्राप्त हो पायी। अन्त में सन् 1860 में श्री दयानन्द सरस्वती सत्य की खोज करते–करते गुरु विरजानन्द के पास मथुरा पहुँचे तथा तीन वर्ष तक गुरु

चरणों में सेवा–साधुता और विद्या अध्ययन किया। विरजानन्द ने उन्हें कहा 'आर्श ग्रंथों' का अध्ययन करो। तत्पश्चात् उन्होंने 'महाभाष्य ग्रंथ' का अध्ययन किया। गुरू ने उन्हें वेदों, व्याकरण, योगसूत्र आदि का अध्ययन करवाया।

गुरु विरजानन्द ने शिष्य को आदेश दिया कि भारतदेश दीन–हीन हो रहा है। समाज खोखला हो गया है, धर्म और संस्कृति की छवि धूमिल हो गयी है, लोग अनेक दुःखों से पीड़ित है, उनका उद्धार करो। मत–मतान्तरों से जो कुरीतियाँ तथा आडम्बर प्रचलित हो गये है, उन्हें मिटाओ। लोग अंधविश्वासों में लिप्त हैं, उन्हें दूर करो। मनुष्य कृत ग्रन्थों को तिलांजलि दो तथा ऋषि कृत ग्रन्थों पर आधरित शिक्षा, परम्परा, संस्कार अध्यात्म, साँस्कृतिक, नैतिक मूल्यों आदि से समाज में नवचेतना का जागरण करो। महार्षि दयानन्द सरस्वती ने उत्तर प्रदेश, वर्तमान उत्तराखण्ड, बिहार, बंगाल, गुजरात, राजस्थान, पंजाब (लाहौर), महाराष्ट्र के लगभग 39 शीर्ष स्थानों पर शास्त्रार्थ किया। स्वामी जी ने पहला शास्त्रार्थ अजमेर में ईसाई मिशनरियों के साथ और अन्तिम शास्त्रार्थ उदयपुर में एक मुसलमान मौलवी के साथ किया था। शास्त्रार्थ के अतिरिक्त स्वामी जी राज–धर्म व नीति–शास्त्र विषयों पर भी अपने उपदेश देते थे।

स्वामी दयानन्द जी के भाषण एवं उपदेशों से जनता प्रभवित होने लगी तथा 'नवराष्ट्र चेतना का जागरण' स्वरूप लेने लगा, तब ब्रिटिश शासन को चिंता सताने लगी और अपने गुप्तचर स्वामी जी के पीछे लगा दिये। अंग्रेजों को यह अनुभव हो गया कि सन् 1857 के सैनिक विद्रोह के एक प्रेरणा स्त्रोत स्वामी दयानन्द सरस्वती थे। प्रथम स्वतंत्रता आन्दोलन के विफल होने पर सन् 1857 से 1860 तक मध्य भारत के जंगलों और पहाड़ों में गुप्त प्रवास कर स्वतंत्रता आन्दोलन को पुनः अनुप्राणित करने का प्रयास किया ।

''महार्षि दयानन्द'' पुस्तक के लेखक यदुवंश सहाय ने स्वामी के बारे में प्राप्त गुप्त रिपोर्ट का संदर्भ दिया है, जिसके अनुसार– स्वामी जी वेद मंत्रों की व्याख्या करते–करते लोगों को समझाते थे कि हमारा अपना स्वराज्य हो, अपने शत्रुओं को पराजित करने के लिए हमारे पास हर प्रकार के अच्छे और सुदृढ़ अस्त्र–शस्त्र हों, अपने राष्ट्र को अखण्ड और सुरक्षित रखने के लिए हम शौर्य, धैर्य, नीति, विनय, पराक्रम और बलादि उत्तम गुणों से युक्त हो, अन्य देशवासी राजा हमारें देश में न हो तथा हम लोग पराधीन न हो। एक अन्य रिपोर्ट में 'सत्यार्थ–प्रकाश' के दशवें समुल्लास का संदर्भ दिया गया है, जिसमें स्वामी जी लिखते हैं कि '' विदेशियों के आर्यवत् में राज्य होने के कारण आपस में फूट, मतभेद, ब्रह्मचर्य का सेवन न करना, विद्या न पढ़ना–पढ़ाना, बाल्यवास्था में अस्वयंवर विवाह, विषयासक्ति, मिथ्या भाषण आदि कुलक्षण, वेदविद्या का अप्रचार आदि कुकर्म हैं। जब आपस में भाई–भाई लड़ते है, तभी तीसरा विदेशी आकर पंच बन बैठता हैं।''

स्वामी दयानन्द ने सन् 1875 ई. में बम्बई में 'आर्य–समाज' की स्थापना की। 'आर्य–समाज' की स्थापना से उन्होंने धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक सुधार आन्दोलनों मे एक नयी दिशा और गति दी। 'सत्यार्थ–प्रकाश' महत्वपूर्ण कृति की रचना की। 'सत्यार्थ–प्रकाश' में वैदिक नियमों का वर्णन है। 'आर्य–समाज संस्था' और 'सत्यार्थ–प्रकाश' कृति आज वर्तमान में भी एक मजबूत कड़ी के रूप में वैदिक–साहित्य को प्रकाशित कर रही है।

यदि हम अपना ध्यान 'आर्य–समाज' की ओर आर्कषित करते हैं तो ज्ञात होता है कि यह एक 'हिन्दू सुधार' आन्दोलन था और है भी। क्योंकि जिस समय 'आर्य–समाज' की स्थापना हुई थी, उस समय आर्यों (भारतीयों) की पराधीनता अपनी चरम सीमा पर थी और अन्धविश्वासों तथा पाश्चात्य संस्कृति का ही बोलबाला था। पाश्चात्य संस्कृति व सभ्यता के रंग में भारतीय अपनी वैदिक संस्कृति को विस्मृति करते जा रहे थे और 'ईसाई–धर्म' को स्वीकार तथा अनुसरण करते जा रहे थे। ऐसे समय में स्वामी दयानन्द सरस्वती वैदिक धर्म के प्रचार और प्रसार के पथ प्रदर्शक बने। 'आर्य–समाज' का आदर्श वाक्य हैः ''कृश्वन्तोंविश्वमार्यम्'' ''जिसका अर्थ है– विश्व को आर्य बनाते चलो।''

इसको हम महार्षि रवीन्द्रनाथ टैगोर के शब्दों में दृष्टिपात कर सकते हैं– ''स्वामी दयानन्द आधुनिक भारत के सबसे महान् पथ–निर्माता थे, जिन्होंने जातियों, उपजातियों, छुआछूत आदि के भयंकर जंगलों को चीरकर हमारे देश के ह्रास–काल में ईश्वर–भक्ति और मानव सेवा का सहज मार्ग प्रस्तुत किया। उन्होने पैनी दृष्टि तथा दृढ़–संकल्प के साथ लोगों में आत्म सम्मान और मानसिक चेतना को उद्‌बुद्ध किया।''

समाज सुधार – 19वीं शताब्दी में भारतीय पश्चिमी सभ्यता और संस्कृति, भाषा, ज्ञान, शिक्षा के क्षेत्र में ब्रिटिश सरकार द्वारा ही चलायी जा रही राजनैतिक, शैक्षिक नीतियों के ही पराधीन थे। अंधविश्वास–

जातिवाद, बाल विवाह, कर्मकाण्ड़ आदि का सर्वत्र बोल बोला था। स्वंतत्रता आन्दोलन के परिप्रेक्ष्य में 'आर्य – समाज' की देश में महत्वपूर्ण भूमिका थी क्योंकि जो लोग धर्म परिवर्तन कर चुके थे, उन्हें पुनः हिन्दू' बनाने के लिए 'शुद्धि आन्दोलन' चलाया। 'नमस्ते' शब्द को हिन्दू भी नहीं जानते थे, लेकिन आर्यसमाजियों ने 'अभिवादन' का यह तरीका प्रचलित किया।

इसी समय स्वामी जी ने भारतवर्ष में ''वेदों की ओर लौटो'' नारे के साथ पुर्नजागरण की नयी दिशा सिंचित की। 'आर्य–समाज' के द्वारा स्वदेशी, स्वभाषा, स्वः संस्कृति, और स्वःधर्म के उद्देश्यों को पूर्णतः भारतीय मस्तिष्क में संजोने का कार्य किया। यदि हम माने तो स्वदेशी और स्वतंत्र भारत की अवधारणा का 'मूल–आधार', 'आर्य–समाज' ही है। स्वामी जी ऐसे व्यक्तित्व के थे, उनके विचार, चिन्तन इस प्रकार के थे कि आधुनिक भारत के धार्मिक महापुरुषों में 'स्वराज्य' शब्द का प्रयोग किया।'' इस प्रकार स्वामी जी भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के जन्मदाता भी थे।

'आर्य–समाज' से जुड़े व्यक्ति भारतीय धर्म, शिक्षा और संस्कृति का भी सम्मान करते थे। 'सत्यार्थ–प्रकाश' को हिन्दी में अनुवाद केशव चन्द्र सेन की सलाह में किया। क्योंकि स्वामी जी की मातृभाषा गुजराती थी । 'आर्य–समाज' की हिन्दी पत्रकारिता ने सम्पूर्ण देश को राष्ट्रीय संस्कृति, चिन्तन, धर्म की ओर जनता को आकर्षित किया।

''सरदार पटेल के षब्दों में – 'भारत की स्वतंत्रता की नींव वास्तव में स्वामी दयानन्द ने डाली।

लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने –'स्वामी जी को 'स्वराज्य' का प्रथम संदेशवाहक कहा।'

पराधीनता से स्वतंत्रता की ओर उद्घोषक के रूप में (कुमाऊँ के परिप्रेक्ष्य में) –

स्वामी जी के अनुसार देश की प्रगति शिक्षा के द्वारा ही सम्भव हैं। हम सभी भारतीय एक श्रेश्ठ परम्परा के उत्ताधिकारी है अतः हमारी शिक्षा की जड़ें राष्ट्रीय भावना, संस्कृति और परम्परा में गहरी जमीं होनी चाहिए। स्वामी जी का शिक्षा–दर्शन था कि ईश्वर सत्, चित तथा आनन्द का प्रतीक हैं। व्यक्ति को धर्म और अधर्म दोनों का फल यही इसी पृथ्वी पर मिलता है। स्वामी जी ने शिक्षा के अधारभूत सिद्धान्तों को वैदिक संस्कृति के अनुरूप ही सिंचित करने को कहा। शिक्षा के उद्देश्यों में आत्मानुभुति, नैतिकता, आर्दशचरित्र तथा वैदिक धर्म और संस्कृति का पालन होना चाहिए। इसके साथ यह भी कहा कि माता–पिता को अपने बालकों में सत्य–असत्य का ज्ञान, शौर्य, का विकास करना चाहिए।

स्वामी जी को 'आर्य–समाज' की स्थापना एवं समाज–सुधार के रूप में ही अधिकतर जाना पहचाना जाता है, परन्तु ऐसा नहीं था वह एक ऐसे व्यक्तित्व के स्वामी थे जिन्होंने 'पराधीन आर्यावर्त' (भारत) में यह कहने का सर्वप्रथम साहस किया कि 'आर्यवर्त' (भारत) आर्यवर्तियों (भारतीयों) का ही है। स्वामी जी अपने प्रवचनों में श्रोतागणों को राष्ट्रीय भावना से ओत–प्रोत उपदेश ही देते थे।

सन् 1600 ई. में ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना के साथ ब्रिटिश शिक्षा का प्रारम्भ माना जाता है। अंग्रेजों ने अपने शासन को चलाने के लिए इस प्रकार शिक्षा व्यवस्था की, जो केवल उच्च वर्ग तक सीमित रहे और उनके लिए ही कार्य करें। इसलिए उन्होंनें कलकत्ता, बम्बई, मद्रास कॉलेजों की स्थापना की। इसके पश्चात् भारतवर्ष में शिक्षा के क्षेत्र में जो 'प्राच्य–पाश्चात्य' विवाद लम्बे समय से चला आ रहा था उसे लार्ड मैकाले ने सन् 1835 में सुलझा दिया। अंग्रेजों ने भारतीयों के अन्तःमन को आघात पहुँचाने के लिए मैकाले द्वारा दी गयी शिक्षा पद्धति को योजनाबद्ध तरीके से इस तरह पठन–पाठन में व्यवस्था की और यह अनुभव कराया कि भारतवर्ष का इतिहास, रीति–रिवाज, रहन–सहन सब में पिछड़ा हुआ है, इसलिए हमारे द्वारा दी गयी शिक्षा व्यवस्था ही उचित तथा व्यवस्थित है। इस बात से दुःखी होकर दक्षिण में 'समर्थ गुरू रामदास और तुकाराम ने सांस्कृतिक वातावरण का प्रचार किया।

सन् 1920 में गाँधी जी के 'असहयोग आन्दोलन के फलस्वरूप जो भारतीय विदेशों में शिक्षा ले रहे थे, उन्होंने वहाँ शिक्षा छोड़ दी, और ''मौलाना मोहम्मद अली'' ने अलीगढ़ में जो 'जामिया मिलिया इस्लामिया' विश्वविद्यालय स्थापित किया, वहाँ शिक्षा गृहण करने लगे। सन् 1925 में यह दिल्ली चला गया। इसी क्रम में 'बिहार विद्यापीठ', 'काशी विद्यापीठ', बंगाल राष्ट्रीय विद्यालय', 'गुजरात विद्यापीठ' आदि अनेक राष्ट्रीय स्कूलों तथा कॉलेज की स्थापना की गयी।

राष्ट्रीय आन्दोलन का प्रभाव उत्तराखण्ड के कुमाऊँ और गढ़वाल मण्डल पर भी पड़ा। कुमाऊँ में मिशनरियों द्वारा स्थापित स्कूलों में 'आर्य–समाज' का प्रभाव पड़ा। क्योंकि दयानन्द सरस्वती के ऊपर पाश्चात्य सभ्यता का कोई प्रभाव नहीं था अतः उन्होंने 'हिन्दी' भाषा को माध्यम बनाकर कुमाऊँ क्षेत्र में पुनर्जागरण स्थापित

किया। कुमाऊँ हिमालय का बड़ा भाग होने के कारण 'आर्य–समाज' के अनुकूल कई पाठशलाएँ खोली गयीं और आर्य–समाज के कार्यकर्त्ताओं ने अनेक स्थानों पर हाईस्कूलों की स्थापना की। कुमाऊँ में यह संस्थाएं आज भी सक्रिय हैं।

स्वामी दयानन्द सरस्वती की मृत्यु के पश्चात् उनकी स्मृति में भारत के कोने–कोने में 'दयानन्द एग्लो वैदिक' कॉलेज खोलने का प्रयास 'महात्मा हंसराज' ने किया। सन् 1886 को 'आर्य–समाज' लाहौर के भवन में देश का पहला डी. ए. वी. कॉलेज खोला। इसका स्वतंत्रता आन्दोलन में महत्वपूर्ण योगदान था। 'ईसाई' मिशनारियों के स्कूलों का बहिष्कार शुरू हुआ और डी. ए. वी. स्कूल में छात्रों का आना प्रारम्भ हुआ। छात्रों की संख्या बढ़ने से इन विद्यालयों की सम्पूर्ण भारत में भी वृद्धि होने लगी। स्वामी दयानन्द ने जहाँ–जहाँ अपने व्याख्यान दिये लगभग सभी स्थानों पर दयानन्द एग्लो वैदिक स्कूल एवं कॉलेज खुले। देहरादून में स्थिति 'डी. ए. वी. कॉलेज सन् 1892 ई. को 'सायंकालीन आर्य–समाज स्कूल' मेरठ से हस्तांतरित होकर आया था। यहाँ श्री पूरन सिंह जी ने आर्य–समाज की प्रेरणा से अपनी अचल सम्पत्ति दानकर डी. ए. वी. कॉलेज की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया।ये संस्थायें 'आर्य–समाज' के उद्देश्यों के अनुसार चल रही हैं। 'असतो मा सद्गमय' उक्ति को सार्थक कर रही हैं।' आर्य–समाज' की स्थापना के फलस्वरूप 'स्वामी श्रद्धानन्द की अध्यक्षता में सन् 1898 में पंजाब प्रतिनिधि सभी ने 'गुरुकुल प्रणाली' की स्थापना की। सन् 1902 'गुरुकुल काँगड़ी' की स्थापना की गयी। सन् 1930 में यह हरिद्वार स्थान्तरित कर दी गयी।

डी. ए. वी. संस्थाओं के अतिरिक्त वैदिक संस्कृति को, और शिक्षा प्रणाली को पुर्नजीवित करने के लिए स्वामी दयानन्द सरस्वती के सुप्रसिद्ध ग्रंथ 'सत्यार्थ – प्रकाश' के आधार पर 'गुरूकुल शिक्षा प्रणाली' को पुर्न जीवित कर नये युग का प्रारम्भ किया गया। देहरादून में 'कन्या गुरुकुल राजपुर रोड़ में तथा गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय' हरिद्वार में स्थित है।

स्पष्ट है कि डी. ए. वी. संस्थानों और गुरुकुलों ने अंग्रेजी शासन के विरुद्ध स्वतंत्रता संघर्ष में कोई कसर नहीं छोड़ीं। यह दोनों संस्थाएं महार्षि दयानन्द के विचारों पर आज भी अडिग हैं। यहाँ 'हिन्दी'और 'संस्कृत' भाषाओं का अध्ययन, वैदिक साहित्य, संस्कृति की पुनरावृत्ति को स्मरण कराता है। अतः हम यह कह सकते हैं कि महार्षि दयानन्द के उपदेशों, व्याख्यानों तथा भ्रमण ने सम्पूर्ण भारत के नागरिकों में वैदिक संस्कृति को प्रसारित कर पुनर्जागरण तथा अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिए ब्रिटिश सरकार तथा शासन की नींव हिलाकर रख दी थी। आज वर्तमान में हम 'ओ३म', संस्कृति के साथ ही कार्यों का शुभारम्भ करते हैं। यह हमारे भारतीयत्व को जगाने के लिए एक अस्त्र के समान है। उत्तर भारत में 'आर्य–समाज' ने राष्ट्रीय आन्दोलन का सूत्रपात किया और डी. ए. वी. स्कूलों तथा कॉलेजों की श्रृंखला ने राजनैतिक क्रांति तथा स्वदेशी शिक्षा की दिशा में पहल की।

सुभाष चन्द्र बोस ने स्वामी दयानन्द को 'आधुनिक भारत का निर्माता बताया। यह कथन पूर्णतः सत्य सिद्ध हुआ। दयानन्द सरस्वती द्वारा जो जन जाग्रति भारतीय संस्कृति को पुर्नजीवित, स्वतंत्रतापूर्वक अपने देश में रहने, तथा हिन्दुत्व जागृति के लिए दिये योगदान को विस्मृति नहीं किया जा सकता।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. करगेती मदन मोहन, स्वतंत्रता आंदोलन तथा स्वातंर्त्र्योत्तर उत्तराखण्ड, प्रथम संस्करण (2016), प्रकाशक विनसर पब्लिशिंग कम्पनी, देहरादून, उत्तराखण्ड। पेज–54, 55, 57।
2. पंचौली डॉ. सत्य प्रकाश शिक्षा के आयाम, प्रथम संस्करण (2003) प्रकाशक– अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, अंसारी रोड़, नई दिल्ली। पेज– 71।
3. स्वरूप सक्सेना एन. आर. एवं कुमार संजय, शिक्षा दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धान्त, नवीन संस्करण, प्रकाशक आर. लाल. बुक डिपो, मेरठ– पेज–534–540।

4– सरस्वती महर्षि दयानन्द, 71वाँ संस्करण 2009, सत्यार्थ प्रकाश, प्रकाशक, आर्य साहित्य प्रचार ट्रस्ट, मुख्यालय, 427 नया बॉस, दिल्ली–6। पेज–30, 34।

5– सिंह, मनोज कुमार एवं चौधरी शैलेश कुमार, भारतीय राजनीतिक चिंतक, स्वामी दयानन्द सरस्वती, प्रथम संस्करण (2008), प्रकाशक– डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली–110002, पेज– 133–138, 139–142, 148–144।

6– सिंह, डॉ. सतनाम, शिक्षा के मूल सिद्धान्त और प्रमुख शिक्षा नीति, प्रथम संस्करण 2011, प्रकाशक– अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली। पेज– 117।

7– शेखावाटी श्यामसुन्दर, भारत में शैक्षिक व्यवस्था का विकास, प्रथम संस्करण (2007), प्रकाशक–अपोलो प्रकाशन पंचवटी राजा पार्क, जयपुर। पेज–107–108।

8– सहाय,यदुवंश,महार्षि दयानन्द, प्रथम संस्करण (2004), प्रकाशक–लोकभारती प्रकाशन,दिल्ली।पेज नं0 211–215।

9– त्रिवेदी राकेश,) भारतीय शिक्षा का इतिहास, प्रथम संस्करण (2006) प्रकाशक– ओमेगा पब्लिकेशन, नई अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली। पेज–49–63।

◈◈

RNI : UPMUL00620/24/1/2014-TC ISSN : 2394-4366

Received: 06 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

कानपुर महानगर में चौराहों का यातायात असन्तुलन एवं नियोजन

– डॉ. दीप्ति सुनेजा
प्राचार्या
गुरुनानक गर्ल्स (पी. जी.) कालेज, कानपुर–208002 (उत्तर प्रदेश)

ई–मेल :
deeptisuneja@gmail.com

– डा. प्रभाशंकर श्रीवास्तव
एसोसिएट प्रोफेसर – भूगोल विभाग, डी. ए–वी. कालेज, कानपुर–208001 (उत्तर प्रदेश)

ई–मेल :
pssrivastava@gmail.com

सारांश

कानपुर नगर में यातायात असंतुलन की स्थिति उत्पन्न हो गई हैं कानपुर शहर में कई चौराहे हैं लेकिन इन चौराहों पर हल्के व भारी वाहन भी चलते हैं। यही कारण है कि इन चौराहों में से पाँच चौराहों का चयन और अध्ययन किया गया है। ये पाँच चौराहे बड़ा चौराहा, परेड चौराहा, फूलबाग चौराहा, गोविन्द नगर चौराहा व घण्टाघर चौराहा है। अतः इस असंतुलन को दूर करने के लिए कानपुर महानगर के चौराहों के आस–पास अतिक्रमण को हटाया जाय जिससे नगर में यातायात असंतुलन की स्थिति को दूर किया जा सके।

मुख्य शब्द– असंतुलन, यातायात, अतिक्रमण।

प्रस्तावना –

किसी भी नगर की आर्थिक व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए यातायात मार्गों व साधनों की आवश्यकता होती है। जिससे एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाया जा सके। किसी भी देश, राज्य व नगर को जोड़ने में यातायात विकास प्रमुख भूमिका निभाते हैं। प्राचीन काल में यातायात के मार्गों का विकास पगडण्डियों द्वारा किया गया था।

रेलवे के विस्तार के साथ पक्की सड़कों की आवश्यकता पड़ने लगी क्योंकि रेलवे लाइन तक पहुँचने के लिए इन मार्गों की आवश्यकता पड़ने लगी। इस प्रकार उस समय जो कच्ची सड़कें थी उनको पक्की सड़कों में बदल दिया गया और जो पगडण्डियाँ थीं वे कच्ची सड़कों में बदल दी गई।

मिलिट्री बोर्ड व पी. डबलू. डी. ने इन सड़कों को 1960 से 1984 के बीच बनवाया।[1] सन् 1907 को सड़कों को वर्गीकृत किया गया। पुलों व नदियों के किनारों पर पक्की सड़कों एवं कच्ची सड़कों का निर्माण किया गया। कानपुर नगर में आवागमन के लिए विभिन्न वाहनों का आवागमन होता है जिसमें बस, ट्रक, टैम्पों, टैक्सी, मोटर साइकिल, रिक्शा आदि हैं।

अतः सड़क यातायात विश्वव्यापी और अत्यावश्यक यातायात का साधन हैं। वस्तुतः सड़क यातायात ही समाज की मूलभूत यातायात आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाला साधन है। पूर्व विद्वानों ने ठीक ही कहा है कि ''पहिया आधुनिक सभ्यता को गति देने वाला यंत्र है।''

अध्ययन क्षेत्र –

कानपुर महानगर $26^{0}28'15''$ उत्तरी अक्षांश तथा $80^{0}23'45''$ पूर्वी देशान्तर पर स्थित है नगर का क्षेत्रफल 231.95 वर्ग किमी. है। नगर

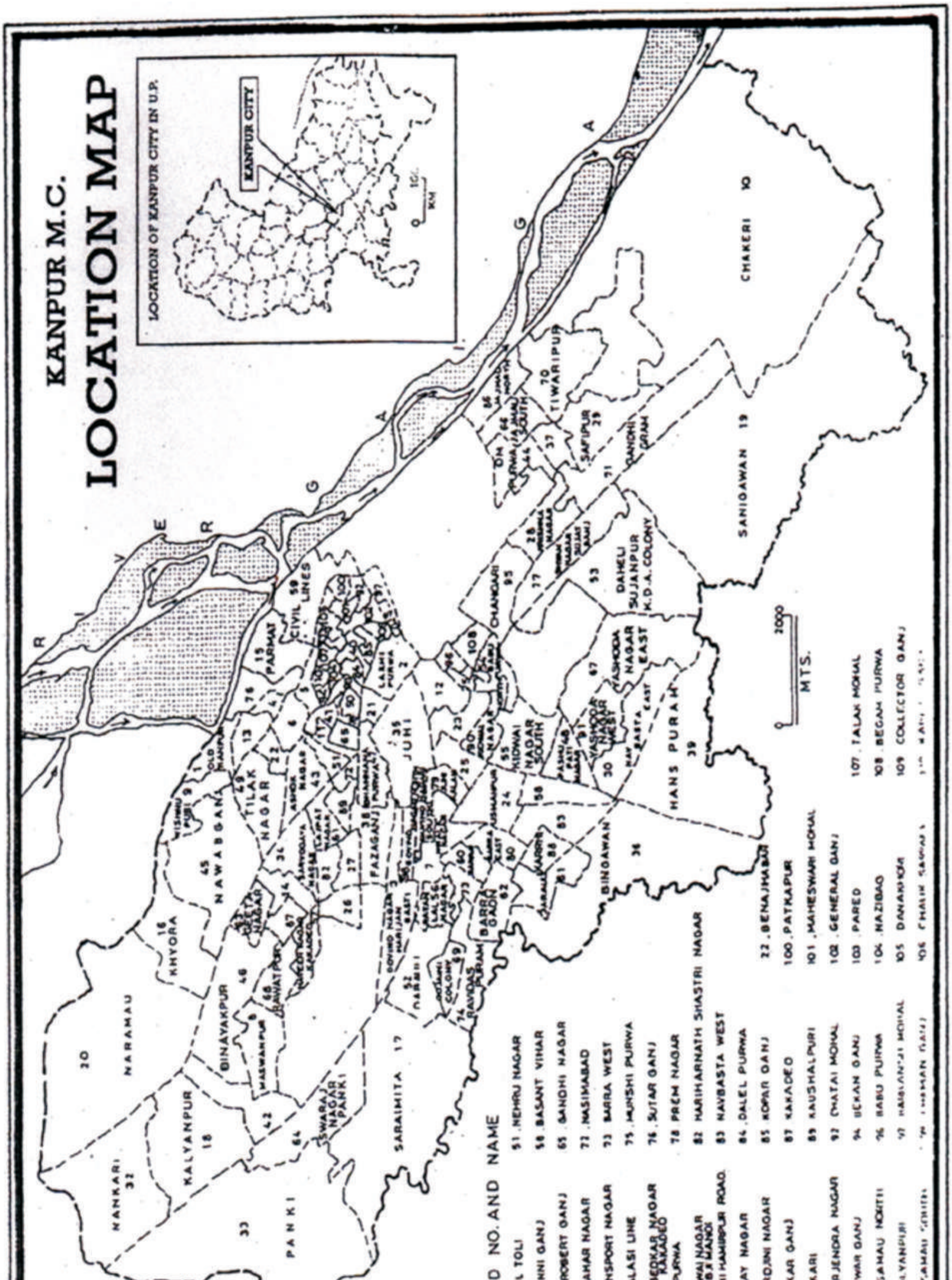
KANPUR M.C.
LOCATION MAP
LOCATION OF KANPUR CITY IN U.P.
KANPUR CITY
RIVER GANGA
WARD NO. AND NAME
MTS.

FIG. 01

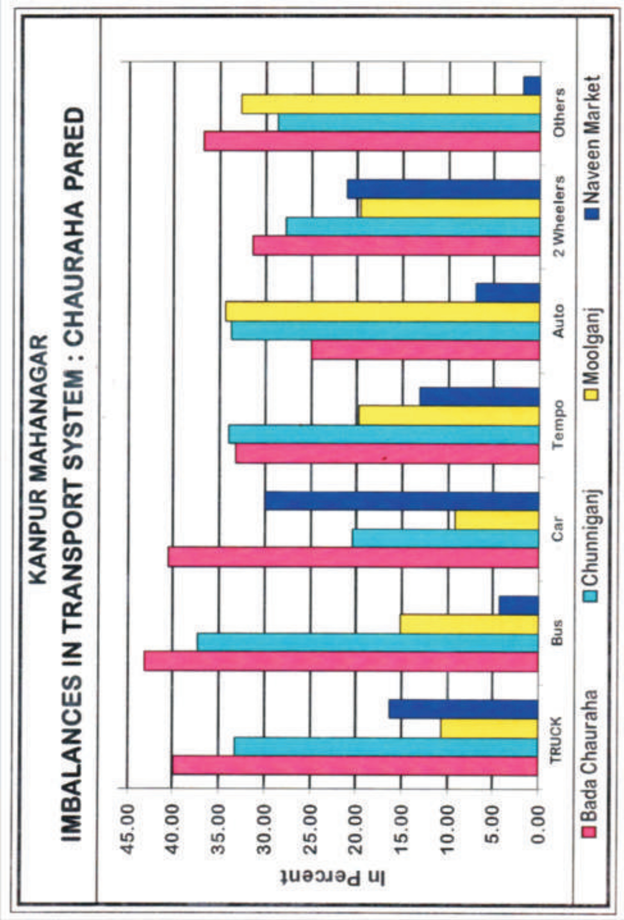

(Fig.-1)

की कुल जनसंख्या 25,51,337 व्यक्ति (2011 की जनगणना) है। कानपुर महानगर के यातायात, बड़ा चौराहा, परेड चौराहा, फूलबाग चौराहा, घण्टाघर चौराहा व गोविन्दनगर चौराहा का सर्वेक्षण कर उनका अध्ययन किया गया है क्षेत्र के रूप में पाँच चौराहों का चुनाव किया जा रहा है।

अध्ययन का उद्देश्य –

1. महानगर के मुख्य पाँच चौराहों की परिवहन व्यवस्था का नई तकनीक द्वारा अध्ययन पर विशेष बल।

2. महानगर की चयनित चौराहों की यातायात विकास व समस्या के सिद्धान्तों की विवेचना।

3. चयनित चौराहों की सड़कों के आस–पास बाजारों को हटाना। जिससे चौराहों की बढ़ती जाम की समस्या का समाधान।

4. चौराहों को सुगम बनाने के लिए ओवरब्रिज का निर्माण करना।

अध्ययन विधितंत्र –

प्रस्तुत अध्ययन के विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए विषयवस्तु से सम्बन्धित आँकड़ों तथा सूचनाओं का संकलन एवं आवश्यकतानुसार सर्वेक्षण हेतु प्रतिदर्श परिवहन इकाईयों का प्रतिचयन किया गया है। साथ ही मूल्यांकन प्रक्रिया के फलस्वरूप भूगोल जगत में मान्य मात्रात्मक विधियाँ, मानचित्र कला के विविध पत्रों का यथासंभव एवं यथास्थान पर प्रयोग किया गया है। इसके उपरान्त प्राथमिक एवं द्वितीयक आँकड़ों को आवश्यकतानुसार वर्गीकरण एवं सारणीकरण के उपरान्त मानचित्रों एवं आलेखों द्वारा प्रदर्शित किया गया है।

इस प्रकार चयनित चौराहों के कानपुर महानगर के विकास की प्रभावी योजनायें बनाई जा सकें।

परेड चौराहा –

कानपुर महानगर के यातायात में असंतुलन के लिए परेड चौराहे को तालिका क्रमांक 01 में प्रदर्शित किया गया है। परेड चौराहे पर अति व्यस्त समय में कुल

सारणी क्रमांक–1

परेड चौराहा : नगर के यातायात में असंतुलन वाहन संख्या (प्रतिशत में)

क्र. सं.	गन्तव्य स्थल	ट्रक	बस	कार	टैम्पों	आटो	दो पहिया	अन्य	योग
1.	बड़े चौराहे	39.86	43.16	40.51	33.18	24.90	31.45	36.80	33.71
2.	चुन्नीगंज	33.21	37.40	20.35	34.04	33.72	27.72	28.69	26.86
3.	मूलगंज	10.59	15.14	9.17	19.70	34.42	19.70	32.68	18.82
4.	नवीन मार्केट	16.31	4.29	29.95	13.07	6.93	21.12	18.10	2060
	योग	3.28	0.21	17.06	0.91	0.87	69.19	8.45	100.00

स्रोत : सर्वेक्षण द्वारा 2019

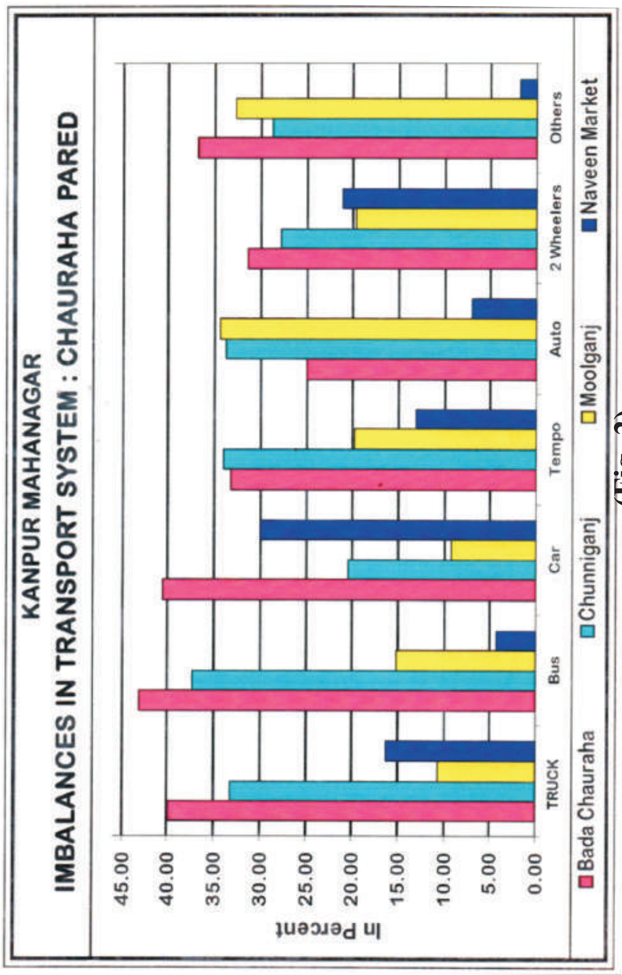

(Fig.-2)

वाहन 407172 वाहन गुजरते हैं। **(सारणी क्रमांक–1 पिछले पृष्ठ पर देखिये)।**

इस चौराहे से चार मार्ग जाते हैं, जिनमें से बड़े चौराहे की ओर जाने वाले सबसे अधिक ट्रकों की संख्या 5336 है जो सम्पूर्ण का 39.86 प्रतिशत है जब कि मूलगंज की ओर जाने वाले ट्रकों की संख्या सबसे कम 1418 है जो सम्पूर्ण का 10.59 प्रतिशत है। इसी प्रकार सबसे अधिक बसों की संख्या 382 वाहन बड़े चौराहे की ओर जाते हैं जो सम्पूर्ण का 43.16 प्रतिशत है। नवीन मार्केट की ओर 38 बसों का आवागमन होता है जो सम्पूर्ण का 4.29 प्रतिशत है। बड़े चौराहे की ओर 28132 कारें आती जाती हैं जो सम्पूर्ण का 40.51 प्रतिशत है। चुन्नीगंज की ओर 14135 कारें जाती हैं जो सम्पूर्ण का 20.35 प्रतिशत है। मूलगंज की ओर कारों की संख्या 6368 है जो सम्पूर्ण का 9.17 प्रतिशत है। नवीन मार्केट की ओर कारों का अवागमन 20803 है जो सम्पूर्ण का 29.95 प्रतिशत है। टैम्पों का आवागमन सबसे अधिक चुन्नीगंज की ओर 1268 है जो सम्पूर्ण का 34.04 प्रतिशत है। इसी प्रकार बड़े चौराहे की ओर टैम्पों का अवागमन 33.18 प्रतिशत होता है। नवीन मार्केट की ओर 6.93 प्रतिशत आटो का आवागमन होता है। इस प्रकार प्रदर्शित सारणी में विभिन्न मार्गों पर वाहनों के आवागमन में असंतुलन पैदा हो रहा है।

गोविन्द नगर चौराहा –

गोविन्द नगर चौराहे पर जाम की समस्या चरम व्यस्त समय में अधिक रहती है तथा यातायात असतुलन की स्थिति उत्पन्न होती है। सारणी क्रमांक–2 में इस चौराहे से चार मार्ग जाते हैं जिनमें से सबसे अधिक वाहनों का आवागमन फजलगंज की ओर रहता है। इस गोविन्द नगर की ओर ट्रकों की संख्या 2129 है जो सम्पूर्ण ट्रकों का 12.96 प्रतिशत है। फजलगंज की ओर ट्रकों की संख्या 7903 है जो सम्पूर्ण का 48.14 प्रतिशत है। बारादेवी

सारणी क्रमांक–2

गोविन्द नगर : नगर के यातायात में असंतुलन वाहन संख्या (प्रतिशत में)

क्र. सं.	गन्तव्य स्थल	ट्रक	बस	कार	टैम्पों	आटो	दो पहिया	अन्य	योग
1.	गोविन्द नगर	12.96	12.02	5.69	28.57	12.55	8.32	24.05	9.87
2.	फजलगंज	48.14	16.57	53.27	37.04	39.67	43.44	27.17	41.90
3.	बारादेवी	25.19	18.88	11.38	17.60	12.95	21.18	21.74	19.50
4.	नौबस्ता डेरी	13.68	52.51	29.64	16.77	34.81	27.07	27.02	28.70
	योग	8.68	9.25	18.76	0.31	0.13	54.39	7.83	100.00

स्रोत : सर्वेक्षण द्वारा 2019

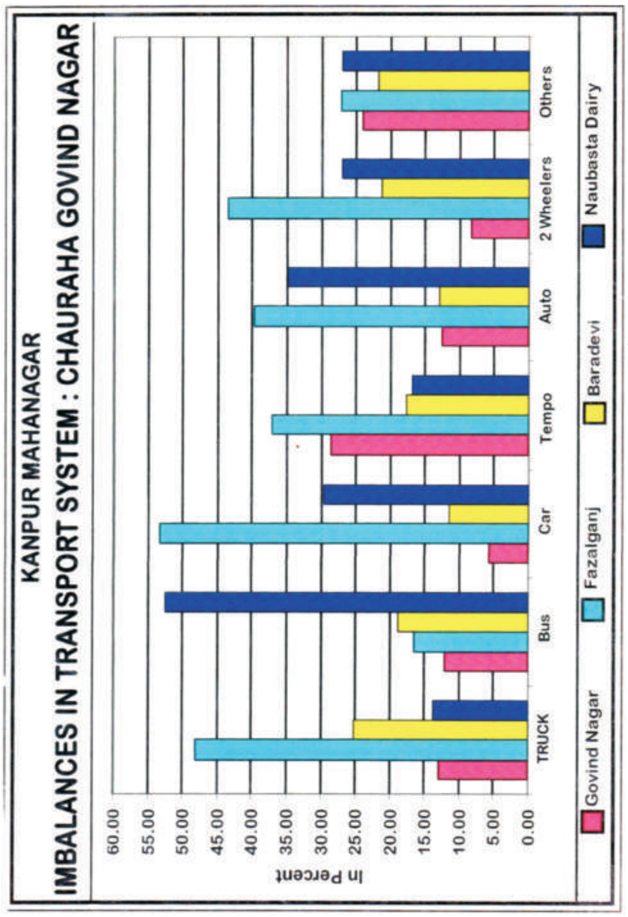

(Fig.-3)

की ओर ट्रकों की संख्या 4136 है जो सम्पूर्ण का 25.19 प्रतिशत है। नौबस्ता की ओर ट्रकों की संख्या 22.47 है जो सम्पूर्ण का 13.68 प्रतिशत है। इसी प्रकार बसों की संख्या की संख्या 12.02 प्रतिशत है। **(सारणी क्रमांक–2 पिछले पृष्ठ पर देखिये)।**

कारों की संख्या सबसे अधिक फजलगंज की ओर 18885 है जो सम्पूर्ण का 53.27 प्रतिशत है। नौबस्ता डेरी की ओरकारों की संख्या 10510 है जो सम्पूर्ण का 29. 64 प्रतिशत है। इसी प्रकार बारादेवी की ओर कारों की संख्या 4035 है जो सम्पूर्ण का 11.38 प्रतिशत है। टैम्पों की संख्या 223 फजलगंज की ओर जो सम्पूर्ण टैम्पों की संख्या का 37.04 प्रतिशत है। गोविन्द नगर की ओर 172 टैम्पों का आवागमन होता है जो सम्पूर्ण का 28.57 प्रतिशत है। बारोदवी की ओर 106 टैम्पों आते जाते है जो सम्पूर्ण का 17.60 प्रतिशत है। 101 टैम्पों कीसंख्या नौबस्ता डेरी की ओर 16.77 प्रतिशत है। इसी प्रकार सबसे अधिक आटो की संख्या 39.67 प्रतिशत फजलगंज की ओर तथा सबसे कम गोविन्द नगर की ओर 12.55 प्रतिशत है। दोपहिया वाहनों की संख्या सबसे अधिक 43.44प्रतिशत फजलगंज की ओर तथा सबसे कम 8.32 प्रतिशत गोविन्द नगर की ओर आते जाते हैं। इसी प्रकार अन्य वाहनों में 4025 वाहन फजलगंज की ओर तथा सबसे कम अन्य वाहन बारादेवी की ओर आने जाने वाले वाहन 3220 है। इस चौराहे पर सम्पूर्ण वाहन 188904 चरम व्यस्त समय पर गुजरते हैं। विभिन्न मार्गों पर कम व ज्यादा वाहनों के गुजरने से असंतुलन की स्थिति उत्पन्न होती है।

घण्टाघर चौराहा –

निम्न सारणी संख्या–3 में घण्टाघर चौराहे पर वाहनों के आवागमन से असंतुलन की स्थिति उत्पन्न हो रही है। इस चौराहे से कुल वाहनों का आवागमन 163564 है। जिसमें ट्रकों की संख्या आर. एस. रोड पर 8 है, जो सम्पूर्ण का 20.51 प्रतिशत है। **(सारणी क्रमांक–3 देखिये)।**

सारणी क्रमांक–3

घण्टाघर चौराहा : नगर के यातायात में असंतुलन वाहन संख्या (प्रतिशत में)

क्र. सं.	गन्तव्य स्थल	ट्रक	बस	कार	टैम्पों	आटो	दो पहिया	अन्य	योग
1.	मूलगंज	15.38	16.67	06.57	11.82	15.69	18.55	19.71	17.98
2.	नयागंज	07.69	08.33	06.35	13.30	07.84	13.98	14.76	13.64
3.	मालरोड	05.13	08.33	32.17	13.79	08.82	21.49	16.40	19.93
4.	कोपरगंज	12.82	16.67	04.64	13.79	06.82	04.56	04.89	04.75
5.	आर0एस0	20.51	08.33	05.67	03.94	08.82	03.28	03.66	03.71
6.	घण्टाघर	10.26	12.50	19.34	22.17	32.35	24.11	24.54	23.87
7.	टाटमिल	20.51	20.83	19.33	10.84	11.76	09.36	12.32	11.78
8.	बांसमण्डी	07.69	08.33	05.92	10.34	07.84	04.73	03.70	04.34
	योग	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00

स्रोत : सर्वेक्षण द्वारा 2019

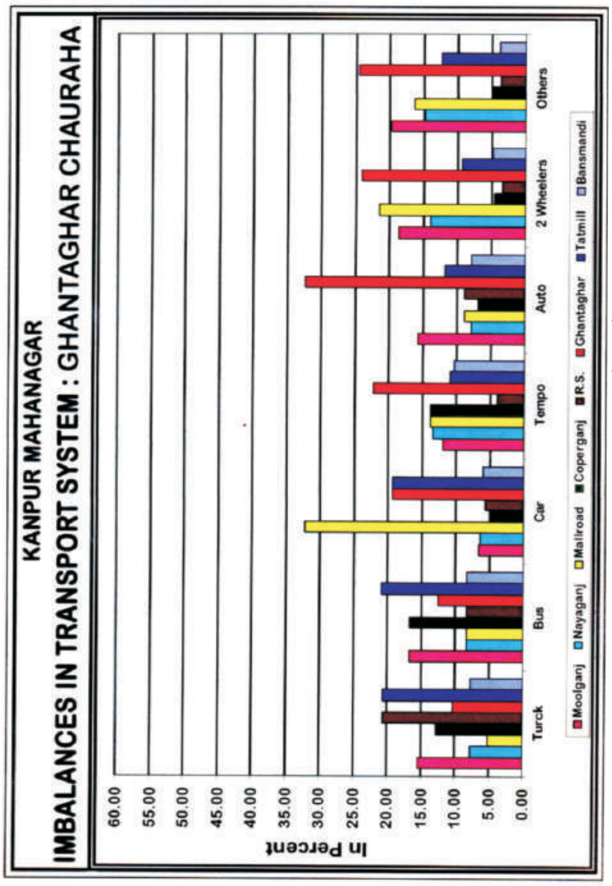

(Fig.-4)

इस प्रकार बसों की संख्या सबसे अधिक टाटमिल की ओर है जो सम्पूर्ण का 20.83 प्रतिशत है। कारों की संख्या सबसे अधिक 5002 मालरोड की ओर है जो सम्पूर्ण 32.17 प्रतिशत है। टैम्पों की संख्या सबसे अधिक घंटाघर मार्ग की ओर 45 वाहनों का अवागमन होता है तथा सबसे कम टैम्पों की संख्या 08 आर. एस. रोड पर है जो सम्पूर्ण का 3.94 प्रतिशत है। आटो की संख्या सबसे अधिक 15836 घण्टाघर मार्ग की ओर है जो सम्पूर्ण का 24.11 प्रतिशत है। दोपहिया वाहनों की सबसे कम संख्या 31.04 बाँसमण्डी की ओर है जो सम्पूर्ण का 4. 73 प्रतिशत है। अन्य वाहनों कीसंख्या अधिक 20116 घंटाघर की ओर है। जो सम्पूर्ण का 24.54 प्रतिशत है। इस प्रकार स्पष्ट है कि वाहनों के आवागमन के कारण किसी मार्ग पर कम तथा किसी मार्ग पर अधिक होने से असंतुलन की स्थिति दृष्टिगोचर हो रही है जिसके कारण इस क्षेत्र का वातावरण प्रदूषित हो रहा है।

फूलबाग चौराहा / गणेश उद्यान –

कानपुर महानगर के यातायात में सारणी संख्या–4 से स्पष्ट दिखाई पड़ रहा है कि महानगर के फूलबाग क्षेत्र में यातायात असंतुलन की स्थिति है। **(सारणी क्रमांक–4 देखिये)।**

इसमें कुल वाहनों का अवागमन 4239021 है। जिसमें वी. आई. पी. रोड पर ट्रकों का आवागमन 870 है, जो सम्पूर्ण का 6.03 प्रतिशत है। शुक्लागंज की ओर ट्रकों की संख्या 3927 है जो सम्पूर्ण का 27.22 प्रतिशत है। टैगोर रोड पर ट्रकों का प्रतिशत 47.38, मालरोड पर ट्रकों की संख्या 6.95 प्रतिशत व बिरहाना रोड पर 6.83 प्रतिशत, बड़ा चौराहे की ओर 5.58 प्रतिशत है।

सारणी क्रमांक–4

फूलबाग चौराहा : नगर के यातायात में असंतुलन वाहन संख्या (प्रतिशत में)

क्र. सं.	गन्तव्य स्थल	ट्रक	बस	कार	टैम्पों	आटो	दो पहिया	अन्य	योग
1.	वी0आई0पी0रोड	06.03	18.44	36.76	26.08	23.84	28.44	12.08	27.65
2.	शुक्लागंज	27.22	37.11	22.09	13.75	14.59	08.06	15.69	11.74
3.	टैगोर रोड	47.22	22.33	15.90	16.19	11.61	07.09	21.26	11.15
4.	मालरोड	06.95	08.44	14.36	13.22	17.51	18.88	16.93	17.50
5.	बिरहाना रोड	06.83	03.22	03.12	02.68	05.05	07.41	12.66	07.04
6.	बड़ा चौराहा	05.58	10.44	07.77	28.08	27.37	30.12	21.38	24.91
	योग	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00

स्रोत : सर्वेक्षण द्वारा 2019

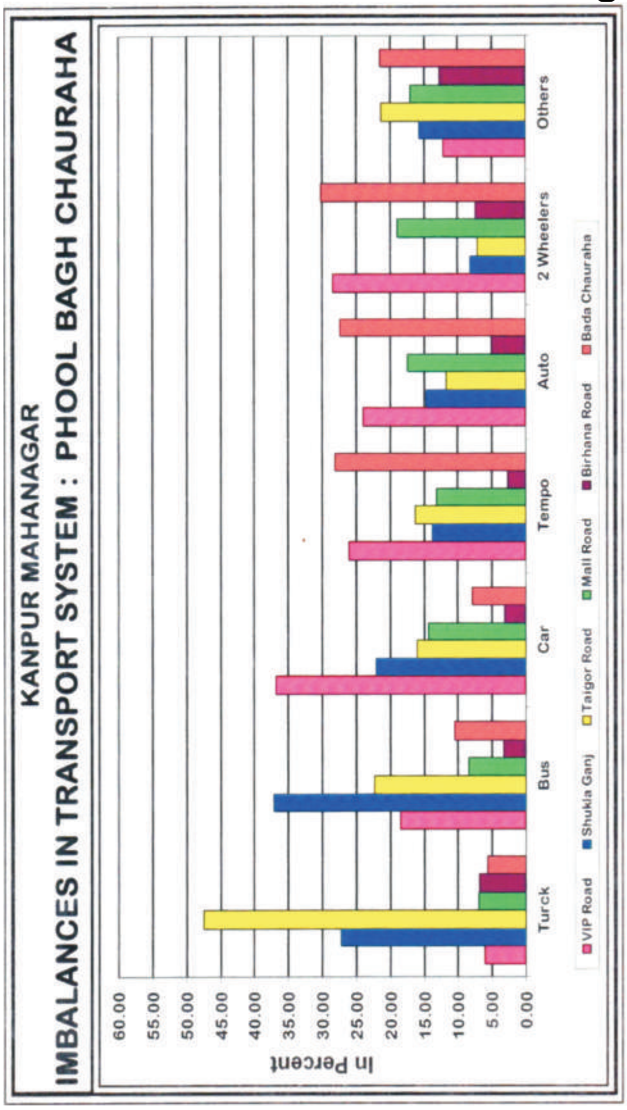

(Fig.-5)

इसी प्रकार कारों की संख्या सबसे अधिक वी. आई. पी. रोड पर 25136 है जो सम्पूर्ण का 36.76 प्रतिशत है और कारों की सबसे कम संख्या बिरहाना रोड पर 2136 है जो सम्पूर्ण का 3.12 प्रतिशत है। इन मार्गों पर दोपहिया वाहनों की संख्या 299331 है। आटों की संख्या सबसे अधिक 1002 है जो सम्पूर्ण का 27.39 प्रतिशत है। अन्य वाहनों में बड़े चौराहे की ओर 7141 है जो सम्पूर्ण का 21.38 प्रतिशत है।

बड़ा चौराहा –

कानपुर महानगर के यातायात विभिन्न मार्गों में बड़ा चौराहा प्रमुख है। इस चौराहे पर जाम की समस्या हर समय बनी रहती है तथा यातायात असंतुलन की स्थिति उत्पन्न होती है। **(सारणी क्रमांक–5 अगले पेज पर देखें)।**

उपरोक्त सारणी–05 से स्पष्ट होता है कि बड़ा चौराहे पर कुल वाहन संख्या 418217 गुजरते हैं। इस चौराहे से चार मार्ग जाते हैं जिनमे से परेड चौराहे की ओर जाने वाले सबसे अधिक ट्रकों की संख्या 5226 है जो सम्पूर्ण का 38.71 प्रतिशत है। जब कि मूलगंज की ओर जाने वाले ट्रकों की संख्या सबसे कम 11.48 प्रतिशत है। इसी प्रकार सबसे अधिक बसों की संख्या परेड चौराहे की ओर जाता है जो सम्पूर्ण का 44.26 प्रतिशत है सबसे कम कचेहरी रोड की तरफ 4.16 प्रतिशत है।

परेड चौराहे की ओर 27242 कारें आती जाती हैं जो सम्पूर्ण का 39.41 प्रतिशत है। फूलबाग चौराहे की तरफ 21.36 प्रतिशत कारें जाती है। सबसे अधिक 37.42 प्रतिशत कारें परेड चौराहे की ओर आवागमन होता है और सबसे कम 9.27 प्रतिशत कारें मूलगंज की तरफ आवागमन होता है। कचहरी की ओर कारों का आवागमन 18702 है जो सम्पूर्ण 28.85 प्रतिशत है। टैम्पों का आवागमन सबसे अधिक परेड की तरफ 1178 है जो सम्पूर्ण का 34.02 प्रतिशत है इस प्रकार परेड चौराहे की ओर टैम्पों का अवागमन 36.27 प्रतिशत होता है। कचहरी की ओर 5.84 प्रतिशत आटो का आवागमन होता है। अतः

(सारणी क्रमांक–5)

बड़ा चौराहा : नगर के यातायात में असंतुलन वाहन संख्या (प्रतिशत में)

क्र. सं.	गन्तव्य स्थल	ट्रक	बस	कार	टैम्पों	आटो	दो पहिया	अन्य	योग
1.	परेड चौराहे	38.71	44.26	37.42	36.27	31.29	35.48	38.26	36.61
2.	फूलबाग	34.12	36.30	21.36	36.62	33.71	26.82	29.58	27.75
3.	मूलगंज	11.48	14.13	9.27	18.63	34.12	20.60	33.58	18.93
4.	कचेहरी	14.31	4.16	30.72	12.16	5.84	22.27	18.21	20.40
	योग	3.19	0.31	17.12	0.98	0.72	73.17	8.41	100.00

स्रोत : सर्वेक्षण द्वारा 2019

प्रदर्शित सारणी में विभिन्न मार्गों पर वाहनों के आवागमन में असंतुलन पैदा हो रहा है।

नियोजन एवं सुझाव –

चयनित चौराहों पर ट्राफिक अव्यवस्थित होने का बड़ा कारण पार्किंग व्यवस्था नहीं होना है। अतः इन स्थानों पर पार्किंग व्यवस्था को सही कर दिया जाय जो जाम की समस्या समाप्त हो जायेगी। भारी यातायात समस्या के हल हेतु सड़कों का चौड़ीकरण कराया जाये जिससे जाम की समस्या को खत्म किया जा सके। इसके लिए नगर विभाग ने 200 किमी. सड़कों का चौड़ीकरण किया जायेगा। इसके अतिरिक्त लोगों के आवागमन के लिए मेट्रो ट्रेनों को चलाने का प्रयास कर निर्माणयिका जा रहा है।

कानपुर शहर के लिए यातायात विकास हेतु कई योजनायें प्रस्तावित हैं। राज्य सरकार ने महानगर की यातायात समस्याओं व चौराहों पर लगने वाले जाम से निजात पाने से सड़कों का चौड़ीकरण तथा ओवरब्रिज प्रस्तावित है। जैसे कि शहर से गुजरने वाले भारी वाहन को भार घटाने के लिए 105 किमी. रिंग रोड का प्रस्ताव दिया है। साथ ही सड़कों के दोनों ओर अतिक्रमण को समय–समय पर हटाया जाना सुनिश्चित करें।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. Tiwari, A.K. Mathura : A study in city and situation, N.G. S.I. Vol. IX, Varanasi, 1963.
2. Kadri, A.H., : Routes and the Transport System of the Great Mughals, The India Geographical Journal. Vol.xxxi, 1947.
3. R. S. Khare : Industrial Development of Kanpur, unpublished thesis, Banaras Hindu University, 1961, p. 90.
4. U. Singh : The Origin and Growth of Kanpur, V.G. J.I. Vol. V., Part V, 1952, pp. 1-11.
5. H. H. Singh, Kanpur : A study in urban geography, Varanasi, 1972, pp. 79-80.
6. D. M. Majumdar : Social contours of an Industrial City, Social Survey of Kanpur, Asia Publishing House, Bombay, 1960.

◈◈

The Gunjan

Multi Displinary Quarterly International Refreed/Peer Reviewed Research Journal

ISSN : 2349-9273

`The Gunjan'

(in Multi Language : Hindi + English + Sanskrit)

Multi Displinary Quaretерly International Refreed/Peer Reviewed Research Journal

Sector-K-444, `Shiv Ram Kripa' World Bank Barra-Kanpur-208027

Contact- 08896244776, 09335597658,

E-mail: mohittrip@gmail.com

Visit us: www:thegunjan.com, abhinavgaveshna.com

RNI : UPMUL00620/24/1/2014-TC ISSN : 2394-4366

आज के सन्दर्भ में पर्यावरण शिक्षा के प्रति उच्च शिक्षा स्तर के अध्यापकों की जागरुकता का अध्ययन

– डॉ. स्वाती सक्सेना
असिस्टेन्ट प्रोफेसर –
वनस्पति विज्ञान विभाग,
डी. ए. वी. कालेज, कानपुर–208001
(उत्तर प्रदेश)

ई–मेल :
swatisaxena352@gmail.com

सारांश

पर्यावरण एक व्यापक शब्द है। मनुष्य जिस प्राकृतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनैतिक एवं आर्थिक परिस्थितियों में रहता है, वह सब उसका पर्यावरण होता है। परन्तु पर्यावरणीय शिक्षा केवल उसके प्राकृतिक पर्यावरण तक की जानकारी तक सीमित होती है; यह बात दूसरी है कि इसके अन्तर्गत उसके प्राकृतिक पर्यावरण के उसके सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनैतिक और आर्थिक पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों का भी अध्ययन किया जाता है। पर्यावरणीय शिक्षा वह शैक्षिक प्रक्रिया है, जो मानव को उसके प्राकृतिक एवं मानव निर्मित पर्यावरण के सम्बन्धों का ज्ञान कराती हैं इसमें जनसंख्या, प्रदूषण, संसाधनों का विनियोग, संरक्षण, यातायात, तकनीकी और नगरीय तथा ग्रामीण नियोजन का मनुष्य के सम्पूर्ण पर्यावरण से सम्बन्ध भी निहित है।

प्रस्तावना –

पर्यावरणीय शिक्षा के दो पहलू है – एक प्राकृतिक संसाधनों और उनके संरक्षण का ज्ञान और दूसरा प्राकृतिक पर्यावरण और उसे दूषित होने से बचाने के उपायों का ज्ञान। इस शिक्षा के उद्देश्य और पाठ्यक्रम की दृष्टि से इसे उपयोगी बनाना है।

पर्यावरण शिक्षा वह शिक्षा है, जिसके द्वारा बच्चों, युवकों और प्रौढ़ों का प्राकृतिक संसाधनों के दोहन और प्रकृति प्रदूषण के कारणों और उनमें दुष्परिणामों से परिचित कराया जाता है और साथ ही उन्हें प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और प्रकृति प्रदूषण की रोकथाम की विधियाँ बताई जाती है।

अनुसंधान के उद्देश्य –

अनुसंधान का मूल उद्देश्य उच्च शिक्षा स्तर के अध्यापकों को पर्यावरण शिक्षा के प्रति जागरुकता का अध्ययन किया गया है–

1. अध्यापकों में प्राकृतिक संसाधनों के दोहन को रोकना और प्राकृतिक पर्यावरण को प्रदूषित होने से बचाना है। 2. उच्च शिक्षा स्तर के अध्यापकों को प्राकृतिक असन्तुलन और प्रदूषण की रोकथाम के प्रति अभिवृत्ति का विकास करना। 3. उनमें सफाई के प्रति अभिवृत्ति का विकास करना। 4. उनमें समाज के प्रति जनहित की अभिवृत्ति का विकास करना। 5. प्राकृतिक संसाधनों के दोहन और प्राकृतिक पर्यावरण के प्रदूषित होने के कारणों का ज्ञान कराना।

परिकल्पनाएं –

1. उच्च शिक्षा स्तर के अध्यापकों में पर्यावरण जागरुकता का स्तर ठीक है। 2. उच्च शिक्षा स्तर के अध्यापकों के पारिवारिक सदस्यों (माता–पिता, पत्नी व बच्चों) का पर्यावरण जागरुकता का स्तर स्तरीय है। 3. उच्च शिक्षा स्तर के अध्यापकों को सरकार द्वारा प्राप्त शैक्षणिक सुविधाओं का लाभ प्राप्त हो रहा है। 4. उच्च शिक्षा स्तर के अध्यापकों के बच्चों की शैक्षणिक प्रत्याशाएं उत्कृष्ट हैं। 5. उच्च शिक्षा स्तर के

अध्यापकों के बच्चे शैक्षणिक क्षेत्र में उन्नति करते हैं।

अध्ययन क्षेत्र –

प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र कानपुर जनपद है। यह जनपद उत्तर प्रदेश का शैक्षणिक दृष्टि से प्रगतिशील है। कानपुर जनपद में विभिन्न कुटीर उद्योग–धन्धे, औद्योगिक संस्थान एवं अन्य विभिन्न कार्य से सम्बन्धित छोटे और बड़े कारखाने सम्पूर्ण जनपद में फैले हुए हैं। इस कारण उच्च शिक्षा स्तर के अध्यापक ग्रामीण क्षेत्रों में आना–जाना कम होता है। इस अध्ययन क्षेत्र का चुनाव निदर्शन इकाइयों की उपलब्धता, अध्ययन क्षेत्र का आकार, अध्ययन क्षेत्र की जानकारी होना आदि को दृष्टिगत रखते हुए किया गया है।

शोध विधि व उपकरण –

1. अध्ययन के उद्देश्य के आधार पर उद्देश्यपूर्ण निर्दशन पद्धति के द्वारा उच्च शिक्षा स्तर के अध्यापकों का चयन किया गया है। 2. अध्ययन के उद्देश्य के लिए प्रश्नावली द्वारा विषय–बार चयन किया गया है। 3. अध्ययन के उद्देश्य के आधार पर साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया गया है।

पर्यावरणीय शिक्षा का महत्व एवं आवश्यकता –

आज विज्ञान के बढ़ते हुए चरण, औद्योगीकरण और बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण संसार भर में प्राकृतिक संसाधनों का दोहन हो रहा है। पारिस्थितिकीय असन्तुलन बढ़ रहा है और प्राकृतिक प्रदूषण बढ़ रहा है। इसकी रोकथाम के लिए कानून तो बनाये जा रहे हैं। वहाँ दूसरी ओर लोगों को जागरुक करने के लिए पर्यावरणीय शिक्षा का सहारा लिया जा रहा है। वास्तविकता यह है कि सभी काम सरकारी नियम और कानूनों से सम्भव नहीं है।

वर्तमान सन्दर्भ में पर्यावरण शिक्षा का महत्व बढ़ता जा रहा है। उसकी बड़ी आवश्यकता है–

1. प्राकृतिक सम्पदा के संरक्षण के लिए – मनुष्य अपनी भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्राकृतिक सम्पदा का बढ़ी तेजी से दोहन हो रहा है और यही दशा रही तो भावी पीढ़ी के लिए कुछ भी प्राकृतिक सम्पदा शेष नहीं रहेगी। मनुष्यों को प्राकृतिक सम्पदा में सीमिति प्रयोग की ओर अग्रसर करने और उसे भावी पीढ़ियों को बचाए रखने के लिए पर्यावरण शिक्षा का बड़ा महत्व है।

2. प्रकृति प्रदूषण की रोकथाम के लिए– आज संसार में वनों के काटने, औद्योगिक संस्थानों को चलाने और बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण गंदगी फैलने से हमारा प्राकृतिक पर्यावरण–जल, वायु, मिट्‌टी आदि सभी प्रदूषित हो रहे हैं। इस प्रदूषण की रोकथाम के लिए पर्यावरणीय शिक्षा का बड़ा महत्व है।

3. बच्चों के उचित–पोषण और स्वास्थ्य विकास के लिए – मनुष्य को जीने के लिए शुद्ध वायु, शुद्ध जल, सूर्य का प्रकाश और खाद्यान्न की आवश्यकता होती है। प्राकृतिक पर्यावरण की वायु एवं जल को शुद्ध बनाए रखने के लिए यह आवश्यक है कि उन्हें प्रदूषण से बचाए रखा जाय। शुद्ध खाद्यान्न की आपूर्ति के लिए खाद्यानों को भी प्रदूषण से बचाना आवश्यक है।

4. जन–कल्याण और आर्थिक प्रणाली की रक्षा के लिए– इस भौतिकवादी युग की सबसे बड़ी बात स्वार्थपरता है। आज अधिकतर मनुष्य केवल अपने स्वार्थ की बात सोचते हैं, जनहित और जन कल्याण की नहीं और इस स्वार्थ की आँधी में वे अपना भी अहित कर बैठते हैं। जन कल्याण और आर्थिक प्रणाली को लम्बे समय तक बनाए रखने के लिए पर्यावरणीय शिक्षा का बड़ा महत्व है।

निष्कर्ष एवं सुझााव –

अध्ययन से स्पष्ट होता है कि उच्च शिक्षा स्तर के अध्यापकों में पर्यावरण जागरुकता का स्तर सन्तोषजनक है लेकिन पर्यावरण जागरुकता की दृष्टि से छात्र/छात्राओं में रुचि कम दिखाई देती हैं। यद्यपि उच्च शिक्षा स्तर पर शैक्षणिक गुणवत्ता सुधार के लिए संसाधनों का अभाव पाया जाता है। पर्यावरण जागरुकता द्वारा प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और प्रकृति प्रदूषण को रोकने में पर्यावरणीय शिक्षा कारगर साबित हो सकती है; परन्तु शिक्षा का परिणाम नगण्य है; न लोग प्राकृतिक संसाधनों का दोहन कम कर रहे हैं और न प्रदूषण फैलाने से बाज आ रहे हैं।

अतः आवश्यक है कि पर्यावरणीय शिक्षा के साथ–साथ पर्यावरण सम्बन्धी कानूनों का सख्ती से पालन किया जाए। माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पुराने वाहनों को चलाने के लिए निषेध कर दिया है, जिसके परिणाम स्वरूप प्रदूषण कम हुआ है। साथ ही सरकार को चाहिए कि पर्यावरण कानून को सख्ती से लागू करें, ज्ञान और क्रिया दोनों एक साथ चलने चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. कबीर, हुमायूँ सन्दर्भित शर्मा, कुसुम (2012) : विद्यालय प्रशासन एवं स्वास्थ्य शिक्षा, आगराः राधा प्रकाशन मंदिर
2. गुप्ता, एम. सेन (2001) : पर्सनल एण्ड प्रोफेशनल वैल्यूज ऑफ एन इफेक्टिव टीचर, इण्डियन जरनल ऑफ वैल्यू एजूकेशन।
3. मैती रूबीना (2008) : उच्च शिक्षा स्तर के अध्यापकों का अध्ययन, भारतीय शोध पत्रिका।
4. वाचस्पति अविनय (2011) : छात्र और शिक्षक, दैनिक जागरण
5. विल्सन, विलेरी (2002) : अध्यापक परिषद भारतीय शिक्षा रिपोर्ट।
6. विश्नोई, उन्नति (2009) : विद्यालयीय भारतीय शोध पत्रिका।
7. सिंह बी. पी. एवं मंजू यादव (2003) पर्यावरण विज्ञान। ◈◈

Received: 07 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

बौद्ध दर्शन की आचार मीमांसा : समसामयिक प्रासंगिकता

डॉ. रंजय प्रताप सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष,
दर्शनशास्त्र विभाग,
डी. ए.–वी. कालेज, कानपुर–208001
(उत्तर प्रदेश)

ई–मेल :
rpsingh248@gmail.com

तापाच्छेदाच्च निकशात् सुवर्णमिव पण्डितः।
परीक्ष्य भिक्षवो ग्राह्यं मद्वचो न तु गौरवात्।।[1]

जिस प्रकार स्वर्ण अत्यन्त मूल्यवान धातु है, किन्तु बुद्धिमान लोग सर्वप्रथम सोने को अग्नि में तपाते हैं, उसे काटते हैं, पुनः कसौटी पर परीक्षा करके उसकी मूल्यवत्ता निर्धारित करते हैं, ठीक उसी प्रकार महापुरुषों की वेदना समसामयिक परिपेक्ष्य में उपयोगिता की कसौटी पर परख करके ही अंगीकृत किये जाने की स्वतन्त्रता प्रदान करना, बौद्ध दर्शन की सबसे बड़ी विशेषता है। बौद्ध दर्शन ईसा पूर्व में जितना प्रासंगिक था तथा जिस व्यावहारिक मूल्य प्रधान चेतना के कारण उसका प्रचार–प्रसार भारत के अतिरिक्त कोरिया, जापान, चीन, तिब्बत सहित अनेकों देशों में हुआ, वह बौद्ध धर्म एवं दर्शन की आचार मीमांसा है। ध्यातब्य है कि सदाचार का पतन प्रायः सभी कालों में दिखायी पड़ता है किन्तु जब मनुष्य में सद्विचारों की दृढ़ता एवं मानव के प्रति प्रेम, करुणा की संवेदनशीलता रहती है तभी वह सदाचार जीवन में आ पाता है। इसलिये कहा जा सकता है कि सदाचार ही सुखी वैयक्तिक एवं सामाजिक जीवन की आधारशिला है।

बौद्ध दर्शन का आचार प्रधान ग्रंथ 'विनयपिटक' है। इसमें भिक्षु एवं भिक्षुणियों के लिए नियम संकलित है। नीति एवं आचार की शिक्षाप्रद 423 गाथायें धम्म पद में हैं। इन गाथाओं में मनु स्मृति के नीतिपरक श्लोकों एवं महाभारत की कहानियों का भी प्रभाव है। बुद्ध ने दृष्टान्तों के माध्यम से भोग–विलास के वशीभूत जनसमुदाय को इन्द्रिय संयम के प्रति जागरुक किया है। महात्मा बुद्ध का प्रसिद्ध 'उदान' हैं–

"कामन्धा जाल–संछन्ना तण्हाछादन छादिता।
पमत्त–बन्धुना बंधा मच्छा व कुमिना सुखे।।"

जिस प्रकार जल पर निर्भर होकर जीवन धारण करने वाली मछली जिहवा की तृष्णा के कारण जाल में फंस जाती है, उसी प्रकार मन के संकल्प एवं बुद्धि की असीमित तर्कणा शक्ति के सम्पन्न मनुष्य, निजता के भान से परे इन्द्रिय सुखोपभोग की तृष्णा में आच्छादित होकर विवेकरहित, निन्दित सामाजिक जीवन से बँध जाता है। डॉ. देवराज भी मानते हैं मनुष्य के अपने ही व्यक्तित्व में उच्चतम दैवी भाव और पशु भाव दोनों की सहस्थिति है। मनुष्य स्वयं अपने ही जीवन और चेतना के सम्बद्ध

द्वन्द्वपरक रूपों में अन्तर करता है और यह कल्पना व लालसा करता है कि उसके जीवन की गति दैवी भाव की ओर उन्मुख हो।[2]

प्रत्येक मनुष्य के जीवन में किसी न किसी रूप में द्वन्द्वात्मक स्थिति आती है, जिसमें किंकर्त्तव्यविमूढ़ता के कारण उचित एवं अनुचित के निर्णय में सावधानी बरतनी पड़ती है। बौद्ध धर्म की दृष्टि जीवन के प्रति अत्यन्त व्यावहारिक है। धम्मपद में तृष्णा के नियंत्रण हेतु कहा गया है कि निर्वाण पथ के पथिक को सांसारिकता पर संसार के धन ऐश्वर्य आदि के बोझ से अपने को मुक्त करने का प्रयास करना चाहिए। जिस प्रकार खाली सवारी या नाव अधिक शान्तिपूर्वक अपने लक्ष्य तक पहुँच जाता है, उसी तरह जो व्यक्ति विभिन्न प्रकार की आसक्तियों से अपने को दूर करता है, उसे अपने लक्ष्य तक पहुँचने में आसानी हो जाती है।[3] बुद्ध गृहस्थ जीवन को सदाचार सम्पन्न बनाने के लिये पंच शिक्षा पर बल देते हैं। हिंसा, चोरी, असत्य भाषण, दंभयुक्त आचरण (मिथ्याचार) शराब इत्यादि मादक पदार्थ के सेवन से दूर रहने से मनुष्य में श्रद्धाबल, रूपबल, वीर्यबल, लज्जाबल एवं प्रज्ञाबल की प्राप्ति का संदेश देती है।

बौद्ध दर्शन में तीन तत्वों के द्वारा आचार व्यवस्था निर्देशित है— शील, समाधि, प्रज्ञा। शरीर की शुद्ध के लिये शील, चित्त की शुद्ध के लिए समाधि एवं अविद्या की समाप्ति के लिए प्रज्ञा तत्व उपयोगी है। इन तीनों तत्वों के अनुपालन एवं अभ्यास से लौकिक जीवन में समरसता का प्रादुर्भाव होता है। शील के अनुपालन में ईर्ष्या—द्वेष की भावनाएं शांत हो जाती हैं तथा प्रेम एवं मैत्री की मनोवृत्ति ही आवश्यक होगी। धम्मपद की उक्ति है—

नहि वैरेण वैराणि शाम्यन्तीह कदाचन।
अवैरेण हि शाम्यन्ति, एश धर्मः सनातनः।।[4]

तात्पर्य है कि बैर का प्रतिकार बैर से कभी नहीं किया जा सकता है। उसने मुझे डांटा, फटकारा था, उसने मुझे उस समय मारा था, उसने मुझे जीत लिया और उसने मुझे लूट लिया था, इस प्रकार की भावनाएं जो लोग मन में बनाये रखते हैं, उनका बैर भाव कभी भी शान्त नहीं होता है। बल्कि ऐसी भावनाएं जिन लोगों के मन में जागृत नहीं होती है, उनके मन का बैर भाव शान्त हो जाता है। अबैर (मैत्री) से अर्थात् अपने मन से स्वयं बैर भाव का परित्याग कर देने से ही दूसरे के मन का बैर—भाव स्वयं शान्त हो जाया करता है। यही सनातन धर्म है।[5]

वर्तमान वैश्वीकरण के युग में इसी तथ्य को समझने की आवश्यकता है कि सम्पूर्ण विश्व, विश्वबन्धुत्व की एकता के सूत्र में इस प्रकार आबद्ध हो कि बैर और वर्गभेद न रहे, तभी पारस्परिक सौहार्द्र के प्रति संचेतना विकसित हो सकती है तथा हिरोशिमा एवं नागासाकी की पुनरावृत्ति रुक सकती है। आज के इस वैज्ञानिक युग मानसिक तनाव, चिन्ता एवं भय के कारण मनुष्य का चित्त अशान्त होता जा रहा है। शारीरिक एवं मानसिक असन्तुलन विभिन्न प्रकार के मनोरोगों का जनक है। ऐसी स्थिति में समाधि की बुद्ध द्वारा निर्धारित व्यवस्था चित्त की परिशुद्धि में सहायक है। समाधि के अन्तर्गत ध्यान के चार चरण हैं। प्रथम ध्यान में सवितर्क, सविचार एवं विवेक के कारण चित्त में प्रीति भाव की उत्पत्ति होती है जिससे सुख प्राप्त होता है। द्वितीय ध्यान में वितर्क और विचार का उपशमन हो जाता है एवं श्रद्धा भाव की प्रबलता आ जाती है, जिसके कारण चित्त की एकाग्रता बढ़ जाती है। मानसिक आनन्द के रूप में सुख और शारीरिक स्थिरता के रूप में सुख की सघनता बढ़ जाती है। तृतीय ध्यान में द्वितीय ध्यान की पूर्ण स्थिति स्मृति रूप में विद्यमान रहती है। प्रीति एवं वैराग्य के प्रति उपेक्षा रखने वाला चित्त समता का अनुभव करता है। चतुर्थ ध्यान पूर्व के तीनों ध्यानों का परिणाम है। इस ध्यान में पूर्ण साक्षी भाव आ जाता है। शरीर के सुख—दुख का प्रभाव चित्त पर नहीं पड़ता है। मानसिक सुख एवं मानसिक दुःख से रहित, उपेक्षा द्वारा शुद्ध चित्त मैत्री, करुणा, मुदिता, समता जैसी मनोवृत्तियों को धारण करता है। इस अवस्था में पूर्व जन्म के संस्कारों के कारण समस्त मानसिक विकार समाप्त हो जाते हैं एवं मनुष्य शान्तिपूर्वक सामाजिक जीवन व्यतीत करता है।

महात्मा बुद्ध के द्वारा निर्दिष्ट साधनों में सतत् ध्यान के अभ्यास एवं चित्त की एकाग्रता से प्रज्ञा तीन रूपों में प्रकट होती है। प्रथमः बुद्ध की देश के प्रति मन से दृढ़

निश्चय करना श्रुतिमयी प्रज्ञा है, द्वितीय बुद्धि की चिन्तन शक्ति के द्वारा तर्क का आधार इसे सुनिश्चित करना चिन्तनमयी प्रज्ञा है। तृतीय समाधि से उत्पन्न ज्ञान का व्यावहारिक प्रयोग भावनामयी प्रज्ञा है। ध्यान की चतुर्थ अवस्था में भावनामयी प्रज्ञा का उदय होता है। इसमें अविद्या का क्लेश समाप्त हो जाता है, चित्त की वृत्तियाँ शान्त हो जाती हैं, मनुष्य जन्म मरण के भव चक्र से मुक्त हो जाता है।[6] डॉ. टी. आर. वी. मूर्ति ने शान्तिदेव की बोधिचर्यावतार पंजिका के आधार पर कई प्रमाणों के साथ यह सिद्ध किया है कि बौद्ध दर्शन में प्रज्ञा की प्राप्ति हो जाने पर मनुष्य का आचरण स्वतः नैतिक हो जाता है जिसके कारण उसे भव चक्र से छुटकारा मिल जाता है।[7]

बौद्ध दर्शन में शील समाधि प्रज्ञा की त्रिविध साधना के लिए अष्टांग मार्ग का विधान है, एवं इसी अष्टांग मार्ग के अनुपालन में त्रिविध साधना, अर्न्तनिहित है। शील के अन्तर्गत सम्यक् वाणी, सम्यक् कर्मान्त तथा सम्यक् आजीव, समाधि के अन्तर्गत सम्यक् व्यायाम, सम्यक् स्मृति तथा सम्यक् समाधि और प्रज्ञा के अन्तर्गत सम्यक् संकल्प, सम्यक् दृष्टि का अर्न्तभाव है। इन तीनों के अनुशीलन से सम्यक् प्रगति में बाधक अज्ञान, अविद्या अथवा मोहजन्य अंधकार का तिरोधान हो जाता है। ज्ञान रूपी प्रकाश से प्रकाशित मनुष्य का आचरण समाज के लिए उपयोगी बनता है। अगुंत्तर निकाय में बुद्ध का यह कथन है कि "भिक्षुओं मैं दूसरी कोई भी एक बात ऐसी नहीं जानता, जिससे अनुत्पन्न कुशल धर्मों में वृद्धि होती हो, विपुलता होती हो, जैसे भिक्षुओं में सम्यक् दृष्टि। सम्यक् दृष्टि वाले में अनुत्पन्न–कुशल धर्म उत्पन्न हो जाता है, उत्पन्न कुशल धर्म वृद्धि को प्राप्त हो जाते हैं। मिथ्या दृष्टिकोण संसार का किनारा है और सम्यक् दृष्टिकोण निर्वाण का किनारा है।[8]

संसार में मनुष्य के जीवन में सम तथा विषम दोनों परिस्थितियाँ आती हैं। सम अवस्था सुखदायिनी है, किन्तु विषम परिस्थिति में मन का संतुलन बनाये रखना आवश्यक हो जाता है। मन के उद्वेलित, अशान्त एवं अधैर्यपन को समाप्त करने के लिए बौद्ध दर्शन पारमिता का अभ्यास का संकेत देता है। पारमिता का तात्पर्य पूर्णता से है। यह पूर्णता सद्गुणों की पूर्णता है जो बुद्धत्व की प्राप्ति में सहायक बनती है तथा जिसके अभ्यास के कारण मनुष्य का व्यक्तित्व संतुलित एवं नैतिक होता है। महायान पथ के अनुयायी षट पारमिता का अभ्यास करते हैं, जिन्हें दान, शील, क्षांति, वीर्य, ध्यान और प्रज्ञा कहा जाता है। इनमें प्रज्ञा पारमिता प्रमुख है। हीनयान में दस पारमिता का उल्लेख है– दान, शील, निष्कामना, प्रज्ञा, वीर्य क्षान्ति, सत्व, अधिष्ठान, मैत्री तथा उपेक्षा। इन पारमिताओं के अभ्यास से मन के काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, राग, द्वेष, ईर्ष्या, आदि विकार स्वतः समाप्त हो जाते हैं। मनुष्य अपनी स्थिति के लिए स्वयं ही उत्तरदायी है। इसलिए उसे अपने कल्याण के लिए स्वयं प्रयत्न करना पड़ता है। बुद्धवचन है–

"अत्ता ही अत्तनो नाथो, अत्ता हि अत्तनो गति।
तस्मा सञामयत्तानं, अस्स भद्रं व वाणिजो।"[9]

मनुष्य का जीवन उसकी अपनी स्वयं द्वारा निर्धारित गति से संचालित होता है। जिस प्रकार घोड़े को व्यापारी संयत रखता है, उसी प्रकार मनुष्य को अपने को संयमी बनाये रखने के लिए सतत् प्रयत्नशील रहना पड़ता है। गीता में भी मनुष्य को अपना मित्र और शत्रु दोनों बताया गया है।[10]

मनुष्य का जीवन संयमी तभी हो सकता हैं। जब वह मानव मूल्यों के अन्वेषण तथा अनुचिन्तन में अनवरत निरत रहे, तभी उसमें सर्जनशीलता विद्यमान रहेगी। बुद्ध के दर्शन में निहित पारमिताएं इसी उद्देश्य को पूरा करती हैं। परिग्रह स्वार्थजनित वृत्ति है, जब कि अपरिग्रह मूल्य है। इस मूल्य की संरक्षा तभी संभव है जब मनुष्य परोपकार की भावना से जिसको जिस वस्तु की आवश्यकता है, यदि वह दूसरे के पास है तो बिना किसी प्रकार का सन्देह किये दे देना चाहिए। चित्त की विषयोन्मुखता पर नियंत्रण करके, उसे निन्दित कर्मों से दूर करने की वृत्ति शील है। बौद्ध आचार्यों का मत है कि जिससे शुभ धर्मों का धारण होता है, वह शील है। सद्गुणों के कारण अथवा शीलन के कारण उसे शील कहते हैं।[11] क्षमा जीवन के लिए आभूषण है। शान्तिदेव की कारिका में कहा गया है– 'क्षमेत श्रुतमेषेत संश्रयेत वनं ततः।[12]

सहनशीलता के कारण स्वाध्याय से प्राप्त विद्या तथा श्रुत परम्परा से प्राप्त विद्या का ग्रहण मनुष्य सहजता से कर पाता है। इसके अभाव में दुःखी होकर तप से अर्जित शक्ति का निरर्थक क्षय करता है। इसलिए सहनशीलता का अभ्यास मनुष्य के लिए अत्यन्त उपयोगी है। अन्य प्राणी से पीड़ा मिलने अथवा अपमानित होने पर भी बदले की भावना मन में नहीं आनी चाहिए, लेकिन स्वभावतः मनुष्य के लिए यह सहज नहीं है। इसीलिए शान्तिदेव ने तर्क के द्वारा इस समस्या का समाधान किया है।

मुख्यं दण्डारिकं हित्वा पेरके यदि कुप्यते।
द्वेशेणा प्रेरितः सोऽपि द्वेशोऽस्तु के वरम्।।[13]

दण्ड से ताड़ना प्राप्त होने पर न तो दण्ड से क्रोध करना चाहिए तथा न ही ताड़ना देने वाले मनुष्य से। बल्कि उस कारण पर क्रोध करना चाहिए जिसके नाते ताड़ना मिली। वह कारण को द्वेष ही मानना चाहिए, इसलिए द्वेष (क्रोध) करना हमारे लिए श्रेयस्कर है। द्वेष अविद्या के कारण उत्पन्न होता है। अविद्या को दूर करने का एक मात्र उपाय है प्रज्ञा। प्रज्ञा पारमिता के द्वारा समस्त पदार्थों की धर्मशून्यता का ज्ञान प्राप्त होता है जिससे जगत की निस्सारता की अनुभूति होती है। नागार्जुन की मूल माध्यमिक कारिका में कहा गया है कि–

"न स्वतो नापि परतो न द्वाभ्यां नाप्यहेतुतः।
उत्पन्ना जातु विद्यन्ते भावाः क्वचन केचन।।"[14]

जितने भी संसारिक पदार्थ हैं, किसी भी पदार्थ की सुनिश्चित धर्मता नहीं है क्योंकि पदार्थों की उत्पत्ति न स्वतः, न परतः, न उभयतः, न अहेतुतः, होती है, इस तथ्य को बोध प्रज्ञा पारमिता के द्वारा होता है। गौतम बुद्ध स्वयं बोधि प्राप्ति के पश्चात जगत् की निःसारता का उपदेश देकर भौतिकता की तृष्णामयी ज्वाला से मनुष्य को दूर करने का प्रयास किया। उनके अनुयायियों ने उन्हीं के दिखाये गये पथ का अनुगमन करके मानव व्यक्तित्व का पूर्ण विकास करने की सभी संभावनाओं पर बल देकर समाज में नवीनता लाने का प्रयास किया है।

बौद्ध दर्शन की दो शाखाएं हैं। हीनयान – महायान। हीनयान दर्शन वैयक्तिक विकास पर बल देता है जबकि महायान दर्शन समष्टिगत जन–कल्याण की दिशा में प्रयत्नरत रहता है। वर्तमान समाज में वैयक्तिक एवं सार्वभौमिक दोनों प्रकार के अभ्युदय की अपेक्षा रहती है। सामाजिक व्यवस्था एक दूसरे के सहयोग से चलती है। महायान दर्शन लोक कल्याण एवं सामाजिक सेवा की भावना के कारण देश–विदेश में प्रतिष्ठित हुआ। इस दर्शन समाज कल्याण की बलवती प्रवृत्ति के कारण ही बोधिसत्व के वैयक्तिक निर्वाण का तिरस्कार तक कर दिया गया। श्री शान्तिदेव का कथन है कि अन्य प्राणियों की मुक्ति में जो आनन्द का सागर उमड़ता है, वह रस विहिन (व्यक्तिगत) मोक्ष में नहीं।[15] इसका तात्पर्य मानव की स्वार्थरहित परोपकारी वृत्ति ही 'आनन्द वै रसः' की अनुभूति कराने में समर्थकरी है। इसीलिए बोधिसत्व का कहना है–

"मैं यात्रियों के लिए सार्थवाह बनूंगा, शय्या चाहने वालों के लिए शय्या बनूंगा, प्रकाश चाहने वालों के लिए दीपक बनूंगा, दास चाहने वालो के लिए दास बनूंगा, मैं अनाथों का नाथ बनूंगा इत्यादि।[16] लेकिन यह अनुभव तभी होगा जब विवेक द्वारा सांसारिक वस्तुओं की क्षण भंगुरता का ज्ञान हो जायेगा और उनसे उत्पन्न होने वाला दुःख भी समाप्त प्राय रहेगा। अज्ञान ही सभी दुःखों का कारण है, जिससे निवृत्ति 'अप्प दीपो भव' द्वारा होगी। हमारे सभी व्यवहारों का उद्देश्य आत्म उन्नति है। आत्म उन्नति, एवं आत्म विश्वास मनुष्य की अपनी सामर्थ्य शक्ति एवं सद्गुणी वृत्ति पर आश्रित है। आत्मविश्वास ऐसा मानवीय गुण है जिसके सहारे मनुष्य असम्भव कार्य को सम्भव कर सकता है। मनुष्य के आत्मविश्वास का परिणाम विज्ञान की प्रगति है, जो हमारे समक्ष प्रत्यक्ष प्रमाण है। भारतीय संस्कृति में आत्म विश्वास की महत्ता वैदिक ऋचाओं से अब तक निरन्तर किसी रूप में दिग्दर्शित होती रही है–

एक एवाग्निर्बहवाः समिद्धः,
एकः सूर्यो विश्वमनु प्रभुतः।
एकैवोशाः सर्वमिदं विभात्येकम वा इदंवभूव सर्वम्।।[17]

मनुष्य के जीवन में ऊर्जा अनेक रूपों में प्रकट होती है, यह ऊर्जा ही अग्नि है। ऊर्जा भव के कारण आसक्ति के रूप में अच्छे एवं बुरे कर्मों की तरफ ले जाती

है। यदि अप्पदीपो भव के मार्ग में हम अग्रसर रहेंगे तो यह ऊर्जा आत्मविश्वास को दृढ़ता प्रदान करेगी, मनुष्य को सदाचारी स्वाध्यायी, निष्ठावान, कृतज्ञ, संयमी, शुद्ध अन्तकरण से युक्त, कर्त्तव्य पथ पर गतिशील बनायेगी। शरीर और मन की स्वस्थता के लिए ध्यान का उपयोग आवश्यक है।

बौद्ध दर्शन में प्रतिपादित विपश्यना ध्यान से चित्त की शुद्धि होती है। शान्त चित्त वाला मनुष्य आत्मविश्वास एवं संकल्प शक्ति की दृढ़ता के कारण जीवन की प्रत्येक विडम्बना को हल करने में समर्थ रहेगा। विज्ञान की प्रगति के कारण हमारी बुद्धि की तीक्ष्णता बढ़ी है। तीव्र बुद्ध के साथ–साथ, सामाजिक पारिवारिक सम्बन्धों की उत्कृष्टता बरकार रखने के लिये भावना एवं विचारों की उदारता मानव जीवन के लिए आवश्यक है। चित्त की शुद्ध से वासनाएं नष्ट हो जाती हैं। जिससे मनुष्य का सवर्तोन्मुखी विकास होता है। मनोवैज्ञानिक भी मानते हैं, कि मानव के व्यक्तित्व के विकास में आत्मविश्वास का महत्वपूर्ण योगदान है, आत्मविश्वास के अभाव में मनुष्य का स्वभाव परावलम्बी हो जाता है। इसलिए 'महतां क्रिया सिद्धि सत्वे भवति नोपकरणो' सूक्ति की सार्थकता 'अप्पदीपो भव' के द्वारा ही संभव है, जो महात्मा बुद्ध की देन है। बौद्ध दर्शन की प्रज्ञा पारमिता मनुष्य को सर्वोपरि अनुकरणीय सिद्धान्त है जिसमें निहित नीर क्षीर विवेक की प्रधानता समकालीन युग की भौतिकता की बेड़ियों में जकड़ी हुई मानव चेतना को आध्यात्मिक स्थिरता प्रदान कर सकती है जिससे मानव मूल्यों का संरक्षण एवं विश्व शान्ति की स्थापना की जा सकती है।

सन्दर्भ एवं पादटिप्पणी

1. आर्यदेव ज्ञान सार समुच्चय श्लोक संख्या 31 मूल तिब्बती भाषा से कृष्ण रव उपाध्याय एवं भिक्षु धर्मप्रज्ञ द्वारा संस्कृत भाषा में रूपान्तरित।
2. डॉ. देवराज – दर्शनः स्वरूप, समस्याएं एवं जीवन दृष्टि पृष्ठ 160।
3. डॉ. एस. वी. पी. सिन्हा – दार्शनिक निबन्ध संचयन पृष्ठ – 97।
4. त्रिपिटकाचार्य भिक्षु धर्मरक्षित – धम्मपद पृष्ठ 4, 1/5।
5. डॉ. वी. एल. अज्ञेय – भारतीय नीतिशास्त्र का इतिहास, पृष्ठ 299।
6. हेतु प्रत्ययापेक्षो भावनामुत्पादः प्रतीत्यसमुत्पादार्थः। चन्द्रकीर्तिवृत्ति, 1.1।
7. दि सेंट्रल फिलासफी आफ बुद्धिज्म, पृष्ठ 30–31।
8. अगुत्तर निकाय 1/17 एवम् 10/10।
9. त्रिपिटकाचार्य भिक्षु धर्मरक्षित – धम्मपद।
10. गीता 6/5।
11. विशुद्धि मार्ग भाग 1 पृष्ठ 8।
12. शिक्षा समुच्चय कारिका 20।
13. बोधिचर्यावतार 6/41।
14. नागार्जुन मूल माध्यमिक कारिका, पृष्ठ 32।
15. बोधिचर्यावतार 8/108।
16. बोधिचर्यावतार 3/17 –18।
17. वेद कथांक पृष्ठ 32, गीता प्रेस गोरखपुर।

◈◈

RNI : UPMUL00620/24/1/2014-TC ISSN : 2394-4366

Received: 08 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

भारत में शारीरिक शिक्षा एवं राष्ट्रीय खेल नीतियाँ

– डॉ. शैलजा शुक्ला
अिस. प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष–
शारीरिक शिक्षा विभाग,
डी. ए. वी. कालेज, कानपुर– 208001
(उत्तर प्रदेश)

ई–मेल :
drss77910@gmail.com

सारांश

सम्भवतः शारीरिक शिक्षा विधाओं में सबसे प्राचीन है। मनुष्य के विचारों का आदान–प्रदान के माध्यम भी शारीरिक क्रियायें व हाव–भाव ही हुआ करते हैं। पहले शारीरिक शिक्षा शारीरिक क्रियाओं जैसे–घुड़सवारी, तैराकी, तलवारबाजी, मल्ल युद्ध, शिकार करने, विभिन्न जानवरों की लड़ाई आदि से था। धीरे–धीरे विकसित होकर बाद में मनोरंजन, शक्ति प्रदर्शन एवं उपलब्धियों का साधन बन गयी। प्राचीन समय में शारीरिक शिक्षा का आशय शरीरिक क्रियाओं तक ही सीमित था। भारत में शारीरिक शिक्षा योजना में शारीरिक शिक्षा एवं योग का प्रतिदिन एक घन्टा विद्यालय में सभा आयोजित किये जाने पर बल दिया गया एवं स्वीकृति दी गयी कि आज खेल के लिए पर्याप्त समय देने की आवश्यकता है, जिसे राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में भी अधिगम प्रक्रिया का अभिन्न अंग माना है। खेलकूद एवं शारीरिक शिक्षकों को प्रशिक्षित एवं भर्ती की वर्तमान प्रक्रिया का विस्तार किया जाना चाहिए।

सामाजिक संस्थाएँ आवश्यकताओं की पूर्ति के साधन के रूप में विकसित नियमों – विधि विधानों एवं कार्य प्रणाली का यह एक संगठित रूप है जो समाज द्वारा मान्य है। समाजीकरण परिवार पास–पड़ोस व अन्य समूह विद्यालय, खेल, विभिन्न संस्थाओं सभी जगह होता रहता है। राष्ट्रीय खेल नीति 1984 में 184 देशों में खेल के विकास के लिए व्यापक नीतिगत विकास की ओर पहली शुरुआत की थी।

राष्ट्रीय खेल नीतियाँ विकास की आवश्यकता पर बल देती हैं और शारीरिक शिक्षा और खेल स्कूल पाठ्यक्रम का एक अभिन्न अंग बनाती हैं। 1992 में 1984 की खेल नीतियों के लक्ष्यों की वास्तविकता प्रदान करने की राष्ट्रीय खेल नीति 1992 के रूप में योजना तैयार की गई, इस योजना को प्रमुख चार भागों में विभक्त किया गया –

1. देश में खेल का माहौल पैदा करना एवं रुचि पैदा करने पर बल दिया गया।

2. खेल गतिविधियों को देश में बढ़ावा दिया जाना एक महत्वपूर्ण बिन्दु था।

3. देश प्रतियोगिताओं की ओर विशेष ध्यान देकर उसके विस्तार पर जोर दिया गया।

4. खेल प्रबन्धक पर प्रकाश दिया जाने लगा।

5. खेलकूद एक सामाजिक संस्था के रूप में खेल की चार प्रमुख विशेषताओं की संक्षिप्त समीक्षा निम्नानुसार रही –

(1) पदानुक्रम प्रणाली – नियमानुसार गतिविधियों में वरिष्ठता क्रम एवं पद स्थिति के अनुसार खेलों के पदानुक्रम खेल कुशलता की स्थिति टीम के महत्वपूर्ण खिलाड़ी एवं कुछ स्तर तक वरिष्ठता पर निर्भर करता है।

(2) संगठनात्मक एवं संरचनात्मक पहलू – प्रत्येक व्यक्ति की भूमिका उसके पदानुक्रम में उसकी स्थिति द्वारा निर्धारित की जाती है। टीम के मुख्य खिलाड़ियों से हर समय सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन देने की उपेक्षाएं रखी जाती हैं। टीम के अन्य खिलाड़ियों से उपेक्षाओं का यह स्तर कम होता है।

(3) सामाजिक नियन्त्रण – खेल मानवीय कार्यों की दिशा प्रदान करता है ताकि वे पूर्व निर्धारित उपेक्षाओं को पूर्ण कर सकती हैं।

(4) व्यवहार की अपेक्षाएं – खेलों में बड़ी संख्या में नियमों के कारण खेलों में सामाजिक नियन्त्रण की आवश्यकता होती है।

राष्ट्रीय खेल नीति एवं उसके आयाम –

1. राष्ट्रीय खेल नीति 1984 – खेलों को बढ़ावा देने तथा प्रतिभाशाली युवाओं को प्रोत्साहन देने के लिए सरकार में वर्ष 2001 में नई शिक्षा नीति बनाई इसकी प्रमुख बातें निम्न हैं–

1. उपलब्धियाँ एवं खेलों का आधार श्रेष्ठता लाना होना चाहिए।

2. संरचनात्मक ढांचे का विकास करना ।

3. राष्ट्रीय खेलों का फेडरेशनों एवं उपयुक्त संस्थाओं की सहायता प्रदान करना।

4. खेलों का वैज्ञानिक प्रशिक्षण सम्बन्धी मजबूती प्रदान करना।

5. खेलों का उद्देश्य समस्त खिलाड़ियों को प्रोत्साहन करना।

6. महिला, पिछड़ी जनजातियों एवं ग्रामीण युवाओं की भागीदारी को बढ़ावा देना है।

7. जनमानस में खेल के प्रति बढ़ावा देना है।

भारत में शारीरिक शिक्षा का विकासक्रम –

1. 1984 ताराचन्द्र समिति / शारीरिक शिक्षा समिति में डा. ताराचन्द्र (शिक्षा सचिव) को अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया जिसे ताराचन्द्र कमेटी के नाम से जाना जाता है, इस समिति ने देश के शारीरिक शिक्षा की स्थिति को सुधार के सुझााव दिये हैं।

2. 1984 राष्ट्रीय कैडट कार्व्स एवं आक्सीलरी कैडेट कार्व्स।

3. 1949 श्री हनुमान व्यायाम प्रसारक मण्डल, अमरावती महाराज से चयनित टीमें।

4. 1950 शारीरिक शिक्षा हेतु केन्द्रीय सलाहकार परिषद।

5. 1951 प्रथम एशियन खेल।

6. 1951 भारत स्काइट एवं गाइड।

7. 1953 राजकुमारी अमृतकौर खेल प्रशिक्षण योजना।

8. 1954 अखिल भारतीय खेल परिषद्।

9. 1954 स्कूल गेम्स फेडरेशन आफ इंडिया।

10. 1954 राष्ट्रीय अनुशासन योजना।

11. 1956 शारीरिक शिक्षा एवं मनोरंजन की राष्ट्रीय नीति।

12. 1957 लक्ष्मीबाई शारीरिक शिक्षा महाविद्यालय।

13. 1956–57 मौलाना अबुल कलाम आजाद ट्राफी।

14. 1958 खेल एवं युवा कल्याण विभाग।

15. 1959–60 राष्ट्रीय शारीरिक क्षमता और जांच परियोजना।

16. 1961 राष्ट्रीय खेल संस्थान।

17. 1961 अर्जुन पुरस्कार।

18. 1965 नेशनल फिटनेस वर्क्स।

19. 1969 राष्ट्रीय सेवा योजना।

20. 1970 ग्रामीण खेल प्रतियोगिता योजना।

21. 1972 लक्ष्मीबाई राष्ट्रीय शारीरिक शिक्षा महाविद्यालय।

22. 1975 महिला राष्ट्रीय खेल महोत्सव।

23. 1982 एशियन खेल।

24. 1982 भारतीय खेल प्राधिकरण।

25. 1985 द्रोणाचार्य पुरस्कार।

26. 2002 खेलकूद में जीवनभर की उपलब्धियों के लिए ध्यानचन्द्र पुरस्कार।

27. 2005 राष्ट्रीय सद्भावना पुरस्कार।

28. 2008 राजीव गांधी राष्ट्रीय युवा विकास संस्थान।

29. 2008 राष्ट्रीय डोप परीक्षण प्रयोगशाला।

30. सन् 2010 राष्ट्रमण्डल में आयोजित होने वाले खेल।

शिक्षा आयोगों एवं राष्ट्रीय शिक्षा नीतियों का भारत में शारीरिक शिक्षा विकास के संदर्भ में –

1. विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1948–49)– स्वास्थ्य सम्बन्धी आदतों को छात्रों को विकसित करने एवं व्यवस्थित रूप से महाविद्यालय स्तर तक अन्तनिर्दिष्ट करने की आवश्यकता है। छात्रों के शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य में संतुलन प्राप्त कर सकते हैं। जो न केवल उनके व्यक्तिगत हित के लिए अपितु राष्ट्र शक्ति एवं खुशहाली के लिए भी महत्वपूर्ण है।

2. माध्यमिक शिक्षा आयोग रिपोर्ट (1952–53) –

(क) स्वास्थ्य शिक्षा

(ख) चिकित्सा सुविधा

(ग) छात्रावासों एवं आवासीय विद्यालयों पोषण मानकों को बनाए रखना।

(घ) शारीरिक श्रम की गरिमा की सराहना करने के लिए प्रशिक्षित किया जाए।

3. शिक्षा आयोग (कोठारी आयोग 1964–1966)–

(क) शारीरिक शिक्षा कार्यक्रमों की योजना वांछित परिणामों को प्राप्ति के लिए निर्मित की जानी चाहिए, इसके लिए आवश्यक है कि प्रतियोगियों की क्षमता एवं उनकी रुचियों को ध्यान में रखा जाए।

(ख) हमारे देश में श्शारीरिक शिक्षा कार्यक्रमों में विकसित खेल और शारीरिक गतिविधियों के पर अधिक जोर दिया जाना चाहिए।

(ग) प्रत्येक छात्र के व्यक्तिगत मूल्य एवं गर्व की भावना का विकास करने वाली गतिविधियों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

(घ) उत्तरदायित्व वहन करने की भावना का विकास, अन्य कार्यक्रमों को पूरक के रूप में शारीरिक शिक्षा पेश किया जाना चाहिए।

(ड.) योग्यता विशेष एवं प्रतिभा सम्पन्न छात्रों को विशेष शिक्षा एवं प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिए।

4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति–1968
(National Educatiom Policy-1968)

☛ **खेलकूद** – वृहत् रूप में इस उद्देश्य के साथ विकसित किया जाना चाहिए, जहाँ राष्ट्र व्यापी शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम विकसित करने के लिए खेल मैदानों एवं अन्य सुविधाओं का अभाव है। वहाँ इन्हें वरीयता के आधार पर विकसित किया जाना चाहिए।

☛ **राष्ट्रीय शिक्षा नीति** – 31 मार्च, 1986 में प्रधानमंत्री राजीव गाँधी ने राष्ट्रीय प्राथमिक शिक्षा सम्मेलन में बोलते हुए राष्ट्रीय शिक्षा नीति की तैयारी के संदर्भ में व्यापक रूप से प्रकाश डाला।

☛ **खेल एवं शारीरिक शिक्षा** – शारीरिक शिक्षा खेल की प्रक्रिया में सीखने का एक अभिन्न अंग है। इसमें छात्रों की कार्यक्षमता और मूल्यांकन को भी शामिल किया जायेगा। शारीरिक शिक्षा और खेलकूद की राष्ट्रव्यापी अधोसंरचना को शिक्षा व्यवस्था का अंग बनाया जायेगा।

☛ **योगा (Yoga)** शरीर और मन के समेकित विकास के साधन के रूप में योग शिक्षा पर बल दिया जायेगा। सभी विद्यालयों में योग की शिक्षा के प्रयास किये जायेंगे और इस दृष्टि से शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों में योग की शिक्षा भी सम्मिलित की जायेगी।

5. राष्ट्रीय सेवा योजना – शैक्षिक संस्थाओं के माध्यम से और युवाओं को राष्ट्रीय और सामाजिक विकास के कार्य में सम्मिलित होने के अवसर दिये जायेंगे, जिसमें सभी विद्यार्थियों को भाग लेना अनिवार्य होगा। पाठ्यक्रम के निर्धारण में शारीरिक शिक्षा और खेल के लिए पर्याप्त समय आवंटित करने की आवश्यकता है जो राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के अधिगम प्रक्रिया का अभिन्न अंग माना जाता है।

भारत में शारीरिक शिक्षा योजना में शारीरिक शिक्षा एवं योग का प्रतिदिन एक घन्टा विद्यालय में सभा आयोजित किये जाने पर बल दिया गया एवं स्वीकृति दी गयी कि आज खेल के लिए पर्याप्त समय देने की आवश्यकता है, जिसे राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में भी अधिगम प्रक्रिया का अभिन्न अंग माना है। खेलकूद एवं शारीरिक शिक्षकों को प्रशिक्षित एवं भर्ती की वर्तमान प्रक्रिया का विस्तार किया जाना चाहिए।

6. देश में प्रत्येक वर्ष स्वास्थ्य कार्यक्रम – केन्द्र शासन ने संक्रमण रोगों की रोकथाम के लिए एक स्वच्छ वातावरण का विकास, पोषण स्तर का विकास, जनसंख्या नियंत्रण में ग्रामीण स्वास्थ्य में सुधार कार्यक्रम सम्मिलित हैं– जैसे– W.H.O., UNICEF, UNEPA, World Bank और विदेशी संस्थान द्वारा तकनीकी और आर्थिक सहायता दी जाती है–

(1) राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम।

(2) संशोधित राष्ट्रीय तपेदिक नियंत्रण

कार्यक्रम।

(3) राष्ट्रीय वैक्टर प्रभावित रोग नियंत्रण कार्यक्रम।

(4) राष्ट्रीय कुष्ठ उन्मूलन कार्यक्रम।

(5) राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम।

(6) अंधत्व के प्रतिबन्ध के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रम।

(7) खेलों के विकास, प्रसार में मीडिया की भूमिका–

(1) खेलों का प्रचार–प्रसार।

(2) नवीन कौशल सीखने में सहायक।

(3) तकनीकों का तात्कालिक ज्ञान।

(4) खेलों के अनुसंधानों में सहायक।

(5) सफल प्रतियोगिताओं का संचालन।

(6) खेल रिकार्ड रखने में सहायक।

(7) नवीन खेल सामग्रियों में सहायक।

(8) खिलाड़ी की खेल दक्षता में वृद्धि।

सम्भवतः शारीरिक शिक्षा विधाओं में सबसे प्राचीन है। मनुष्य के विचारों का आदान–प्रदान के माध्यम भी शारीरिक क्रियायें व हाव–भाव ही हुआ करते हैं। पहले शारीरिक शिक्षा शारीरिक क्रियाओं जैसे– घुड़सवारी, तैराकी, तलवारबाजी, मल्ल युद्ध, शिकार करने, विभिन्न जानवरों की लड़ाई आदि से था। धीरे–धीरे विकसित होकर बाद में मनोरंजन, शक्ति प्रदर्शन एवं उपलब्धियों का साधन बन गयी। प्राचीन समय में शारीरिक शिक्षा का आशय शारीरिक क्रियाओं तक ही सीमित था।

नई राष्ट्रीय खेल नीति –

खेलकूद संविधान के अनुसार राज्य का विषय होता है। परन्तु केन्द्र सरकार भी समय–समय पर खेलों का प्रोत्साहन के उद्देश्य से अनेकों कार्यक्रम बनाते हैं। इसी कड़ी में केन्द्र सरकार में राष्ट्र को स्वावलम्बी, प्रगतिशील व आत्मनिर्भर बनाने एवं अच्छे खिलाड़ियों का निर्माण करने के उद्देश्य से शारीरिक शिक्षा को शैक्षिक पाठ्यक्रम में शामिल किया गया। इसमें हमारा देश विश्व की खेल स्पर्धाओं में उच्च स्थान पाकर पदक प्राप्त कर सकता है।

इसी संदर्भ में शारीरिक शिक्षा को एक अनिवार्य विषय के रूप में पाठ्यक्रम में शामिल करने का राज्य सरकारों को निर्देश दिये गये, जिसे संज्ञान में लेकर उत्तर प्रदेश सरकार ने 6 नवम्बर, 2004 को गजट से माध्यमिक कलाओं में अनिवार्य विषय के रूप में शैक्षिक पाठ्यक्रम में शामिल किया।

भारत सरकार द्वारा खेलों को बढ़ावा देने के उद्देश्य से भारत सरकार प्रति वित्तीय वर्ष में सिन्थेटिक एथलेक्टिस एवं कृत्रिम हाकी एस्टो टर्फ बिछाने के लिए अनुदान देती है। इसमें वित्तीय सहायता अधिकतम 50 लाख रुपये में है, 50 प्रतिशत सहायता के रूप में दिया जाता है। इस योजना का क्रियान्वयन भारतीय खेल प्राधिकरणा के माध्यम से होता है।

शारीरिक शिक्षा का भविष्य अंधकारमय होने का प्रमुख कारण इसके अच्छे शिक्षण संस्थाओं की कमी होना है। इसलिए शारीरिक शिक्षा के भविष्य के लिए उचित यही होगा कि इन संस्थाओं में शिक्षा के स्तर पर ध्यान देकर शारीरिक शिक्षा के गिरते स्तर को रोका जाये अन्यथा भविष्य अच्छा नहीं है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. शारीरिक शिक्षा – ए. के. वंसल।
2. शारीरिक शिक्षा एवं स्वास्थ्य योग शिक्षा – डॉ. कृष्ण कुमार पटेल एवं मनोज प्रजापति।
3. स्वास्थ्य, शिक्षा, सुरक्षा एवं अति उपचार – श्रीमती आर. के. शर्मा, ए. एस. तोमर एवं श्रीकृष्ण दुबे।
4. दैनिक जागरण समाचार पत्र कानपुर संस्करण।
5. अमर उजाला (दैनिक) समाचार पत्र कानपुर संस्करण।

Received: 08 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

महाकाव्यों एवं पुराणों में सूर्य की संकल्पना

– डॉ. विनीता वर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर – संस्कृत विभाग,
डी. एन. (पी. जी.) कॉलेज, फतेहगढ़,
फर्रुखाबाद–209601 (उत्तर प्रदेश)

ई–मेल :
vinitaverma@gmail.com

ब्रह्माण्ड सम्बन्धी विचार –

पुराणों में भूगोल के समान ही खगोल का भी वर्णन मिलता है। खगोल का पौराणिक विवरण भी भूगोल के समान ही सांकेतिक और विवरणात्मक दोनों प्रकार का मिलता है। ग्रहों की अवस्थिति कहाँ–कहाँ हैं, कौन ग्रह किस ग्रह से कितनी दूरी पर है, इसका विवरण देने के साथ ही कहीं–कहीं ग्रह और नक्षत्रों के स्वरूप के विशय में भी प्रकाश डाला गया है।

The central idea of various cosmogonic theories of the Vedic and post-Vedic period appears to be (i) the existence of waters in the beginning and (ii) the creation of a cosmic nucleus - Prajapati - the maker of the Universe. This nucleus is often named as Hiranyagarbha (or Golden Egg) which is considered as the source of the existence of all mundane and heavenly entities because it contained fire (heat) within itself. The Aitareya Brahmana gives more details of cosmogony on the same lines ...... Not only the Puranas but also the basic concepts of cosmology in different parts of the old world conform to the general pattern laid down by the Vedic writers. The Vedic ideas persisted for thousands of years and with local or regional variations are traceable not only in the scriptures of the great religions of the world. [1]

श्रीमद्भागवत पुराण में खगोल का विवरण आता है। सूर्य के रथ के चक्र का निरूपण दृष्टव्य है –

यस्यैकं चक्रं द्वादशारं शण्नेमि त्रिणाभिं संवत्सरात्मकं समामनन्ति तस्याक्षो मेरोर्मूर्धनि कृतो मानसोत्तरे कृतेतरभागो यत्र प्रोतं रविरथचक्रं तैलयन्त्राचक्रवद्भ्रमन्मान सोत्तरगिरौ परिभ्रमति।[2]

अग्नि पुराण के खगोल के वर्णन प्रसंग में ग्रहों तथा लोकों की स्थिति और दूरी बतलाई गई है। नक्षत्रों तथा राशियों के नाम यहाँ भी हैं। परन्तु कोई विलक्षित क्रम नहीं मालूम होता। ''अभिजित'' नक्षत्र का उल्लेख यहाँ भी मिलता है –

रोहिणी पुष्यफल्गुन्यः स्वाती ज्येष्ठा क्रमेण तु।
अभिजिच्छततारा तु अश्विनी मध्यनाडिका।।[3]

वायु पुराण में भी इन विषयों का विस्तृत उल्लेख हुआ है –

अस्य भारतवर्षस्य विष्कम्भं तु सुविस्तरम्।
मण्डलं भास्करस्याथ योजनानां निबोधत।।
नवयोजनसाहस्त्रो विस्तारो भास्करस्य तु।
विस्तारात्रिगुणास्यास्य परिणाहोऽथ मण्डलम्।।[4]

* * *

श्रवणे चोत्तरां काष्ठां चित्रभानुर्यदा भवेत्।
शाकद्वीपस्य षष्ठस्य उत्तरान्तोदितश्चरन्।।[5]

* * * *

मूलं चैव तथाऽऽशाढे ह्यजवीथ्युदयास्त्रयः।
अभिजित्पूर्वतः स्वातिर्नागवीथ्युदयास्त्रयः।।[6]

* * * *

मेशान्ते च तुलान्ते च भास्करोदयतः स्मृताः।
मुहूर्ता दश पंचैव अहो रात्रिश्च तावती।।
कृत्तिकानां यदा सूर्यः प्रथमांशगतो भवेत्।
विशाखानां तथा ज्ञेयश्चतुर्थांशें निशाकरः।।
विशाखायां यदा सूर्यश्चरतेंऽशं तृतीयकम्।
तदा चन्द्रं विजानीयात्कृत्तिकाशिरसि स्थितम्।।
विशुवन्तं तदा विधादेवमाहुर्महर्शयः ।
सूर्येण विशुवं विद्यात्कालं सोमेन लक्षयेत्।।
समा रात्रिरहश्चैव यदा तद्विशुवद्भवेत्।
तदा दानानि देयानि पितृभ्यो विशुवत्यपि।।[7]

मार्कण्डेयपुराण में भी इन तथ्यों का विधिवत निरूपण हुआ है –

मेषादयस्त्रयो मध्ये मुखे द्वौ मिथुनादिकौ।
प्राग् दक्षिणे तथा पादे कर्किसिंहौ व्यवस्थितौ।।[8]

* * * *

मीनमेशौ द्विजश्रेष्ठ पादे पूर्वोत्तरे स्थितौ ।
कूर्मे देशास्तथर्क्षाणि देशेश्वेतेषु वै द्विज ।।
राशयश्च तथर्क्षेशु ग्रहराशिश्ववस्थिताः ।
तस्माद ग्रहर्क्षपीडासु देशपीडां विनिर्दिशेत्।।
तत्र स्नात्वा प्रकुर्वीत दानहोमादिकं विधिम्।
स एश वैशवः पादो ब्रह्मन् मध्ये ग्रहस्य यः।।[9]

ब्रह्माण्ड पुराण में सूर्य का विस्तार, पृथ्वी के आगे की स्थिति, लोकों के द्वारधारण करने का क्रम, लोकपालों के पुरों का वर्णन, सूर्य की गति का वर्णन आदि उल्लिखित हैं –

नवयोजनसाहस्त्रो विस्तारो भास्करस्य तु।
विस्तारात् त्रिगुणस्यास्य परिणाहस्तु मण्डले ।[10]

* * * *

विष्कम्भमण्डलाच्चैव भास्कराद् द्विगुणः शशी।
शतार्द्धकोटिविस्तारा पृथिवी कृत्स्नशः स्मृता।।
तस्य अर्ध्वप्रमाणेन मेरोर्थावत्तु संस्थितिः।
पृथिव्या ह्यर्धविस्तारो योजनाग्रात प्रकीर्त्तितः।।[11]

इन्हीं तथ्यों का विषद् वर्णन आगे ब्रह्माण्ड पुराण के इसी अध्याय में श्लोक 14 से 41 तक हुआ है।

इन तथ्यों की सांगोपांग प्रस्तुति विष्णु पुराण में भी विस्तृत रूप से हुई है –

रविचन्द्रमसोर्यावन्मयूरवैरवभास्यते ।
ससमुद्रसरिच्छैला तावती पृथिवी स्मृता।।
यावत्प्रमाणा पृथिवी विस्तारपरिमण्डलात्।
नभस्तावत्प्रमाणं वै व्यासमण्डलतो द्विज।।[12]

उपर्युक्त उद्धरणों के द्वारा अति संक्षेप में यहाँ खगोल का विवरण उपस्थित किया गया है। इस खगोल ज्ञान में भी पुराणों की गति आश्चर्यजनक लगती है, जबकि मन्त्रों का साधन हमारे पुराणकर्ताओं को उपलब्ध नहीं था। ब्रह्माण्ड में सारे तत्व हैं। वहाँ सबके भीतर सबसे छोटी पृथ्वी है।

पृथ्वी के चारों ओर से आवृत्त या वेष्टित करने वाला जलतत्व है जो परिमाण में पृथ्वी से दस गुना बड़ा है। वह जलतत्व पृथ्वी के चारों ओर अन्तरिक्ष में व्याप्त है और उसको भी चारों ओर से वेष्टित करने वाला तेज है। उसी तेज का घनमण्डल सूर्य हमको दिखाई देता है। वह जलतत्व से भी परिमाण में दस गुना बड़ा है। यह त्रिलोकी सूर्य के वश में है किन्तु उसे भी वेष्टित करने वाला और उससे बहुत बड़ा वायुमण्डल है जो महः और जनः लोकों में व्याप्त है। उस वायुमण्डल को वेष्टित करने वाला आकाश है जो वायुमण्डल से परिमाण में दस गुना बड़ा है। वही आकाश तप और सत्यलोक के नाम से विख्यात है।

सौर्य परिभ्रमण –

सूर्य अपने स्थान पर स्थिर है या अस्थिर इस तथ्य की व्याख्या भी पुराणों की सहायता से की जा सकती है। वस्तुस्थिति यह है कि किसी एक सन्दर्भ में सूर्य स्थिर है और किसी अन्य सन्दर्भ में सूर्य भ्रमणशील भी है। आधुनिक पाश्चात्य विद्वानों और खगोलशास्त्रियों ने बड़े ही स्पश्ट शब्दों में कहा है कि सूर्य भ्रमणशील है। सूर्य में ग्रहों की भाँति घूर्णन तथा परिक्रमण दोनों ही गतियाँ पाई जाती हैं। सूर्य गैसीय है इसलिये घूर्णन करते समय इसका विशुवत्‌रेखीय भाग ध्रुवीय भागों की अपेक्षा अधिक गति से घूमता है। विशुवत् रेखा पर घूर्णन की गति 25 दिन और ध्रुवों पर घूर्णन की गति 30 दिन है।[13] सूर्य एक तारा है और असंख्य तारा पुंज आकाश गंगा के सदस्य हैं। आकाश गंगा नामक इस सर्पिल बिम्ब (Spiral disc) का व्यास लगभग एक लाख प्रकाश वर्ष[14] तथा मोटाई पाँच हजार प्रकाश वर्ष है।[15] आकाश गंगा की सर्पिल भुजा

के एक सिरे पर सूर्य एक साधारण तारे के रूप में स्थित है।[16]

आकाश गंगा की नाभि की पूर्ण परिक्रमा लगाने में सूर्य को 25 करोड़ वर्ष लगते हैं।[17] इस प्रकार सूर्य द्वारा परिक्रमा की गति 320 किलोमीटर प्रति सेकेण्ड से भी अधिक है। प्रसिद्ध पाश्चात्य विद्वान लिटिलटन के अनुसार सूर्य अब तक 25–30 परिक्रमाएं कर चुका है।

विष्णु पुराण में पुराणकार ने बहुत पहले ही सौर्य परिक्रमण का उल्लेख किया है। सूर्य विभिन्न राशियों में होता हुआ परिक्रमण करता है। यथा–

अयनस्योत्तरस्यादौ मकरं याति भास्करः।
ततः कुम्भं च मीनं च राशे राश्यन्तरं द्विज।।[18]
x x x
अतिवेगतया कालं वायुवेगबलाच्चरन्।
तस्मात्प्रकृष्टां भूमिं तु कालेनाल्पेन गच्छति।।[19]

सौर्य–परिक्रमण का उल्लेख मत्स्य पुराण में स्पष्ट रूप से हुआ है। यथा–

स शीघ्रमेव पर्येति भानुरालातचक्रवत्।।
भ्रमन् वै भ्रममाणानि ऋक्षाणि चरते रविः।
एवं चतुर्शु पार्श्वेषु दक्षिणां तेषु सर्पति।।
उदयास्तमये वाऽसावुतिष्ठति पुनः पुनः।[20]

अर्थात् इस प्रकार सूर्य आलात चक्र की भाँति शीघ्र गति से चलता है और स्वयं भ्रमण करता हुआ नक्षत्रों को भ्रमण कराता है। इस प्रकार चारों पार्श्वों में सूर्य प्रदक्षिणा करता हुआ गमन करता है तथा अपने उदय तथा अस्त काल के स्थानों पर बार–बार उदित और अस्त होता रहता है।

वायु पुराण में भी इसी तथ्य अर्थात् सौर्य–परिक्रमण का उल्लेख यत्किंचित शब्द–वैभिन्य के साथ हुआ है। यथा–

स शीघ्रमेति पर्येति भास्करोऽलातचक्रवत्।
भ्रमन्वै भ्रममाणानि ऋक्षाणि गगने रविः।।
एवं चतुर्शु द्वीपेशु दक्षिणान्तेन सर्पति।
उदयास्तमनेनासावुत्तिष्ठति पुनः पुनः।।[21]

श्री मद्भागवत् पुराण में भी सौर्य परिक्रमण का उल्लेख दृष्टव्य है –

एवं मुहूर्तेन चतुर्स्त्रिशल्लक्ष
–योजनान्यष्टषता– धिकानि सौरो
रथस्त्रयीमयोऽसौ चतसृषु
– परिवर्त्तते पुरीषु।।[22]

ब्रह्माण्ड में सूर्य का स्थान –

इस अपरिमेय ब्रह्माण्ड में सूर्य की स्थिति नगण्य सी है। आधुनिक पाश्चात्य भूगोलविदों ने स्पष्ट रूप से कहा है कि इस विशाल ब्रह्माण्ड में कई आकाश गंगाएं हैं। आकाशगंगा तारों का वह समूह है जो कि लम्बाकार पथ के रूप में आकाश में दिखाई पड़ता है।[23] रात्रि को स्वच्छ आकाश में यह पथ स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। यह आकाश गंगा उत्तरी आकाश में क्षितिज से क्षितिज तक फैली है। इस प्रकार यह आकाश गंगा आकाश को लगभग दो समान भागों में विभाजित कर देती है। यह आकाश में कहीं अधिक चमकीली और कहीं कम चमकीली है।[24]

आकाश गंगा की तुलना एक चौरस चकती से की गई है जिसका व्यास एक लाख प्रकाश वर्श और मोटाई 5,000 प्रकाश वर्ष है। इस चकती के केन्द्र पर एक गांठ के समान रचना है। इसे आकाश गंगा का केन्द्रक (Nucleus) कहते हैं। असंख्य तारे इस केन्द्रक के चारों ओर सर्पिल भुजाओं में स्थित होकर परिक्रमा लगाते हैं। इन असंख्य तारों में से सूर्य एक है। विश्णु पुराण में इन सर्पिल भुजाओं को नागवीथि कहते हुये सूर्यपथ का वर्णन किया गया है –

नागवीत्युत्तरं यच्च सप्तर्शिभ्यश्च दक्षिणम्।
उत्तरः सवितुः पन्था देवयानश्च स स्मृतः।।[25]

अनेक सूर्यो की कल्पना –

अन्तरिक्ष में कितने नक्षत्र अथवा तारे हैं, इस बात की गणना करना अत्यन्त कठिन ही नहीं अपितु असंभव भी है। इन तारों में से अनेक तारे आज भी अग्नि पिण्ड के रूप में हैं जो स्वयं भी प्रकाशित होते हैं तथा अन्य तारों को भी प्रकाशित करते हैं। सौर्य परिवार सूर्य, ग्रह, उपग्रह अवान्तर तारा का एक समूह है जिसे सौर्य मण्डल कहते हैं। अनन्त ब्रह्माण्ड अथवा अन्तरिक्ष में इस प्रकार के अनेक सौर्य मण्डल हैं। पाश्चात्य आधुनिक विद्वानों के अनुसार अनन्त ब्रह्माण्ड में सहस्त्रों सौर्य मण्डल हैं। हमारे सूर्य के सहस्त्रों गुने बड़े नक्षत्र अन्य सौर्य मण्डलों में हैं।[26] यद्यपि हम मात्र अपने सौर्य मण्डल से ही परिचित हैं।[27]

विष्णु पुराण में भी एक से अधिक अर्थात् 12 सूर्यो के विषय में उल्लेख किया गया है और उनके नाम भी गिनाये गये हैं। बारह सूर्यों के नाम क्रमशः 1. धाता, 2. अर्यमा, 3. मित्र, 4. वरूण, 5. इन्द्र, 6. विवस्वान, 7. पूषा, 8. विश्वावसु, 9. अंश, 10. भग, 11. त्वष्टा तथा 12. विष्णु हैं।

यद्यपि सूर्यों और वर्ष में माहों की संख्या बारह होने के कारण तथ्य में वैज्ञानिकता उत्पन्न करने के लिये प्रत्येक सूर्य को प्रत्येक माह का स्वामी बताया गया है –

धाता ऋतुस्थला चैव पुलस्त्यो वासुकिस्तथा।[28]
x x x x x
अर्यमा पुलहष्चैव रथौजाः पुंजिकस्थला।[29]
x x x x x
मित्रोऽत्रिस्तक्षको रक्षः पौरूषेयोऽथ मेनका।[30]
x x x x x
वरूणो वसिष्ठो नागश्च सहजन्या हूहू रथः।[31]
x x x x x
इन्द्रो विश्वावसुः स्त्रोत एलापुत्रस्तथांगिराः।[32]
x x x x x
विवस्वानुग्रसेनश्च भृगुरापूरणस्तथा।[33]
x x x x x
पूशा वसुरूचिर्वातो गौतमोऽथ धनंजयः।[34]
x x x x x
विश्वावसुर्भरद्वाजः पर्जन्यैरावतौ तथा।[35]
x x x x x
अंशकाश्यपताक्ष्यास्तु महापद्मस्तथोर्वशी।[36]
x x x x x
ऋतुर्भगस्तथोर्णायुः स्फूर्जः कर्कोटकस्तथा।[37]
x x x x x
त्वश्टाथ जमदग्निश्च कम्बलोऽथ तिलोत्तमा।[38]
x x x x x
विष्णुरष्वतरो रम्भा सूर्यवर्चाश्च सत्यजित्।[39]

रामायण में तो 46 सूर्यों की कल्पना की गई है और उनके नाम भी गिनाये गये हैं।

आदित्यः सविता सूर्यः खगः पूषा गभस्तिमान्।
सुवर्णसदृशो भानुहिरण्यरेता दिवाकरः।।
हरिदश्वः सहस्त्रार्चिः सप्तसप्तिर्मरीचिमान्।
तिमिरोन्मथनः शम्भुस्त्वष्टा मार्तण्डकोंऽशुमान्।।
हिरण्यगर्भः शिशिरस्तपनोऽहस्करो रविः।
अग्निगर्भोऽदितेः पुत्रः शंखः शिशिरनाशनः।।
व्योमनाथस्तमोभेदी ऋग्यजुःसामपारगः।
धनवृष्टिरपां मित्रो विन्ध्यवीथीप्लवंगमः।।
आतपी मण्डली मृत्युः पिंगलः सर्वतापनः।
कविर्विश्वो महातेजा रक्तः सर्वभवोदद्भवः।।
नक्षत्रग्रहताराणामधिपो विश्वभावनः।[40]

महाभारत में आरण्यकपर्व में वैशम्पायन ने 108 सूर्यों के नाम गिनाये हैं। (सारिणी–3)

सूर्योऽर्यमा भगस्त्वश्टा पूर्षार्कः सविता रविः।
गभस्तिमानजः कालो मृत्युर्धाता प्रभाकरः।।
पृथिव्यापश्च तेजश्च रवं वायुश्च परायणम्।
सोमो बृहस्पतिः शुक्रो बुधोऽंगारक एव च।।
इन्द्रो विवस्वान्दीप्तांशुः शुचिः शौरि शनैश्चरः।
ब्रह्मा विष्णुश्च रूद्रश्च स्कन्दो वैश्रवणो यमः।।
वैद्युतो जाठरश्चाग्निरैन्धनस्तेजसां पतिः।
धर्मध्वजो वेदकर्त्ता वेदांगो वेदवाहनः ।।
कृतं त्रेता द्वापरश्च कलिः सर्वामराश्रयः।
कला काश्ठा मुहूर्ताश्च पक्षा मासा ऋतुस्तथा।।
संवत्सरकरोऽश्वत्थः कालचक्रो विभावसुः।
पुरुषः शाश्वतो योगी व्यक्ताव्यक्तः सनातनः।।
लोकाध्यक्षः प्रजाध्यक्षो विश्वकर्मा तमोनुदः।
वरूणः सागरोऽंशुश्च जीमूतो जीवनोऽरिहा।।
भूताश्रयो भूतपतिः सर्वभूतनिशेवितः।
मणिः सुवर्णो भूतादिः कामदः सर्वतोमुखः।।
जयो विशालो वरदः शीघ्रगः प्राणधारणः।
धन्वन्तरिर्धूमकेतुरादि दितेः सुतः।।
द्वादशात्मारविन्दाक्षः पिता माता पितामहः।
स्वर्गद्वारं प्रजाद्वारं मोक्षद्वारं त्रिविष्टपम्।।
देहकर्ता प्रशान्तात्मा विश्वात्मा विश्वतोमुखः।
चराचरात्मा सूक्ष्मात्मा मैत्रेण वपुशान्वितः।।[41]

महाभारत में ही शान्ति पर्व में 12 सूर्यों के ही नाम गिनाये गये हैं–

भगोऽंशश्चार्यमा चैव मित्रोऽथ वरूणस्तथा।
सविता चैव धाता च विवस्वांश्च महाबलः।।
पूषा त्वष्टा तथैवेन्द्रो द्वादशा विश्णुरूच्यते।
त एते द्वादशादित्याः कश्यपस्यात्मसंभवाः।।[42]

मत्स्य पुराण में भी मात्र 12 सूर्यों के ही नाम गिनाये गये हैं। (सारिणी–4)

इन्द्रो विष्णुर्भगस्त्वष्टा वरूणोह्यर्यमा रविः।
पूषा मित्रश्च धनदो धाता पर्जन्य एव च।।
इत्येते द्वादशादित्या वरिष्ठास्त्रिदिवौकसः।।[43]

वायु पुराण में भी मात्र 12 सूर्यों के ही नाम गिनाये गये हैं। (सारिणी–5)

धाताऽर्यमा च मित्रश्च वरूणोऽंशो भगस्तथा।
इन्द्रो विवस्वान्पूषा च पर्जन्यो दशमः स्मृतः।।
ततस्त्वष्टा ततो विष्णुरजधन्योऽजधन्यजः।
इत्येते द्वादशाऽऽदित्याः कश्यपस्य सुताः स्मृताः।।[44]

इस सन्दर्भ में यह ध्यातव्य है कि महाकाव्य युग में ही प्राचीन भारतीय मनीषियों ने एक से अधिक सूर्यों के अस्तित्व का ज्ञान प्राप्त कर लिया था। आज की ही भाँति यद्यपि उस समय भी विद्वानों में मतभेद थे और विभिन्न विद्वानों द्वारा सूर्यों की संख्या भिन्न–भिन्न बताई गई थी किन्तु इतना सुनिश्चित ही है कि एक से अधिक सूर्यों के सम्बन्ध में प्राचीन मनीशियों को जानकारी थी। आधुनिक पाश्चात्य विद्वान जहाँ मात्र एक से अधिक सूर्यों के अस्तित्व के विषय में ज्ञान प्राप्त कर पाये वहीं भारतीय विद्वानों ने अपने–अपने विवेक के आधार पर अपने ज्ञान की पुश्टि में विभिन्न सूर्यों के नाम भी गिनाये हैं। यह भी सही है कि विभिन्न विद्वानों द्वारा बताये गये नामों में यत्किंचित् अन्तर है किन्तु इसको मात्र वैचारिक मतभेद ही कह सकते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. Ali, S.M., The Geography of the Puranas, New Delhi, 1966, PP. 187-188
2. श्रीमद्भागवत् महापुराण, गोरखपुर, 1986, पंचम स्कन्ध, अध्याय 21, श्लोक 13
3. अग्निपुराणम्, प्रयाग, 1986, अध्याय 128, श्लोक 5
4. वायुपुराणम्, प्रयाग, 1987, अध्याय 50, श्लोक 62–63
5. तदैव, श्लोक 127
6. तदैव, श्लोक 130
7. तदैव, अध्याय 50, श्लोक 196–200
8. तदैव, अध्याय 55, श्लोक 75
9. तदैव, श्लोक 79–81
10. ब्रह्माण्ड पुराण, पूर्व भाग, अनुशंगपाद, अध्याय 21, श्लोक 7
11. ब्रह्माण्ड पुराण, पूर्व भाग, अनुशंगपाद, अध्याय 21, श्लोक 12–13।
12. श्री विष्णु पुराण, गोरखपुर, 1986, द्वितीय अंश, अध्याय 7, श्लोक 3–4।
13. चौहान, वीरेन्द्र सिंह, भौतिक भूगोल, मेरठ, 1977, पृ0 10
14. यह समय की इकाई नहीं है अपितु दूरी नापने की एक बड़ी इकाई है। प्रकाश एक सेकेण्ड में 2,97,600 किमी. चलता है। एक वर्ष तक इस वेग से चलने पर जितनी दूरी तक प्रकाश पहुँचता है, उसी दूरी को एक प्रकाश वर्श कहते हैं।
15. Lyttleton, R.A., The Modern Universe, London, 1936, P. 143.
16. Oparin, A., and Fesenkov, V., The Universe, London, 1957, P. 58.
17. तिक्खा, डॉ. आर. एन., भौतिक भूगोल, मेरठ, 1970, पृ0 11
18. श्री विष्णु पुराण, गोरखपुर, 1986, द्वितीय अंश, अध्याय 8, श्लोक 28
19. तदैव, श्लोक 33
20. मत्स्यपुराणम्, कलकत्ता, 1954, अध्याय 122, श्लोक 31–33
21. वायु पुराणम्, प्रयाग, 1987, अध्याय 50, श्लोक 102–103
22. श्रीमद्भागवतमहापुराणम्, गोरखपुर, 1986, पंचम् स्कन्ध, अध्याय 21, श्लोक 12
23. चौहान, वीरेन्द्र सिंह, भौतिक भूगोल, मेरठ, 1977, पृ. 6–7
24. तिक्खा, डॉ. आर. एन., भौतिक भूगोल, मेरठ, 1970, पृ. 10
25. श्री विष्णु पुराण, गोरखपुर, 1986, द्वितीय अंश, अध्याय 8, श्लोक 90।
26. अग्रवाल, डॉ. के. एम. एल., भौतिक भूगोल, आगरा, 1989, पृष्ठ – 1।
27. Wooldridge, S.W. and Morgan, R.S., An Outline of Geomorphology, London, 1959, P. 1
28. श्री विष्णु पुराण, गोरखपुर, 1986, द्वितीय अंश, अध्याय 11, श्लोक 3।
29. तदैव, श्लोक 5
30. तदैव, श्लोक 7
31. तदैव, श्लोक 8
32. तदैव, श्लोक 9
33. तदैव, श्लोक 10
34. तदैव, श्लोक 11
35. श्री विष्णु पुराण, गोरखपुर, 1986, द्वितीय अंश, अध्याय 11, श्लोक 12।
36. तदैव, श्लोक 13
37. तदैव, श्लोक 14
38. तदैव, श्लोक 16
39. तदैव, श्लोक 18
40. श्री मद्बाल्मीकीय रामायण, गोरखपुर, 1986, युद्धकाण्ड, सर्ग 105, श्लोक 10–15।
41. सातवलेकर, डॉ. पं. श्रीपाद दामोदर, महाभारत, पारडी, 1969, आरण्यक पर्व, अध्याय 3, श्लोक 18–28
42. तदैव, शान्ति पर्व, अध्याय 201, श्लोक 15–16
43. मत्स्य पुराणम्, कलकत्ता, 1954, अध्याय 170, श्लोक 56–57
44. वायु पुराणम्, प्रयाग, 1987, अध्याय 66, श्लोक 66–67

◈◈

RNI : UPMUL00620/24/1/2014-TC ISSN : 2394-4366

Received: 08 Jun., 2021; **Accepted:** 21 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

रामचरितम् कविशिरोमणिरभिनन्दस्य कर्तुः परिचयाः

– डॉ. अरविन्द कुमार चतुर्वेदी
असिस्टेन्ट प्रोफेसर – संस्कृत विभाग,
पं. रामदत्त त्रिपाठी महाविद्यालय,
झींझक–कानपुर देहात–209303

ई–मेल :
arvindkumarchaturvedi2@gmail.com

साराश

कतिपयानां प्रसिद्धानां कबीनां काव्यानि विलोक्य तत्रत्य सामाजिकतत्त्यरत्नानि संगृह्य तानि मालारूपेण संग्रथ्य विदुषां कण्ठेषु परिधापयितुमिच्छामि। इमाश्च रत्नमालाः प्रतिगृह्य मामनुगृह्णन्तु विद्वन्मणय इति प्रथम सम्प्रार्थ्य निबन्धगहनं प्रविविक्षामि । किन्तु कविप्रजापतीनां तान्येव वस्तून्यालम्बः, यानि निजप्रजापतिना सृष्टानि । निजप्रजापतिः शेले लतास्सृजति, कविप्रजापतिस्तु लतासु शैलान् सृजति। एवं तासु अभिनवगप्तानामालडारिकेष स्तम्भभतानां शिष्यः क्षेमेन्द्र इति प्रसिद्ध अभिनवगप्तानां कालो दशमं शतकमिति निर्णयः कृतोऽस्मत्पूज्यपादेः ।क्षेमेन्द्रण सुवृत्त।

अस्य कवेविषये इतिहाससमर्मज्ञाः विविधां मतिं कुर्वते । कादम्बरीकथासारस्य लेखकः कश्चनाभिनन्दः, रामचरित लेखकोऽपरोऽभिनन्द इति ।अन्ये च मन्वते द्वयोरप्येकत्वमिति । सत्यमेव सन्देहस्यायं विषयः । यतश्च परवति लेखकानां ग्रन्थेषु 'अभिनन्द', 'गोडाभिनन्दनः', 'शतानन्दः,' 'आर्याविलासः', 'विलासः', इत्येवं नाम्ना भेदस्समुपलभ्यते । तत्र रामचरितप्रणेता क इति निर्णयः दुष्कर एव । तथापि समुपलब्धप्रमाणैः किञ्चिदिव विचारयामः।

1. प्राच्यविद्यासु कृतपरिश्रमेण डॉ. थामसमहोदयेन प्रकाशिते 'कवीन्द्रवाचनसमुच्चये' महामना पण्डित हरप्रसादशास्त्रिभिर्ने–पालतस्समानीतेऽभिनन्देन विरचितत्वेन पञ्चपद्यानि निर्दिष्टानि, यानि च सम्प्रति प्रकाशिते रामचरिते नोपलभ्यन्ते।

2. श्रीधरदासेन संकलिते 'सदुक्तिकर्णामृतम्' इति ग्रन्थः महामना रामावतारशर्मणा साहित्याचायेण पाटिलपुत्र (पटना) निवासिना प्रकाशितः। श्रीधरदासः वङ्गदेशेष लक्ष्मणसेनस्य राज्ञः सभापण्डितः । स च ईशवीय द्वादशशतक कालेऽवर्ततेति निश्चितमैतिहासिकैः । 'सदुक्तिकर्णामृते'ऽभिनन्दविरचितानि बहूनि द्यानि सङ्गृहीतानि । तेषु पद्यद्वयं रामचरिते –

दिवसरागमुखसन्निधापित
स्फीत चन्द्रचषकः शतकृतोः।
क्षीबभावमिव बिभ्रती बभौ
विश्लथाच्छतिमिरां शुकोच्चया ।। इति ।।

मूर्ध्ना जाम्बवतोऽभिवाद्य चरणावापृच्छ्यसेनापती
नाश्वास्याश्रुमुखान्मुहुः प्रियसखान्प्रेष्यान्समादिश्य च ।
आरम्भं जगृहे महेन्द्रशिखरादम्भोनिधेर्लङ्घने
रंहस्वी रघुनाथ पादरजसामुच्चौः स्मरन्मारुतिः ।
इति चोपलभ्यते ।अन्यानि नोपलभ्यन्ते पद्यानि रामचरिते ।
विशिष्टसंस्कृतकाव्येषु

3. ईश्वीये त्रयोदशशतके डेक्कन (दक्षिण) राज्यशासकस्य

सिंहनस्य राज्ञः पौत्रस्य कृष्णस्य राज्ञः सभायां स्थितेन आरोहकभगदत्तेन सङ्कलितायां सूक्तिमुक्तावल्यां श्रीणि पद्यानि समपलम्यन्तेऽभिनन्देन विरचितानि । तेषु पद्मद्वयं रामचरित उपलभ्यत इति भोण्डारकर विवरणाज्जानीमः । ते च पद्ये –

पीयतेस्म कुमुदं न लोचनैः
चन्द्रिका तपति रोहितच्छदम् ।
प्रादुरासपरमुत्पिवन्नलिः सौरभं
निरवलम्बमम्बुनि ।।
एकिकेव निजवृन्दमध्यगाऽप्युच्चु –
कूजसमया सितच्छदी।
दन्तमूलमसकृच्च संशयादाममर्श –
करिणः करेणुका ।।

4. शाङ्गधरपद्धतावभिनन्दपद्यान्युद्धृतानि किन्तु तानि रामचरिते नोपलभ्यन्ते । शाङ्ग धरेण शाङ्ग धरपद्धतिः चतुर्दशशतक ईश्वीये वर्षे निमितेति इतिहासग्रन्थैायते । एभिप्रंमाणैरवगम्यते–यदभिनन्दनः त्रयोदशतकादीशवीयात् पूर्ववर्तीति । किन्तु निर्दिष्टानां ग्रन्थानां कालेऽभिनन्दः भारते सुप्रसिद्धिमवापेत्यभ्यूहितुं शक्यते । बङ्गोयैः डेक्कन प्रान्तीयैः, मध्यप्रदेशीयैश्चायमभिनन्दनः स्मृत इति हेतोः सर्वत्र भारते प्रसिद्धोऽभिनन्दनः । तत्र–तत्र निर्दिष्टानि पद्यानि कानिचन नोपलभ्यन्त इत्यत्र किमपि कारण वक्तव्यम् । रामचरितविरचयितुरभिनन्दादन्यः कश्चन तन्नामा स्यात अथवा तानि पद्यानि रामचरितमातृकायां त्रुटितानीति । तदिदं गवेषणार्हम् ।

"नाम्ना सोद्धल स्वीयोदयनसुन्दरीकथायाम्'' ईश्वीयैकादशशतके निर्मितायामभिनन्दं सगौरवभरं निदिशति । अभिनन्दं कालिदास बाणवाक्पति राजसदृर्श कथयति–

वागीश्वरं हन्त भजेऽभिनन्द –
मर्थेश्वरं वाक्पतिराजमोडे ।
रसेश्वरं स्तोमि च कालिदास
बाणन्तु सर्वेश्वरमानतोऽस्मि।।

त्रयोदशशतकस्थेन सोमेश्वरेण स्वीयकीर्ति कौमुद्यां नाम्नाभिनन्दं कीर्तयति –

न माघः श्लाध्यते कैश्चित्
नाभिनन्दोऽनन्द्यते ।
निष्कलः कालिदासोऽपि
यशोवीरस्य सन्निधौ ।। इति ।।

कतिपयानां प्रसिद्धानां कबीनां काव्यानि विलोक्य तत्रत्य सामाजिकतत्त्यरत्नानि संगृह्य तानि मालारूपेण संग्रथ्य विदुषां कण्ठेषु परिधापयितुमिच्छामि। इमाश्च रत्नमालाः प्रतिगृह्य मामनुगृह्णन्तु विद्वन्मणय इति प्रथम सम्प्रार्थ्य निबन्धगहनं प्रविविक्षामि ।

प्रथम नवमशताब्दीतो द्वादशशताब्दीपर्यन्तं ये महाकाव्यनिबन्धारः, तेषु कतिपयानां काव्यानि परिशीलयामः । काव्यानामुत्पत्तिः, विकासः, ह्रासश्चेति त्रिधा कालस्य विभागः स्वीकर्तुं शक्यते । उत्पत्तिकालस्तु वाल्मोकिरामायणादेः, विकासकालस्तु भास कालिदासीयादेः, ह्रासकालस्तु नवमशताब्दीतः । तत्र प्राक्तन विद्वत्समाजे जनश्रुतिरेषा प्राचलत, सेदानीमपि प्रचलिता वर्तते यत्काव्येषु–'अयं पञ्चकाव्याध्येता' इति । तानि च काव्यानि रघुवंशः, कुमारसम्भवम्, मेघदूतम्, माघः, किरातार्जुनीयश्चेति । तदनन्तरं काव्येषु लघुत्रयं बहत्त्रयश्चेति व्यवहारः प्रावर्तत, नैषधेन सह माघकिरातार्जुनीययोः बहत्त्रयत्वेन, कालिदास काव्यानां च लघुत्रयत्वेन गणना स्वीक्रियते स्म लोकैः । नैषधाविर्भावकालात्पूर्व शिशुपालवधकिरातार्जुनीयादनन्तरं कविसमाजे कवयः सत्यमेवात्वर्थनामानोऽभूवन् । महाकवेः कालिदासस्य, माघस्य, भारवेध काव्यान्यधीयानाः कवयः काव्यनिर्माणकर्मण्यहमहमिकया प्रावतंन्तेति नबमशताब्दी काव्यानि विलोकयतो में प्रतिभाति । फलपर्यवसायीनि भवन्ति कर्माणि । फलञ्च सह्रदयनिर्णयाधीनम् । सम्यगुक्तं केनापि कविता –

करोतु नाम नीतिज्ञो व्यवसायमितस्ततः ।
फलं पुनस्तदेवास्य यद्विधिर्मनसि स्थितम् ।।

जगत्स्रष्टुः प्रजापतेः सर्जनक्रियायां कश्चिन नास्ति समयः । तमनुसरन्नेव विधिः सृजति पदार्थान् । तेषु केचित् कांश्चनोपाददते, अपरे च तान् परित्यज्यापरान् स्वीकुर्वते । न तत्र स्रष्टुर्दोषः परिकल्पते । उपभोक्तृणां रुचिः कारणमुपादाने अनुपादाने च तेषामभिरुचिः । कूष्माण्डलतासु विधिः वहन्ति फलानि सृजति, तानि च लतासु लम्बन्ते, न तैलतास्त्रुट्यन्ति । वटवृक्षेषु च बृहत्कायेषु क्षुद्रकामानि फलानि समुत्पादयति विधिः। न तत्र सो गहणोयो भवति । एष एव तस्य समयः। समस्यास्य व्यतिक्रमे उपभोक्तार एव क्लेशमाप्नुयुः । वटवृक्षे महाकायानि फलानि, कूष्माण्डलतायाञ्चाल्प– शरीराणि तानि चेद्विधिस्सृजते, तर्हि ग्रीष्मेषु वटच्छायासु शेरतां पान्थानां मस्तकेषु बृहत्फलनिपतनेन् कीदृशी गतिस्स्यादिति विचारयन्तु । अतः प्रसमीक्ष्यैव विधिस्सृजति। काव्यसंसारे कवयोऽपि प्रजापतयः । साधूक्तम् –

'अपारे काव्यसंसारे कविरेकः प्रजापतिः'' ।

किन्तु कविप्रजापतीनां तान्येव वस्तून्यालम्बः, यानि निजप्रजापतिना सृष्टानि । निजप्रजापतिः शेले लतास्सृजति, कविप्रजापतिस्तु लतासु शैलान् सृजति । एवं तासु अभिनवगप्तानामालडारिकेष स्तम्भभतानां शिष्यः क्षेमेन्द्र इति प्रसिद्ध अभिनवगप्तानां कालो दशमं शतकमिति निर्णयः कृतोऽस्मत्पूज्यपादेः । क्षेमेन्द्रण सुवृत्त। तिलके निर्दिष्टम् –

अनुष्टुप्सततासक्ता साभिनन्दस्य नन्दिनी ।
विद्याधरस्य वदने गुलिकेव प्रभावभूः ।।

योऽभिनन्दोऽत्र निर्दिष्टस्स चेद्रामचरितनिर्माता तहि क्षेमेन्द्रात् पूर्ववर्तीति साधयितुं शक्यते । रामचरितञ्चानुष्टुप्च्छन्दस्कम् ।

''तटीमब्धेः पद्भ्यामभजत जटायोः प्रथमजः।''
''तटीं विन्ध्याद्रेः अभजत जटायोः प्रथमजः।।''

इति च उणादिवृत्ति ग्रन्थे उज्ज्वलदत्तविरचिते किञ्चिद्भेदेनोलपभ्यते । एवं तत्रैव –

''आवर्तमाना ददृशे दिवापि रजनाविव।''
''समादधे काञ्चिमकुञ्चयात्कचान।।''

इति चोणादिवृत्तावुपलभ्यते। एवं तिरूवनन्दपूर संस्कृतग्रन्थ मालातः प्रकाशिते सर्वानन्दस्य वन्द्यघंटीयेऽभिनन्दस्य नाम वारद्वयं गृहोतं विलोकयामः । सर्वानन्दस्य समयो द्वादशशतान्द्याः मध्यकाल इत्यैतिहासिकैनिर्णीतः। अन्येष्वपि परवतिग्रन्थेषु अभिनन्दस्योल्लेखो दृश्यते । एभित्रंमाणैरिद सिद्धं भवति यदभिनन्दस्सर्वत्र भारते सुप्रसिद्ध आसीत् । अपि च दशमशतांब्दीतः परवर्ती नामीदिति । क्षेमेन्द्रेण निदिष्टोऽभिनन्दः ''कादम्बरीकथासार'' प्रणेताऽपि भवितुमर्हति, रामचरित प्रणेताऽपि । उभयत्राऽपि अनुष्टुपच्छन्दसो माधुर्यमनुभूयते : किन्तु कादम्बरी कथासारप्रणेता स्व पितरं जयन्तभट्ट इति, रामचरित प्रणेता च स्व पितर 'शतानन्द' इति निर्दिशतः। एकस्य पितुर्नामद्वयं न भवितुमर्हति । अतः केचन शतानन्दपदं ग्रामपरतया नीत्वा ग्रन्थयोईयोरेक एव निर्मातेत्यभिप्रयन्ति। तदिदं युक्तियुक्तं न मै प्रतिभाति । तत्र चेमानि कारणानि भवन्ति –

1. ''शतानन्द'' शब्दो ग्रामवाचीति नेंद हृदयड.गमम्। मानवस्यनामत्वेन बहुश उपलम्भात्।

2. रामचरित प्रणेता सप्तमसर्गे स्पष्टं निर्दिशति पितुर्नाम ''शतानन्द'' इति। कादम्बरीकथासारकारस्तु पितरं ''जयन्तभट्ट'' इति स्फुटं ब्रवीति ।

3. वङ्गदेशेषु नाम्ना शतानन्द इति कश्चन महाकविरासीत् । तत्प्रणोतानि पद्यान्यनेकानि ''साधूक्तिकर्णामृते'' ''कवीन्द्रवाचनसमुच्चये''–च समुद्धृतानीति के. एस. रामस्वामिशास्त्रिणां भूमिकातोऽवगम्यते'। अभिनन्दश्च बङ्गदेशीयः पण्डितः, अतः कविवरेण्यस्य शतानन्दस्यैव सुतोऽभिनन्द इति प्रतीयते ।

कालनिष्कर्षः –

इदं तावनिश्चितम् यत् प्राक्प्रदर्शितप्रमाणः क्षेमेन्द्रादयं पूर्ववर्तीति । क्षेमेन्द्रश्चाभिनव गुप्त पादानामन्तेवासोति प्रसिद्धम् । अभिनवगुप्तपादाश्च दशमशतकस्यान्त एकादशशतकस्यादाववर्तन्त । एतेन नवमशताब्द्यामभिनन्दोऽवर्तत । तत्रापि वंगदेशाधिपस्य पालवंशजस्य युवराजहारवर्षस्य सभापण्डितोऽभिनन्द आसीत् । राज्ञः शासनकालो दशमशतकात्पूर्वमिति ज्ञायते। तत्रापि 800 वर्षतः 900 वर्षाभ्यन्तरे राज्ञः कालो निर्णीत इतिहासविद्भिः । अतोऽभिनन्दो नवमशतान्द्यामवर्तत इति।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. विविलयोथसे इण्डिया – न्यू सीरीज सं. 1309।
2. मातृकेयं ईषवीय द्वादश शतककालिकी।
3. सूक्तिकर्णामृतम् द्वि. 748 : रामचन्द्र– 2/84।
4. साधूक्ति प्र. पृष्ठ– 100 : रामचरित 15/67।
5. भाण्डाकर शिव पृष्ठ–7।
6. सूक्तिमुक्ता, पृष्ठ– 141
7. उदयसुन्दरीकथा – गायकवाढग्रन्थमालायां प्रकाशिता नं. 18।
8. उदयन – पृष्ठ– 15/14
9. कीर्तिकौमुद्या उपोदृघाते नवमं पृष्ठं विलोकनीयम् ।
10. कीतिकी ' पृष्ठ–3।

◈◈

Received: 10 Jun., 2021; **Accepted:** 23 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

भारतीय लोकतंत्र में बालश्रम की समस्या पर संसद की भूमिका

– डॉ. रमेश चन्द्र ओझा
एसोसिएट प्रोफेसर –
राजनीति विज्ञान विभाग,
कन्हैयालाल बसन्तलाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मीरजापुर–231001 (उत्तर प्रदेश)

ई–मेल :
rameshchandraojha123@gmail.com

भारतीय लोकतन्त्र ऋग्वैदिक काल से प्रशासन तन्त्र के अनुवांसिक राजनैतिक पदों को छोडकर जनता द्वारा राज्य स्तापित करनें की एक गणतन्त्रात्मक पद्धति है। लोकतन्त्रात्मक शब्द का अभिप्राय सरकार की शक्ति स्रोत जनता में निहित होना है।

लोकतन्त्रात्मक सरकार जनता की जनता के लियें जनता द्वारा स्थापित होती है। भारतीय लोकतन्त्र का दृष्टिकोण राजनैतिक एंव समाजिक दोनों है। 22 जनवरी, 1947 को संविधान सभा ने जिस उद्देश्य प्रस्ताव को अंगीकार किया था, इसकी अन्तरआत्मा न्याता, समता, अधिकार और बन्धुत्व के आसव से सिंचित है। इतना ही नही समाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक न्याय वर्तमान लोकतन्त्रात्मक संविधान की न्यामक महत्वाकांक्षा है।

भारतीय लोकतन्त्र राज्य शक्ति पर किसी एक वर्ग विशेष के एकाधिकार (वंशानुगत लोकतन्त्र) से परे हटकर शासन का संचालन बहुमत के सिद्धान्त के आधार पर जनता के समर्थन पर लोकतंत्रीय गणतन्त्र पर विश्वास करता है।

भारतीय लोकतंत्र विचार अभिव्यक्ति विश्वास, धर्म, उपासना की स्वतंत्रता के अधिकार की संकल्पना प्रदान करता है। भारतीय लोकतंत्र में वर्तमान परिवेश में विचार और अभिव्यक्ति पर सरकारी तंत्र का इस सकारात्मक अर्थ भोज में स्वतंत्रा का अर्थ किसी व्यक्ति की आपनी इच्छा शक्ति के अनुसार कार्य करने की स्वतंत्रता है।

मतदान में भाग लेना प्रतिनिधियों को चुनना, निर्वाचन में खड़ा होना, सार्वजानिक पद पर नियुक्ति अधिकार, सरकारी नीतियों की आलोचना करना आदि राजनीति स्वतंत्रतायें हैं।

परन्तु आज भी दबे कुचले व्यक्तियों को ये स्वतंत्रायें प्राप्त नहीं हैं। उन्हें उनके व्यक्तित्व का विकास नहीं होने दिया जाता है। उनके अपने अधिकारों का प्रयोग नहीं करने दिया जाता है। जैसे– चुनाव के दौरान बाहुबली प्रत्याशी अपनी ताकत/तानाशाही के आधार पर अपने चुनाव चिन्ह की बटन दबवा लेता है।

समानता से अभिप्राय है कि अपने व्यक्तित्व के समुचित विकास के लिये प्रत्येक मनुष्य को समान अवसर उपलब्ध होने चाहिये।

भारतीय संविधान के नजर में सभी नागरिक समान होंगे और उन्हें देश की विधियों का समान रूप में संरक्षण प्राप्त होगा। सार्वजानिक स्थानों में प्रवेश एवं लोकनियोजन के विषय में धर्म, मूलवंश, जाति, स्त्री–पुरुष या जन्म स्थान के आधार पर एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के बीच कोई विभेद नहीं होगा। किसी भी देश का संविधान उस देश की लोगों की आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति होता है। भारतीय गणतंत्र की सविंधान की प्रस्तावना एक ऐसे समाज के निर्माण के प्रति संविधान की प्रतिबद्धता व्यक्त करती है। जिसमें सभी को सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक व राजनीतिक न्याय व स्वतंत्रा प्राप्त हो किसी का भी शोषण न हो और

सद्भाव व भाईचारे पर आधारित सामाजिक व राजनीतिक व्यवस्था हो, इसीलिये संविधान के भाग तीन में मौलिक अधिकारों एवं भागचार में नीति निर्देशक तत्वों की व्यवस्था की गई है।

किसी भी राष्ट्र की उन्नति उस राष्ट्र में रहने वाले बालकों में अन्तर्निहित है। बालक राष्ट्र के स्वरूप ही नहीं बल्कि उस राष्ट्र की अमूल्य सम्पदा है, ताकत है, जिस पर राष्ट्र की आधारशिला सुरक्षित रहती है। किसी भी देश का बाल समाज जितना ही अनुसाशित, क्रियाशील, स्वस्थ, शिक्षित और प्रशिक्षणयुक्त होगा, उस देश का भविष्य उन्नतशील होगा। यदि देश का ये समाज इन गुणों से विमुक्त है तो आने वाला कल उस राष्ट्र को पतनोन्मुख करने वाला होगा। आज के बालक कल के नागरिक हैं। जिनके हाथ में राष्ट्र रूपी नौका की पतवार है। यदि बालको छोटी उम्र में ही काम में लगाया जाता है तो राष्ट की बहुत बड़ी हानि होती है। बाल्यावस्था में बालकों का मस्तिष्क बड़ा ही कोमल होता है। उसे जिधर चाहे उधर मोड़ा जा सकता है। जिस प्रकार छोटी उम्र में ही बालकों को श्रम पर लगाने से उनका व्यक्तित्व नष्ट हो जाता है और उनका सही ढंग से निर्देशन एंव शिक्षण की व्यवस्था न होने के कारण वे एक अयोग्य बालक सिद्ध हो जाते हैं। एवं उनसे देश को पूरा लाभ नहीं प्राप्त हो पाता है। देश भर में बच्चों का शोषण आज भी अबाध गति से हो रहा है। वास्तव में बाल मजदूरों की समस्या आर्थिक एवं समाजिक दोनों प्रकार की समस्याओं से घिरी है। इस समस्या का सीधा दुष्परिणाम यह होता है कि उन बच्चों का शारीरिक, मानसिक एवं नैतिक विकास रुक जाता है, जिससे उनके स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है और उनका भविष्य एक निश्चित दायरे में सिमट जाता है। समाज की आर्थिक एवं सामाजिक परिस्थितियाँ बच्चों को मजदूरी करने के लिये बाध्य करती हैं। शिक्षा, अज्ञानता, बेरोजगारी, रहन–सहन तथा सामाजिक जीवन का निम्न स्तर ये कुछ ऐसे कारण है, जो बाल श्रमिकों को जन्म देते हैं।

संयुक्त राष्ट्र बालश्रम आयोग के अध्यक्ष होमर फाक्स ने बालश्रम को परिभाषित करते हुये कहा है– बच्चों द्वारा किया जाने वाला कोई भी कार्य जिससे उनके पूर्व शारीरिक विकास और न्यूनतम वांछित स्तर की शिक्षा के अवसरों या उनके लिये आवश्यक मनोरंजन में बाधा उत्पन्न होती है।

भारतीय संविधान में 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों के लिये अभिवार्य प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने हेतु राज्य को निर्देश दिये गये हैं तथा बाल–श्रम पर प्रतिबन्ध लगाया गया है। फिर भी व्यवहार में ये अभी संभव नहीं हो पाये हैं। आज भारत में बच्चों घरों, चाय की दुकानों, छोटे–छोटे होटलों, मोटर–स्कूटर की दुकानों, जिल्दसाजी के कामों, पशु–पालन, खेती के कामों, छोटे–मोटे कारखानों तथा अन्य व्यवसायों में लगे हुये हैं। देश का यह दुर्भाग्य है कि तमाम सरकारी गैर सरकारी प्रयास के बाद भी बाल श्रमिकों की संख्या कम होने के बजाय निरन्तर बढ़ रही है। भारत में बाल–श्रम पर समय–समय पर अधिनियमों के तहत प्रतिबन्ध लगाये गये हैं जिसमें विगत 12 अक्टूबर, 2006 को भारत सरकार द्वारा बाल–श्रम पर पहली बार अत्यन्त कठोर प्रतिबन्ध लगाया गया है। इसके तहत 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों को घरों, ढाबों, रेस्तरां, होटल, रिसोर्ट या सेवा क्षेत्र के दायरे में आने वाले प्रतिष्ठानों में काम करने पर प्रतिबन्ध लगाया गया है जिसका उल्लंघन करने पर 2 वर्ष की सश्रम कारावास एवं 20,000 रुपये जुर्माना की व्यवस्था की गयी है। सम्पूर्ण देश में बाल–श्रम उन्मूलन हेतु केन्द्र सरकार द्वारा 250 से भी ज्यादा परियोजनायें चला रही है। जिसमें अकेले उत्तर प्रदेश के सर्वाधिक 42 जिलों में इसे क्रियान्वयन किया जा रहा है जिसके लिये सरकार ने नौंवी योजना में 285 करोड़ रुपये का बजट आवंटन किया था, जिसे दसवीं योजना में बढ़ाकर 620 करोड़ रुपया कर दिया गया। इसके बावजूद आज स्थिति में ज्यादा फर्क नहीं पड़ पाया है। देश की विडम्बना है कि आज भी अनपढ़ और गरीब लोग अपने बच्चों से पेट भराने के लिये काम करवाते हैं।

बल–श्रम शब्द–बन्ध की व्याख्या सामान्यतः दो प्रकार से की जा सकती है– पहली एक आर्थिक व्यवसाय के रूप में और दूसरे सामाजिक अभिशाप के रूप में। प्रथम संदर्भ में बाल श्रमिक आर्थिक क्षेत्र में लाभप्रद रोजगार को दर्शाता है। इससे परिवार की आय बढ़ती है। दूसरे संदर्भ में बाल श्रमिक उन बुराइयों और शोषणों की अभिव्यक्ति है जो बालकों को रोजगार में लगाने के कारण पनपते हैं। आधुनिक समय में बाल श्रम शब्द बन्ध सामाजिक बुराइयों को ही बताता है।

वस्तुतः बाल–श्रम का उपयोग सामान्यतः बुरा नहीं है। परन्तु जिन परिस्थितियों एवं जिन शर्तों पर इन्हें काम पर लगाया जाता है। वह बुरा है। बचपन में काम करना सामाजिक अच्छाई है एवं राष्ट्रीय हित में भी है, परन्तु साथ–साथ बालश्रम एक सामाजिक बुराई एवं राष्ट्रीय बर्बादी भी है। जब तक किसी वस्तु का न्यायोचित उपयोग होता है तक तक वह सामाजिक अच्छाई

कहलाती है। किन्तु जब उसका दुरुपयोग होने लगता है तब वह सामाजिक बुराई का कारण बन जाता है। वैसे तो बाल–श्रम के उपयोग से रोजगार बढ़ता हैं एवं रोजगार बढ़ने से राष्ट्रीय आय में वृद्धि होती है। किन्तु जब व्यक्तिगत लाभ की दृष्टि से नन्हें–मुन्नों का शोषण होने लगता है। तो इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता। जब अल्पायु से ही बच्चों को शोषण प्रारम्भ होता है तो उनके जीवन की समस्त महत्वाकांक्षाओं का गला घुट जाता है। ऐसी दशा में हम उनसे औद्योगिक समृद्धि की आशा नहीं कर सकते। बच्चों के श्रम का उनके स्वास्थ्य से प्रत्यक्ष सम्बन्ध रहता है। आज जिस प्रकार का काम बच्चों से उद्योगों में लिया जाता है उसका उनके स्वास्थ्य पर कुप्रभाव पड़ता है। बच्चों के इस प्रकार काम करने से परिवार के सामान्य जीवन में बाधा पहुँचती है तथा सामाजिक नियंत्रण टूटने लगता है जो वर्तमान सामाजिक व्यवस्था को बनाये रखने के लिये बहुत आवश्यक है। बच्चों को उचित शिक्षा के अभाव में उनका नैतिक एवं बौद्धिक विकास अवरुद्ध हो जाता है जिसके परिणामस्वरूप ये अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों के निर्वहन में प्रायः समर्थ नहीं होते हैं। चूँकि बालक राष्ट्र के भावी आधार स्तम्भ हैं जिसे बचपन में ऐसी सार्थक शिक्षा प्रदान करनी चाहिये ताकि भविष्य में वे अपने अधिकार एवं कर्तव्यों को भलीभांति निभा सके। बाल्यावस्था में इनका जो स्वास्थ्य बन जाता है वही भविष्य में उनके अपने काम आत्मा है। इस प्रकार इन्हें हम प्रारम्भिक अवस्था में ही स्कूल में प्रवेश कराने की बजाय कारखानों के प्रदूशित वातावरण के अर्न्तगत जोखिम भरे कार्यों में डालकर उनकी क्षमता से परे काम लिया जायेगा तो इससे न केवल राष्ट्र की समृद्धि खतरे में पड़ेगी बल्कि समाज का उत्थान भी खतरे में पड़ जायेगा। प्रायः जिन कार्यों को एक वयस्क श्रमिक जिनती कुशलतापूर्वक सम्पन्न कर सकते है, वह यदि अल्प वयस्क बाल श्रमिक को सौंपा जाय तो निश्चत ही उत्पादन प्रभावित होग। चूँकि अल्पायु के बालकों में वयस्कों के अपेक्षा ज्ञान एवं अनुभव दोनो का अभाव होता है।

वर्ष 2015 में दुनियाँ की आबादी 1170.7 करोड़ का अनुमान था, तब ये हर साल 78 करोड़ की दर से बड़ रही थी। बीसवीं सदी के अन्तिम दशक में भारत दुनियाँ की आबादी में करीब 1.8 करोड़ का हर साल योगदान कर रहा था। 12 अक्टूबर, 1999 को दुनियाँ की आबादी 6 अरब से अधिक हो गई और इसमें से आधे लोग (3 अरब) 25 वर्ष से कम आयु वाले थे। 6 अरब में से 1 अरब आबादी 15 से 24 साल के बीच वाले युवाओं की थी भारत की जनसंख्या 2001 में 1 अरब का निशान पार कर चुकी थी। भारत में बच्चों की संख्या करीब 30 करोड़ है जो सम्पूर्ण विश्व के अपेक्षा सर्वाधिक है। असंगठित क्षेंत्रों में बाल श्रमिक जानवर से भी बदतर जीवन जीने को बाध्य हैं जो सिनेमा, होटल, ढाबों, मदिरास्थल, जुआघर आदि जैसे व्यवसायों में कार्यरत हैं। जिन्हें नगरों के दलाल इन बच्चों को दूरदराज गाँवों एवं कस्बों से इनके अभिभावकों को एडवांस के रूप में थोड़ा पैसा एवं नौकरी का प्रलोभन देकर इन्हे शहरों में ले आते हैं। तत्पश्चात नौकरी के नाम पर उनसे 12 से 14 घण्टे से तक अबाध गति से काम कराते हैं और पारिश्रमिक के रूप में 150 से 200 रू. प्रतिमाह, फटे, पुराने कपड़े एवं खाने के इस प्रकार बाल मजदूरी हमारे समाज व देश पर लगा एक काला धब्बा है। यह ऐसा हानिकारक कीड़ा है। जो देश व समाज के भीतर ही भीतर खोखला कर रहा है। ऐसी स्थिति में हमारा ये कर्त्तव्य है। कि हम अपने समाज, देश व सारे विश्व को बाल मजदूरी के खतरे से बचायें।

बाल मजदूरी को रोकने में संसद की भूमिका –

बाल मजदूरी जैसी गंभीर समस्या को रोकने के लिये संसद द्वारा अनेक नियम, प्रतिबन्ध व दण्ड आदि की व्यवस्था की गई है। वर्ष 1986 के एक्ट के अनुसार 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों से श्रम कराने पर दण्ड की व्यवस्था की गई है जिसमें दोषी व्यक्ति पकडे जाने पर आठ वर्ष की सजा तथा 5000 रूपये जुर्माना रखा गया है। इसके आलवा बाल मजदूरी को रोकने के लिये निम्नलिखित उपाय किए जाने चाहिये–

☛ गरीबी में जीवन यापन करने वाले परिवारों के बच्चों के पालन पोषण व शिक्षा के लिये सरकारी तथा नीतिस्थल से प्रयास किये जाने चाहिये। उन्हें मुफ्त भोजन, पहनने के लिये वस्त्र तथा मुफ्त में प्रारम्भिक शिक्षा तथा छात्रवृत्ति आदि देने के व्यवस्था की जानी चाहिये।

☛ ऐसे व्यवसायियों व अन्य लोगों को दण्ड देना चाहिये जो बच्चों से मजदूरी कराते हैं तथा बाल मजदूरी को प्रोत्साहन देकर बच्चों का शोषण करते हैं।

☛ समय–समय पर ऐसी दुकानों, कारखानों व संस्थानों पर छापे डाले जाएँ जहाँ बच्चों से मजदूर के रूप में कार्य लिया जाता है।

☛ बाल मजदूरी के लिये जिम्मेदार लोगों को कड़े कानून द्वारा सजा व दण्ड देने से लोगो में भय बढ़ेगा जिससे बाल मजदूरी पर काफी हद तक नियत्रंण किया

जा सकता है।

☛ जन–जन तक विशेषतः ग्रामीण व पिछड़े क्षेत्रों में बाल मजदूरी के विरुद्ध प्रचार व लोगों में बाल मजदूरी से होने वाले दुष्परिणामों के प्रति जागरुकता पैदा करके भी इस पर काफी हद तक रोक लगाई जा सकती है।

☛ बाल मजदूरी के आड़ में बच्चों को खरीदा व बेचा भी जाने लगा है। मासूम बच्चों को खाड़ी देशों में मनोरंजन के लिये ऊँट दौड़ जैसे खतरनाक व वीभत्स खेलों में लगाया जाता है जिससे उनकी दर्दनाक मौत तक हो जाती है। होटलों, दुकानों व घरों में कार्य करनें वाले बच्चों को धोखे से उनके शारीरिक अंग निकाल कर मार दिया जाता है। जैसे– अपराध जो बाल मजदूरी की आड़ में किये जाते हैं उन्हें रोकने के लिये सभी देशों आपसी सहयोग से कड़े कानून बनाने चाहिये। यदि परिवारिक अथवा अन्य किसी कारण से बच्चों को काम करना पडे तो बच्चों को निम्नलिखित शर्तों में काम करने के लिये कानून इजाजत देता है–

सरकार के स्तर पर निम्नाकिंत प्रयास होने चाहिये–

☛ सरकार को समाज में बाल श्रम के प्रति जगरुकता उत्पन्न करने के लिये सभी प्रकार के संचार माध्यमों को प्रयोग में लाना चाहिये।

☛ बच्चों से छह घण्टे से अधिक समय तक काम नहीं करवाया जा सकता है।

☛ एक साथ तीन घण्टे से अधिक उनसे काम नहीं लिया जा सकता है।

☛ रात्रि के सात बजे से लेकर प्रातः आठ बजे के बीच में उनसे कोई भी काम नहीं लिया जा सकता है।

☛ सप्ताह में उन्हें कम से कम एक दिन का अवकाश दिया जाना चाहियें सरकार के स्तर पर निम्नाकिंत प्रयास होने चाहिये–

☛ सरकार को समाज में बाल श्रम प्रति जागरुकता उत्पन्न के लिये सभी प्रकार के संचार माध्यमों को प्रयोग में लाना चाहिये।

☛ बच्चों के अभिभावकों को शिक्षा की आवश्यकता अनुभव कराने हेतु साक्षरता अभियान एवं प्रौढ़ शिक्षा के कार्यक्रमों को कठोरता से क्रियावन्यन किया जाना चाहिये।

☛ स्कूल जाने वाले बच्चे के लिये चलाई जा रही मध्यान्ह भोजन योजना का ईमानदारी से क्रियान्वयन कराया जाना चाहिये। इनके अतिरिक्त बाल पोषाहार योजना एवं आँगनाबाड़ी के अर्न्तगत आने वाली विभिन्न आहार योजनाओं को अनिवार्यतापूर्वक क्रियान्वित करना चाहिये। इससे गरीब परिवारों की आजीविका की समस्या हल हो सकेगी।

☛ बाल श्रमिक जिन उद्योगों में कार्यरत हैं उनमें इन बच्चों की जगह उनके परिवार की वयस्क व्यक्तियों को रोजगार उपलब्ध कराया जाये, परन्तु इसके साथ बच्चों के अभिभावकों को निर्देशित किया जाये कि वह बच्चों को विद्यालय में प्रवेश अवश्य दिलायें।

☛ जिन उद्योगों में बाल श्रमिक कार्यरत हों उनसे इस उद्योग से सम्बन्धित प्रशिक्षण विद्यालय खोलने को कहा जाये। इन्हीं विद्यालयों में श्रमिकों के पठन–पाठन की व्यवस्था करायी जानी चाहिये।

☛ बंधुआ मजदूरी अथा दुअरहा के रूप में बच्चों को रखने वाले व्यक्तियों से निर्धारित मुआवजा लिया जाये एवं इसका प्रयोग पुनर्वास गृहों के निर्माण में किया जाये।

☛ अधिक से अधिक अशासकीय संगठनों को बाल श्रम दूर करने के प्रयास में सम्मिलित होने हेतु आकर्षित किया जाये।

उत्तर प्रदेश सरकार के श्रम एवं सेवा योजना राज्यमंत्री के अनुसार– सम्पूर्ण प्रदेश में एक अभियान छेड़ा गया था जिसमें बाल– श्रमिकों खतरनाक प्रतिष्ठानों व गैर खरतनाक प्रतिष्ठानों को चिन्हित किया गया है।'' इन प्रतिष्ठानों के मालिकों से 20 हजार रूपये प्रति बालक की दर से जिला स्तर पर स्थापित बाल कल्याण कोष में जमा किया जा रहा है। जिसे बच्चों के भविष्य को सजाने–संवारने में खर्च किया जायेगा। उनके अनुसार प्रदेश में ऐसे बच्चों की शिक्षा के लिये 110 विद्यालय संचालित किये गये हैं। विभिन्न क्षेत्राों जैसे– फिरोजाबाद, सोनभद्र, वाराणसी, भदोही, मुरादाबाद तथा अलीगढ़ को विशेष खतरनाक प्रक्षेत्र उद्घोषित किया गया तथा यहाँ बच्चों के लिये 160 विशेष प्रकार के विद्यालय खोलने की योजना है। अन्य प्रयास में 237 बंधुआ मजदूरों को चिन्हित किया गया तथा उन्हें तुरन्त रोजगार उपलब्ध करा दिये गये।''

दैनिक हिन्दुस्तान के अनुसार– राज्य के पर्यावरण राज्यमंत्री द्वारा प्रशासन के अधिकारियों के साथ बहराइच के भिनगा रोड पर स्थित स्ट्रील फैक्ट्री में मारे गये एक छापे में भारी संख्या में छोटे–छोटे बच्चे काम करते पाये गये। फैक्ट्री में धुआँ निकासी के लिये चिमनी की व्यवस्था तक नहीं थी, अतः मजदूरों के स्वास्थ्य पर

प्रतिकूल असर पड़ रहा था। उसी प्रकार भदोही, जौनपुर, सोनभद्र सहित कालीन वेस्ट में बाल श्रम एवं बंधुआ मजदूर मुक्ति हेतु भी सरकारी प्रयास किये गये।

भदोही के जिलाधिकारी की सूचना के अनुसार एक माह में 70 प्रतिशत गाँवों की पड़ताल कर ली गई है। और दरभंगा, कटियार, मधुबनी से लाये गये एक सौ छह बच्चे मुक्त कराये जा चुके हैं। 62 प्रकरणों में जुर्माने किये गये तथा कुल 1032 प्रकरण लम्बित हैं तथा मिर्जापुर के जिलाधिकारी के अनुसार– 31 बाल श्रमिकों को मुक्त कराया गया एवं प्रक्रिया अभी भी जारी है। इन सभी बाल श्रमिकों की दशा सुधारने हेतु सरकार यह भी प्रयास कर रही है। कि कारखानदारों को इन बच्चों की पढ़ाई की व्यवस्था भी करनी होगी। पढाने वाले शिक्षक का वेतन भी कारखानादार को वहन करना होगा। (हिन्दुस्तान 1997)।

सरकारी प्रयासों को देखते हुये कहा जा सकता है कि उत्तर प्रदेश सरकार बाल श्रमिकों की समस्या के समाधान हेतु निश्चित ही क्रियाशील है।

सरकार के अतिरिक्त अनेक स्वयंसेवी संस्थाएं भी बाल श्रम जैसे सामाजिक अभिशाप से मुक्ति हेतु गाँव–गाँव में सघन अभियान चला रही है। विशेषतः भदोही क्षेत्र में विशेष प्रयास द्वारा इन्होंने बाल मजदूरों को मुक्त कराया है। उसी प्रकार बाल श्रम पर प्रतिबन्ध लगाने के कार्य में 'बटरफ्लाई' नामक संस्था भी कार्यरत है। किन्तु इस कार्य में लगी गैर सरकारी संस्थाओं की संख्या कम है। इसके लिये समाज के प्रत्येंक धर्म, वर्ग, लिंग एवं जाति के लोगों का सक्रिय हस्तक्षेप परम आवश्यक है, तभी बाल मजदूरों की स्थिति एवं शैक्षिक प्रसार में आने वाली बाधाओं को दूर किया जा सकेगा।

सरकारी एवं गैंर सरकारी संस्थाएं निश्चित ही बाल मजदूरी दूर करने हेतु प्रयासरत हैं परन्तु बाल श्रमिकों की स्थिति सुधारने एवं उनके शैक्षिक प्रसार में निम्नलिखित बाधाएं परिलक्षित होती हैं–

☛ मुफ्त कराये गये बच्चों को रखने की समस्या सामने आती है। अतः पुनर्वास की व्यवस्था होनी चाहिये।

☛ बच्चों के निर्यातकर्ता (जिनके माध्यम से उद्योग संचालित होता है।) को पकड़ने में लूम के मालिक भी सहयोग नहीं करते।

☛ सिंह के मत के अनुसार उद्योग धंधों से हटाये जाने के कारण बाल श्रमिकों के परिवार की आय प्रभावित हो जाती है एवं उन्हे भुखमरी का सामना करना पड़ता है। इससे बच्चो पर मनोवैज्ञानिक दबाव पड़ता है। अतः वह किसी भी शैक्षिक गतिविधि में भाग लेने से कतराते हैं।

☛ बाल श्रमिकों के अभिभावकों की प्राथमिकता जीविकोपार्जन है जिसकी पूर्ति वह बच्चों को स्कूल भेजकर नहीं कर पाते हैं। अतः छोटे बच्चों को भी वह जीविका अर्जित करने वाले एक सक्रिय सदस्य के रूप में देखते हैं।

☛ अधिकांश बाल श्रमिक ऐसे घरों के बच्चे हैं जिसमें कोंई भी व्यक्ति पढ़ा–लिखा नहीं है। अतः शिक्षा प्राप्ति हेतु उन्हें कोई उचित मार्गदर्शन प्राप्त नहीं हो पाता है।

उत्तर प्रदेश में भारत के अन्य राज्यों की अपेक्षा अधिक बाल श्रमिक हैं परन्तु इस स्थिति से हताश न होकर राज्य सरकार इसके समाधान हेतु सक्रिय है। आवश्यकता है कि राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य एवं स्थानीय मानकों को ध्यान में रखकर सभी क्षेत्रों में कार्यरत बाल श्रमिकों की संख्या का पता लगाकर उनकी आजीविका एवं शिक्षा की समुचित व्यवस्था की जाये, इसके लिये राज्य सरकार एवं केन्द्र सरकार द्वारा संचालित किये जा रहे पोषाहार एवं शिक्षा प्रसार के विभिन्न कार्यक्रमों का ईमानदारीपूर्वक एवं कठोरता से पालन कराया जाये। दोषियों को तत्काल दण्डित करने का प्रावधान कर उसे सख्ती से लागू किया जाये परन्तु इसके लिये राजनीतिक इच्छाशक्ति, अशासकीय संगठनों की सक्रिय भागीदारी एवं समाज के प्रत्येक शिक्षित नागरिक की सहभागिता की परम आवश्कता है तभी संविधान में निहित अनुच्छेद 23, 24 एवं अनुच्छेद 45 में सौपे गये दायित्वों का निर्वाह हो पायेगा। भारत में आज श्रमिकों की संख्या का अनुमान लगाने के लिये अलग–अलग संगठनों द्वारा समय–समय पर प्रयास किया गया है। ऑपरेशन रिसर्च ग्रुप बड़ौदा के 2012–14 के मूल्याकंन के अनुसार 5 करोड़ 44 लाख बाल श्रमिक भारत में थे।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. भारतीय संविधान की प्रस्तावना।
2. कुलश्रेष्ठ जे. सी ''चाइल्ड लेवर इन इण्डिया, आशीष पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली 1978।
3. श्रम जाँच समिति, मुख्य रिपोर्ट 1946।
4. कुमार विनोद : अनुसूचित जाति के बाल श्रमिक, कला प्रकाशन वाराणसी।
5. शेण्डे हरिदास राम जी : बाल श्रम, अपराध एवं समाधान।
6. दैनिक हिन्दुस्तान, मई 1997।
7. चाइल्ड लेबर : इंडियन एक्सप्रेस, न्यू दिल्ली मई 12, 1988।

◈◈

RNI : UPMUL00620/24/1/2014-TC ISSN : 2394-4366

Received: 10 Jun., 2021; **Accepted:** 23 Jun.-2021, **Published:** July - September, 2021 Issue

Sustainable Agricultural Development in India: Strategies for Agricultural Growth and Challenges Ahead

- Dr. Sangeeta Sitani
Assistant Professor & Head,
Department of Economics,
Mahila Mahavidyalaya (P.G.) College,
Kidwai Nagar, Kanpur - 208011 (U.P.)

E-mail:
sangeetasitani4168@gmail.com

Abstract

The Indian Economy has survived from the global slowdown of 2008 and has witnessed a resilient growth rate in GDP of around 8 per cent during the last three years. However an average rate of 3.3 per cent growth during the 11th five Year Plan (2007 – 12) in the agriculture and allied sector indicates that Indian agriculture has been entangled in a low growth equilibrium trap and may not achieve the target of 4 per cent annual growth rate during the 11th Plan period. Further, declaration of agriculture and allied sector growth by 4.5 per cent from 7 per cent during 2010-11 to an estimated growth rate of 2.5 per cent during 2011-12.Indicates the extant vulnerability of the country's agriculture.

Agriculture has been a way of life and continues to be the single most important livelihood of the masses. Agricultural policy focus in India across decades has been on self-sufficiencyand self reliance in foodgrains production. Considerable progress has been made on this front. Food grains production rose from 52 million tones in 1951-52 to 244.78 million tones in 2010-11. The share of agriculture in real GDP has fallen given its lower growth rate relative to Industry and services.

However, what is of concern is that growth in the agricultural sector has fallen short of the plan targets. During the period 1960-61 to 2010-11, food grains production grew at a compounded annual growth rate (CAGR) of around 2 per cent. In fact the ninth and tenth Five year Plans witnessed agricultural sectoral growth rate of 2.44 per cent and 2.30 per cent respectively compared to 4.72 per cent during Eighth Five Year Plan. During the current five Year Plan, agriculture growth is estimated at 3.28 per cent against a target of 4 per cent.

The approach paper to the Twelth Five Year Plan emphasizes the need to redouble our efforts to ensure that 4.0 per cent average growth is achieved during the plan if not more.

Without incremental productivity gains and technology

diffusion across regions, achieving this higher growth may not be feasible and has implications for the macro economic stability given the rising demand of the 1.21 billion people for food. Achieving minimum agricultural growth is a prerequisite for inclusive growth and eradication of poverty development of the rural economy and enhancing farm incomes.

This paper elaborates Sustainable Agricultural Development, what are the strategies formed to increase agricultural development and what are the challenges before sustainable agricultural development.

Introduction

Agricultural plays an essential role in the process of Economic development of less developed countries like India. Besides providing food to nations agriculture releases labour, provides saving, contributes to market of industrial goods and earns foreign exchange. Agricultural development is an integral part of overall economic development. In India agriculture was the main source of national income and occupation at the time of independence. Agriculture and allied activities contributed nearly 50 per cent to India's national income.

Sustainable development has given rise to various visions of the world of the future, of possible trade-offs and of externalities. Through volunteerism and involvement, people are becoming more active in creating healthy, sustainable communities at the neighbourhood municipal and regional levels within both geographical communities and communities of interest. This greater activity in communities and in the social fabric leads to an interest in examining the social impact of development. Sustainable agriculture is defined as agriculture that balances the need for essential agricultural commodities such as food, fible etc. with the necessity of protecting the physical environment and public health, the foundation of agriculture.

Sustainable agricultural development is one of the prime objective in all countries in the world whether developed or developing. The broad objective of sustainable agriculture is to period. Sustainable increase in crop production could be achieved by adopting a variety of agricultural technologies by improving crop management technology through the use of high yielding inputs responsive to soil, climatic and biotic stresses across crop varieties.

Present Scenario of Indian Agriculture

The total foodgrains production has increased from 50.8 million tones in 1950 – 51 to 230.67 million tones in 2007-08 and further increased to 234.47 million tones in 2008-09. Recently on April 6, 2011, Ministry of Agriculture released the third advance estimates of food grains for the year 2010-11, which stands at highest level of 8.14% over the production level of 2009-10. **(See Table-1 on next page)**

Table – 1 shows the production of food grains in India. Production of pulses has set a record growth this year. Pulses production is estimated to be 17.29 million tones which is much higher as compared to last year production of 14.66 million tones. Wheat is also estimated to witness record production and has gone from 80.80 million tones in 2009-10 to 84.27 million tones in 2010-11. Rice production in 2010-11 has been estimated to 94.11 million tones. Table-1 reveals that our total foodgrain production has been stagnating around 216.00 million tones during last one decade except years after 2007-08 in which we attained new heights around 230 to 235 million tones. The rice and wheat production are stagnating around 90 and 80 million tones respectively, except in 2010-11 the production of wheat has set record and reached the production level of 84.27 million tones. **(See Table-2 on next page).**

Over all the performance of agriculture in the recent years has been poor. The performance of rice and wheat, the two crops that had been the anchor of the green revolution, seems to have lost momentum with respect to population growth.

The present position of agriculture at the national and ground level was explained along

Table – 1 : Food Grain Production in India

Year	Rice	Wheat	Coarse Grains	Pulses	Total and Grains
1950-51	20.58	6.48	15.38	8.41	50.82
1960-61	34.58	11.00	23.74	12.70	82.02
1970-71	42.23	23.83	30.55	11.82	108.42
1980-81	53.60	36.31	29.02	10.63	129.59
1990-91	74.29	55.14	32.70	14.26	176.39
2000-2001	84.98	69.68	31.08	11.08	196.81
2001-02	93.24	72.77	33.37	13.37	212.85
2002-03	71.83	65.76	26.07	11.13	174.77
2003-04	88.53	72.16	37.60	14.91	213.19
2004-05	83.13	68.64	33.46	13.13	198.36
2005-06	91.79	69.35	34.06	13.39	208.60
2006-07	93.40	75.80	34.25	14.23	217.28
2007-08	96.46	78.40	40.73	14.80	230.67
2008-09	94.11	84.27	40.21	17.20	235.88

Source: www dacnet.nic.in

Table – 2 : Annual Growth of Agriculture in India

Plan	Growth (in percent)
IVth Plan (1970-75)	2.8
Vth Plan (1975 -80)	3.6
VIth Plan (1980-85)	5.8
VIIth Plan (1985-90)	3.0
VIIIth Plan (1992-97)	4.8

Plan	Growth (in percent)
IXth Plan (1997 – 2002)	2.5
Xth Plan (2002 – 07)	2.3
XIth Plan (2007-12)	4.0

with the cause for agricultural crisis as it is sliding down along a creeping crisis due to weak policies implemented rather than unfavourable nature which is beyond control. The government policy failure and agricultural unviability have encouraged people to migrate to urban areas seeking employment and the heavy losses incurred by farmers in agriculture forced them to give up agriculture as an occupation. The rural population in 1901 census was 89.2 percent, 68.6 perent in 2011 census and is likely to fall to 50 per cent in 2051. The NSS finding stated that over 60 per cent of farmers may prefer to leave agriculture if an alternative was available.

Long Run Strategies for Sustainable Development -

For the sustainable agriculture only developmental measures are not sufficient in required long run strategy of planning. This strategy brings every piece of cultivable land under cropping and taking sustained efforts to bring the fallow lands under cultivation. This requires-

☛ Intensifying crop diversification to increase cropping intensity.

☛ Ensuring standardization of quality norms for seeds and pedigree planting material especially in horticulture crops.

☛ Encouraging judicious use of water through water saving devices and latest technologies such as drip fustigation, pit method of planting in sugarcane, SRI techniques in paddy etc.

☛ Paying adequate care to the soil health care to attain potential yield, suggesting the right crops to conserve natural resources and carry out sustainable agriculture and issue of soil health card to the farmers.

☛ Revamping the agricultural extension so as to deliver agriculture technology to the door steps of the farmers.

☛ Emphasizing promotion of Hi-tech Precision Farming, strengthening the post-harvest handling practices, concentrating on processing and value addition, building linkages with the private sector at input and marketing end to improve farmer's income.

☛ Providing alternate livelihood option to the farmers especially dryland agriculture through farming systems approach.

☛ Providing a social security net for the farmers through crop insurance.

☛ To provide and produce good quality of seeds, seedlings, plants and fruit saplings at various Government seed farm cum Horticulture Nursery for promoting the vegetable and fruit cultivation.

☛ To increase the area, production and productivity of Horticultural crops need to provide the technical knowhow for growing high value crops to generate the more income by the farmers.

☛ To provide training to unemployed candidates also who are interested to adopt the horticulture as profession as well as to arrange vocational training for farmers.

☛ To arrange the demonstration cum training for farmers, engaged in horticultural activities of commercial horticultural crops, like vegetables, fruits and ornamental plants etc.

☛ To arrange Exhibitions / Kisan Fairs/show of vegetables and fruits for the competition.

Measures to boost Agricultural Productivity -

We need to follow some strategic measures to break these barriers and boost the agricultural productivity which are as follows-

☛ Improving access to land.

☛ Improving access to rural finance.

☛ Strengthening research and extension systems.

☛ Development of irrigation infrastructure.

☛ Maintaining soil biodiversity of increased agricultural production.

☛ Crop rotation.

☛ Agricultural diversification.

☛ Horticulture development.

☛ Agro processing.

☛ Contract farming.

☛ Eco friendly fertilizer policy.

☛ Crop insurance.

☛ Agricultural Technology Mission (ATM).

☛ Dry land farming.

In may, 2007 Prime Minister convened a meeting of the National Development Council of discus the strategy for agricultural development. At this meeting he warned the country about the huge crisis facing agriculture and its heavy consequences for the economy. He further stated

hat the marginal and small farmers forming 80 per cent of farmers in the country suffer from lack of viability and production being low for a very long time due to "technology fatigue". This fatigue means either stagnation in research area or research findings being unable to reach and benefit farmers. Agricultural crisis, Prime Minister said, would cause formidable barriers to overall growth in the economy and elimination of poverty. Hence, the crisis would not limit itself to agriculture but would be disastrous for the entire economy. In his statement he pointed to the priority which rained agriculture should receive in the strategy to place agriculture again on the development path.

However in practice in the impleme-ntation of this strategy many inadequacies are seen in uncoordinated schemes/ programmes though successful in terms of expenditure incurred, beneficiaries covered etc., but lag far behind in providing enduring benefits / improvements in the status of agriculture and of population depending on it. The non- viability of small and marginal farmers would prove this point. In 2004-05, National Sample Survey in its report highlighted the conclusion that over 60 per cent of farmers would prefer to leave agriculture if an alternative was available. Thus the crisis would lead to exclusion of three parts of rural economy – agricultural, rural areas and rural people. Another example of exclusion is the decline in relative contribution of agriculture to GDP leading to out migration of male labour resulting in ferminzation of agriculture. The farmers in rich East and West Godavari Districts have taken a new path of "Crop Holiday" in 2011 in Andhra Pradesh when pushed to wall. The farmers decided to skip the Khariff season on when everything is ready for cultivation except remunerative price. The new path undertaken by farmers 'crop holiday" when push to the wall (in 1.50 lakh acres) should be an eye-opener to government to devise suitable strategy to encourage farmers to continue cultivation in every season.

Challenges ahead and future prospects of Indian Agriculture .

☛ The agriculture and allied sectors have made substantial progress in terms of production and productivity since the beginning of the Planning process. The successive Five Year Plans have emphasized growth in the agriculture sector, as result of which foodgrains production reached a record level of 244.78 million tones in 2010-11. However, the challenges are far from over. Agricultural growth in the current five year Plan is expected to be less than the target. A number of supply-side constraints exist and thereby achieving the food and nutritional security is a challenge. In order to make 4 per cent agricultural growth a reality, adequate efforts are required to focus on addressing the challenges in this sector.

☛ There has been a decline in area under foodgrains in the last three decades. This calls for speedy improvement in yield in order to increase production through adequate investment in research and development. In yield parameters India is lagging behind global levels in most crops. With very little growth in area and marginal growth in yields of many crops during the last decade, increasing agricultural production remains a challenge. A holistic approach spanning agricultural R & D, dissemination of technology and provision of agricultural inputs such as quality seed, fertilizers pesticides, and irrigation would help achieve higher levels of productivity. Access of small and marginal farmers to formal sources of agricultural credit is still inadequate though the flow of agricultural credit has increased in the recent past. Effective coordination and monitoring of ongoing agriculture and allied sector's programmes need to be ensured for optimum results.

☛ Mostly Indian farmers are either small or marginal farmers with small and fragmented landholdings. The average farm size in the country has declined over the years. This posses a challenge in terms of adoption of farm mechanization as well as generating productive income from farm operation. Pooling of many

landholdings may yield better economics of scale, for which land laws for leasing with sufficient safeguards in place should be considered.

☛ In the present scenario the higher levels of purchasing power are supporting higher demand for protein rich food items. The country has to step up efforts for increasing production of milk and other dairy products, egg, poultry, fish, meat, etc. There have been increases in the prices of these items because supply has not kept pace with demands.

☛ In India, the declining per capita availability of foodgrains has been a matter of great concern. For ensuring nutritional security, it is not only important to increase per capita availability of foodgrains but also to ensure that right quantities of food items are there in the food basket of the common man. A thrust on horticulture products is required for enhancing per capita a availability of food items as well as ensuring nutritional security.

☛ Still majority of the Indian agriculture is dependent on the monsoon. This adds to the risks a farmer faces. The dependence of India farmer on monsoon has to be reduced largely by increasing the irrigation facilities. With climate change and extreme weather conditions impacting agriculture; there is need to devise insurance schemes linked to indices of various vulnerability parameters. The insurance policy framework needs to be dynamic. Incorporating the perspectives of the insured, insurers, and public policy so that it covers a large section of population.

☛ The storage capacity is a major problem presently facing the country. Adequate storage facility would help reduce post-harvest losses. Adoption of modern farm implements and tools especially by small farmers is still low because of their lack of resources. This, in turn, hampers the development of the agriculture sector. Addressing infrastructure requirements in the agriculture sector, especially storage, communication, roads, and markets should be a priority. Public private partnership models can be of help in ensuring faster development of these requirements which are of vital importance for the growth of the agriculture sector.

☛ There is an urgent need for improvement in the generation of real-time market intelligence and also agricultural market reforms. Enhancing the returns farmers get on their production is essential for incentivizing them to product more. Farmers need to realize the market price for their produce. Setting up of efficient supply chains is essential not only for ensuring adequate supplied of essential items at reasonable prices but also so that producers get adequately compensated.

☛ Linking farmers to the market is, therefore, very important.

☛ Compared to many western countries, the level of secondary food processing in India is very low. With increasing income and population, demand for processed food is likely to increase. It is necessary to cater to this changing demand and at the same time enhance the income of farmers. So far the focus in food management has been on cereals, mainly rice and wheat. However, the demand for processed food is expected to increase. Interments in food processing, cold chains, handling, and packaging of processed food needs encouragement.

☛ Over the last few years there has been substantial increase in the minimum support prices (MSPs) of various crops. This is considered necessary for incentivizing farmers to increase production and productivity. At the same time, the MSP signals the floor price for the produce which, in turn, has the potential of increasing prices. Addressing the welfare of agricultural producers and consumers simultaneously poses a challenge. Further, inability of large number of small and marginal farmers to directly access the agriculture market puts a question mark on increase in MSP actually benefiting such farmers. Record procurement of rice and wheat in the last few years has helped build up the buffer stock and

strategic reserve of wheat and rice. There is, however, a huge cost involved in the process, in the form of food subsidy. The issue of efficient food stocks management and offloading of stocks in time needs urgent attention.

☛ Considering all the above-mentioned problems, there is an urgent need to address the challenges of the agriculture sector through comprehensive and coordinated efforts directed at improving farm production and productivity of foodgrains as well as high value crops, developing rural infrastructure, renewing thrust on the irrigation sector, strengthening marketing infrastructure, and supporting investment in research and development (R&D) of agriculture and allied disciplines with due emphasis on environmental considerations.

We are sure that these efforts will in time rejuvenate agriculture sector and bring about inclusive growth of the Indian economy.

Conclusion -

Agriculture has been and will always remain the most important sector of a national and global economy. It provides the ultimate in essential food and fibre for the world's population. No industrial substitutes have yet been found to replace food requirements. Thus the long term survival of mankind will depend on the sustainability of the global agricultural economy. However, in its purest form world population has already significantly exceeded the true sustainable limits of the planet. Sustainability would therefore, have to be an exercise in optimizing humankind's need for agricultural commodities with the necessity to protect the environment so it will continue to provide the necessary biological products. This can be particularly difficult, for the smallholders of Asia and the Pacific, as they remain primarily interested in increasing productivity to meet individual and national food security requirements. Most smallholders are already operating at the optimal their limited resources will allow, and thus do not have many of the necessary extra resources to implement sustainable development practices. It will require some additional government policy adjustments to make many desired sustainable practices as economically viable alternative to farm communities.

References

1. Roy, Subrata Kumar. Agricultural Growth in India.Serial Publications – New Delhi.
2. Swaminathan, M.S., Sustainable Agriculture; Towards an Evergreen Revolution. Kanak Publishers, Delhi, 1996.
3. Singh, Shivay, Yashbir and Patel, Anshu (2010). "Increasing Agricultural Production in India". Kurukshetra, July Vol. No. 9, pp-20-24.
4. www.articlesbase.com/....... /agricultureinindia. issuesandchallenges..203476.html.
5. Economic Survey, 2010-11, Government of India.
6. Rao, C. H. Hanumantha (2010). "Inclusive Growth: An Overview of Performances and Challenges Ahead". Indian Economic Journal, Vol. 58.
7. Economic Survey 2008-08. Government of India.
8. 11th Five Year Plan 2007 – 2012, Vol.1.
9. Singh, Shivay, Yashbir and Patel, Ashu (2012). Critical Review of the Union Budget 2012-13, April Vol. 60. Pp. 14-16.

◈◈

RNI : UPMUL00620/24/1/2014-TC ISSN : 2394-4366

इण्टरनेट एवं सोशल मीडिया का समाज पर प्रभावःएक विवेचन

– डॉ. रेनू कुरील
एसोसिएट प्रोफेसर –
समाजशास्त्र विभाग,
एस. एन. सेन बालिका विद्यालय, पी. जी. कालेज, कानपुर–208001 (उ.प्र.)

ई–मेल :
kureel.renu@gmail.com

सारांश

आज सम्पूर्ण विश्व एक विश्वग्राम में परिवर्तित हो गया है, जिसका प्रमुख कारण इण्टरनेट, सोशल मीडिया है। आज हम घर बैठे ही मनोरंजन, आवश्यक वस्तुओं का क्रय–विक्रय और राजनीति विज्ञान तथा विज्ञान की रिसर्च आदि की जानकारी सोशल मीडिया के द्वारा प्राप्त कर समाज को विकास के अनगिनत सोपान तय कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। इण्टरनेट और सोशल मीडिया ने वास्तव में आज अब्राहम लिंकन की परिभाषा को सार्थक किया है ''जनता का, जनता के लिए, जनता द्वारा शासन'' अर्थात प्रत्येक व्यक्ति दबा, कुचला,दलित, दमित आज अपने विचारों को इण्टरनेट और सोशल मीडिया के माध्यम से खुलकर रख सकता है। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण आज प्रत्येक भारतीय के द्वारा औसतन 7 घंटे इण्टरनेट और सोशल मीडिया के साथ जुड़े रहना है। इण्टरनेट सोशल मीडिया ने विषम परिस्थितियों में भी अपनी निरन्तरता को बनाये रखा जिसका उदाहरण कोविड 19 के समय देखा गया। इण्टरनेट सोशल मीडिया ने शिक्षा क्षेत्र, मनोरंजन एवं समाज को जीवन्त बनाये रखा।

प्रस्तावना–

वैदिक युग से लेकर वर्तमान तक भारतीय समाज के सामाजिक एवं आर्थिक पर्यावरण में निरन्तर परिवर्तन हुआ है। यह परिवर्तन समय काल एवं परिस्थितियों के कारण हुआ है। सामाजिक आर्थिक परिर्वतन में सोशल मीडिया एवं इण्टरनेट एवं इण्टरनेट की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। मनुष्य के द्वारा की जाने वाली समस्त क्रियाएं समाज से अभिन्न रूप से जुडी होती हैं, चाहे वे सामाजिक, आर्थिक राजनीतिक, धार्मिक या सांस्कृतिक ही क्यों न हो और इनका प्रभाव भी समाज के विभिन्न वर्गों पर न्यूनाधिक रूप से अवश्य पड़ता है। वर्तमान युग सूचना प्रौद्योगिक का युग है। इस सूचना प्रौद्योगिक युग में सूचना क्रांति आई है। व्हाट्सएप, फेसबुक, टिवट्र, यू–टूब इण्टरनेट आदि संचार माध्यमों ने सम्पूर्ण समाज में एक क्रान्ति ला दी है, और सम्पूर्ण समाज परिवर्तन की और अग्रसर हुआ है। कोविड–19 के समय इण्टरनेट एवं सोशल मीडिया जैसे माध्यमों में अपनी शक्ति से हमें भलीभाँति परिचित कराया है। जहाँ सम्पूर्ण दुनियाँ लॉकडाउन के कारण थम गई थी, वहीं इण्टरनेट एवं सोशल मीडिया की दुनियाँ ने जन सामान्य को न केवल सूचनाएँ प्रदान कीं बल्कि ई –कॉमर्स, ई–मास कम्युनिकेशन एवं सोशल मीडिया बेबसाइड ने समाज को जीवन्त बनाये रखा। सामाजिक, आर्थिक परिवर्तन में सूचना प्रौद्योगिकी इण्टरनेट

एवं सोशल मीडिया का अहम् योगदान है। विश्व में जनवरी, 2019 तक 4.90 अरब इण्टरनेट उपयोगकर्ता थे, भारत में 2019 तक 5.76 मिलियन सक्रिय इण्टरनेट उपयोगकर्ता हैं। यह अनुमान लगाया गया था कि दिसम्बर, 2022 तक भारत में लगभग 639 मिलियन सक्रिय इण्टरनेट उपयोगकर्ता होंगे। 2019 में भारत में समग्र डेटा यातायात में 47 प्रतिशत की वृद्धि हुई है जो 4 जी की खपत से प्रेरित है। 4 जी ने देश भर में खपत किए गए कुल डेटा ट्रैफिक का 96 प्रतिशत का गठन किया, जब कि 3 जी डेटा ट्रैफिक ने अपनी 30 प्रतिशत की उच्चतम गिरावट दर्ज की । अब तो 5 जी भी आ गया है।

यह संख्या मीडिया एवं इण्टरनेट के महत्व को स्वतः ही प्रमाणित करती है। इससे पहले यह जानना भी आवश्यक है कि इंटरनेट और मीडिया का अर्थ क्या है।

इण्टरनेट और मीडिया का अर्थ–

आज इण्टरनेट एक प्लेटफार्म बना चुका है, जिसके बिना कोई रह नहीं सकता। इस दौर में बिना इण्टरनेट सब अधूरा सा लगता है। इण्टरनेट से आप तुरन्त ही बहुत सी महत्वपूर्ण जानकारी अपने मोबाइल, टैबलेट और लैपटॉप से ले सकते है। इण्टरनेट को सरल भाषा में Globally Connected Network System (G.C.N.S.) समझा जाता है। क्योंकि इसमें T.C.P./I.P. का इस्तेमाल होता है और Data Transmition का उपयोग सर्वाधिक होगा है। इसमें अलग–अलग तरह के मीडिया के माध्यम से इण्टरनेट नेटवर्क होता है।

जब इण्टरनेट 1960 में अमेरिका में ARPANET नाम से चला तब दो कम्प्यूटर की मदद् से चलाया गया आगे चलकर इण्टरनेट ऐसे मुकाम पर पहुँच चुका है कि उसे भुलाना अब मुमकिन ही नहीं है, आज हम लोग इण्टरनेट के माध्यम से डाउनलोड करना, रिसर्च करना, ऑनलाइन डिस्कसन करना, एजुकेशन प्रोवाइड करवाना, इंटरनेट गेमिंग, जॉब तालशना, फ्रेन्डशिप या डेटिंग, शॉपिंग करना, मेल भेजना, अखबार में न्यूज देना, और भी काफी महत्वपूर्ण कार्य करना अब इण्टरनेट के माध्यम से ही होता है। आज हम लोग जो ऑनलाइल एफ. डी. पी. कर रहे है वह भी इसी का अध्ययन विषय है।

मीडिया का शब्दिक अर्थ है– माध्यम या साधन। परन्तु वर्तमान में जनसम्पर्क, संचार आदि के माध्यम से टीवी, पत्र–पत्रकार और सबसे ज्यादा मोबाइल मीडिया के सबसे बडे उदाहरण है। आज तक इण्टरनेट के माध्यम से दोस्तों, रिश्तेदारों, शैक्षिक विद्वानों और बहुत कुछ जानने के लिये हम लोग मीडिया का इस्तेमाल करते हैं और इसे ही हम सोशल मीडिया कहते हैं।

रोजगार एवं स्वरोजगार का अवसर–

इण्टरनेट एवं सोशल मीडिया के माध्यम से समाज में रोजगार के अवसर में वृद्धि हुई है अमेजॉन, स्नैपडील पर स्वरोजगार में लगे व्यक्ति अपने माल विक्रय कर जन–जन तक अपने माल पहुँचा सकते हैं। वहीं अमेजॉन, स्नैपडील आदि पर कई व्यक्ति जुड़कर स्वयं रोजगार भी प्राप्त कर पा रहा है। इसी प्रकार स्विग्गी, जोमैटो आदि ऑनलाइन प्लेटफॉर्म के माध्यम से ना केवल विक्रेता अपना माल बेच पाता है बल्कि ग्राहकों को घर बैठे भोजन सुविधा प्राप्त होती है। इस व्यवस्था के अन्तर्गत कई सारे युवा वर्ग को रोजगार की प्राप्ति हुई है। महानगरों में शिक्षा अध्ययन के लिए गये विद्यार्थी इस संस्थाओं से जुडकर पार्ट टाइम जॉब के माध्यम से अपनी स्वयं की कॉलेज की फीस भुगतान करने में सक्षम हुए हैं।

ई–मीडिया एवं ई मास कम्युनिकेशन–

समाज की अभिव्यक्ति का माध्यम बना है, प्रत्येक व्यक्ति ई–मीडिया के माध्यम से अपनी बात समाज के सामने रख सकता है। ई–मीडिया और ई–मास कम्युनिकेशन के कारण प्रत्येक व्यक्ति न्यूज एंकर एवं न्यूज होस्ट बना और बन रहा है।

ई–शिक्षा एवं सामाजिक आर्थिक परिवर्तन–

ई–लर्निंग प्रोग्राम पिछले कई दशक से चले आ रहे हैं, जिसके माध्यम से दूरस्थ शिक्षा गुणवत्तापूर्ण शिक्षा कम संसाधनों में अधिकतम शिक्षा जैसे लक्ष्य को प्राप्त किया है। ई–शिक्षा के माध्यम से इग्नू एवं अन्य संस्थाओं ने सुदूर क्षेत्रों में शिक्षा का प्रसार कर समाज को शिक्षित करने में एवं शिक्षा व्यवस्था बनाये रखने में अपना योगदान दिया है। वर्तमान कोविड–19 के परिपेक्ष्य में देखा जाये तो जहाँ सम्पूर्ण समाज अपाहिज हो गया था, वहीं ई–शिक्षा ने शिक्षा व्यवस्था को जीवन्त बनाये रखा। समस्त स्कूलों एवं महाविद्यालयों में ऑनलाइन माध्यम जैसे– गूगल मीट, माइक्रोसॉफ्ट – टीम, जी– सूट, जूम आदि माध्यमों से शिक्षा व्यवस्था निरन्तर प्रवाहमय में चलती रही।

इण्टरनेट एवं सोशल मीडिया के माध्यम से

ऑनलाइन क्रय–विक्रय को बढ़ावा मिला है। अमेजन फ्लिपकार्ड, स्नैपडील जैसे कई ऑनलाइन प्लेटफार्म है जहाँ व्यक्ति अपनी आवश्यकता का हर सामान प्राप्त कर सकता है।

ऑनलाइन क्रय–विक्रय से समाज एवं व्यक्तियों के समय की बचत होती है, साथ ही आर्थिक रूप से कम कीमत में अच्छी किस्म का माल उपलब्ध हो जाता है। 2018 में ई–कामर्स की ब्रिकी लगभग 2.842 बिलियन डॉलर हुई, और 2019 में लगभग 3.453 बिलियन डॉलर से ऊपर है। भारत चीन के बाद दूसरा सबसे बडा ऑनलाइन बाजार है।

आज सोशल मीडिया ने आम लोगों को सीधे सरकार के साथ बातचीत करने और सरकारी सेवाओं का लाभ उठाने के लिए सशक्त बनाया है। आम लोग रेलवे और अन्य मंत्रालयों और उन्हें जवाब देने वाली एजेंसियों को टैग करते हैं, जो इन दिनों में आम खबर है

ऑनलाइन प्लेटफॉर्म पर विभिन्न व्यक्ति अपनी कलाओं का प्रदर्शन करके आय अर्जित करते हैं। यू–ट्यूब, शेयर चैट आदि पर अपने चैनल्स बना कर आय अर्जित करते हैं। विभिन्न गृहणियों के द्वारा खाना–खजाना जैसे कई चैनलों का संचालन किया जाकर आय अर्जित की जाती है और अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन किया जाता है।

इण्टरनेट एवं सोशल मीडिया के माध्यम से समाज में हो रही कुरीतियों एवं प्रथाओं का विरोध किया जाता है। किसी स्थान पर जब किसी महिला के साथ अभद्र व्यवहार होता है तो ऐसे व्यवहार की सामाजिक निन्दा होती है। दिल्ली निर्भया केस एवं आंध्र प्रदेश गैंग रेप के समय सम्पूर्ण भारत में सभी का क्रोध चरम सीमा पर था। महिलाओं पर अत्याचार का विरोध ना केवल महिलाओं ने किया बल्कि एक पिता, एक पुत्र, एक पति रूपी पुरुष समाज ने भी किया। इस विरोध का प्रभाव हुआ एवं अधिनियम में संसोधन किया गया।

समाज की विवाह रूपी संस्था में इंटरनेट एवं सोशल मीडिया का योगदान है। shadi.com, jeevanats hi.com जैसे इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से वर–वधू का चुनाव करना आसान हो गया । ऑनलाइन माध्यमों से योग्य व्यक्ति को योग्य जीवन साथी मिलने में सहायता होती है। पूर्व में जीवन साथी का चयन मात्र अपने क्षेत्र तक ही सीमित था जिससे कई बार बेमेल विवाह को भी बढ़ावा मिलता था।

इण्टरनेट एवं सोशल मीडिया व्यक्तियों के मनोरंजन का साधन है कोविड–19 के दौर में सामान्य जन को इण्टरनेट और सोशल मीडिया के माध्यम से ही मनोरंजन प्रदान किया गया। नेटफ्लिक्स, वेबसिरीज, हॉटस्टार आदि के माध्यम से कोविड–19 के समय मनोरंजन की दुनिया को जीवन्त रखा गया। इण्टरनेट और सोशल मीडिया के माध्यम से मनोरंजन कर्ताओं को लगातार आय भी प्राप्त होती रही है जिससे वे आर्थिक रूप से सक्षम रहे।

इण्टरनेट एण्ड सोशल मीडिया का सामाजिक आर्थिक जीवन पर नकारात्मक प्रभाव भी पड़ा है। फेसबुक, ट्वीटर और अन्य जैसे सोशल मीडिया (एस. एम.) प्लेटफॉर्मो की अभूतपूर्व वृद्धि लोकतंत्र के कामकाज में एक दो धारी तलवार साबित हो रही है। एक ओर इसने जानकारी तक लोकतांत्रिक पहुँच बनायी लेकिन दूसरी ओर इसने नई चुनौतियों को भी सामने रखा है जो अब सीधे हमारे लोकतंत्रों और लोगों पर प्रभाव डाल रही है।

इण्टरनेट एवं सोशल मीडिया में लोगों के मध्य अभद्र भाषा व अफवाहें भी सामने आयी हैं। सबसे हाल का मामला है जब इस साल महाराष्ट्र के पालघर के गड़चिंचल गाँव में दो साधुओं और उनके ड्राइवर की हत्या कर दी गई। इस घटना को व्हाट्सएप पर फैली अफवाहों ने इलाकें में सक्रिय कर दिया गया था और ग्रामीणों के समूह ने तीन यात्रियों को चोर समझकर उनकी हत्या कर दी थी। हस्तक्षेप करने वाले कई पुलिसकर्मियों पर भी हमला किया गया और वे घायल हो गये। इसी तरह सोशन मीडिया पर एक हेट स्पीच की 2020 में दिल्ली दंगों में बड़ी भूमिका थी।

एक 2019 Microsoft अध्ययन में पाया गया कि 64 प्रतिशत से अधिक भारतीय ऑनलाइन फर्जी समाचारों का सामना करते हैं, जो सर्वेक्षण किये गए 22 देशों में सबसे अधिक है। सोशल मीडिया प्लेटफार्म्स और व्हाट्सएप जैसे मैसेजिंग सेवाओं के माध्यम से फैले हुए संपदित चित्रों, हेर–फेर किये गए वीडियो और नकली टेक्स्ट संदेशों की एक चौंका देने वाली संख्या गलत सूचना और विश्वसनीय तथ्यों के बीच अन्तर करना कठिन बना रही है।

इण्टरनेट सर्फिंग एवं सोशल मीडिया पर युवाओं के द्वारा अधिकतम समय बिताया जाता है। युवा वर्ग इण्टरनेट गेम जैसे पबजी आदि में अपना अधिकतम समय व्यतीत करते हैं एवं इस गेम में इतना मशगूल हो जाते हैं कि स्वयं भी खतरनाक टास्क करने को तैयार हो जाते हैं जिससे युवाओ की जान तक गई है। जिसे सरकार ने हाल ही में प्रतिबंधित किया है।

महिलाओं को साइबर बलात्कार और खतरों का सामना करना पड़ता है जो उनकी गरिमा को गंभीर रूप से प्रभावित करते हैं। कभी–कभी उनकी तस्वीरें और वीडियो लीक हो जाते और उन्हें साइबर बदमाशी के लिए मजबूर किया जाता है।

सोशल मीडिया पर ट्रोलिंग के द्वारा व्यक्ति की प्रतिष्ठा हानि पहुँचायी जाती है।

निष्कर्ष–

आज सम्पूर्ण विश्व एक विश्वग्राम में परिवर्तित हो गया है, जिसका प्रमुख कारण इण्टरनेट, सोशल मीडिया है। आज हम घर बैठे ही मनोरंजन, आवश्यक वस्तुओं का क्रय–विक्रय और राजनीति विज्ञान तथा विज्ञान की रिसर्च आदि की जानकारी सोशल मीडिया के द्वारा प्राप्त कर समाज को विकास के अनगिनत सोपान तय कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। इण्टरनेट और सोशल मीडिया ने वास्तव में आज अब्राहम लिंकन की परिभाषा को सार्थक किया है ''जनता का, जनता के लिए, जनता द्वारा शासन'' अर्थात प्रत्येक व्यक्ति दबा, कुचला,दलित, दमित आज अपने विचारों को इण्टरनेट और सोशल मीडिया के माध्यम से खुलकर रख सकता है। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण आज प्रत्येक भारतीय के द्वारा औसतन 7 घंटे इण्टरनेट और सोशल मीडिया के साथ जुड़े रहना है। इण्टरनेट सोशल मीडिया ने विषम परिस्थितियों में भी अपनी निरन्तरता को बनाये रखा जिसका उदाहरण कोविड–19 के समय देखा गया। इण्टरनेट सोशल मीडिया ने शिक्षा क्षेत्र, मनोरंजन एवं समाज को जीवन्त बनाये रखा।

जनवरी, 2021 तक 4.90 अरब इण्टरनेट उपयोगकर्ता हैं, भारत में 2019 तक 574 मिलियन सक्रिय इण्टरनेट उपयोगकर्ता थे। यह अनुमान लगाया गया था कि विगत दिसम्बर, 2020 तक भारत में लगभग 639 मिलियन सक्रिय इण्टरनेट उपयोगकर्ता थे। 2019 में भारत में समग्र डेटा यातायात में 47 प्रतिशत की वृद्धि हुई है जो 4 जी की खपत से प्रेरित है। यह संख्या सोशल मीडिया एवं इण्टरनेट के महत्व को स्वतः ही प्रमाणित करती है सोशल मीडिया के कई नकारात्मक प्रभाव है किन्तु सामाजिक आर्थिक परिवर्तन में सोशल मीडिया ने अहम भूमिका अदा की है। फेसबुक, ट्विटर, व्हाट्सएप जैसे माध्यमों ने सामाजिक दूरी को कम किया है एवं पारस्परिक सहयोग वह अपनत्व को बढ़ावा है। अमेजॉन फ्लिपकार्ट, स्पैपडील ने छोटे से छोटे व्यापारी को अपना माल बेचने के लिए माध्यम प्रदान किया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. https://ictcurriculum.gov.in.
2. https:/drishtiias.com/daily-updates/daily-newa-editorials.society-andsocial-media.
3. हिन्दी more,मनीष कुमार 5 Jan, 2021.
4. Https/www.scotb422.org>media.
5. दैनिक जागरण समाचार पत्र 03, जुलाई, 2021 संस्करण।

◈◈

शोधपत्र लेखकों को निर्देश

'**अभिनव गवेषणा**' त्रैमासिक बहुभाषीय अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका है, जिसमें सभी उपविषयों के मौलिक शोध पत्र, शोध समीक्षा, विचार, लेखों आदि का प्रकाशन किया जाता है। शोधकर्त्ता हिन्दी, अंग्रेजी अथवा संस्कृत भाषा में अपने शोध पत्र भेज सकते हैं। शोध पत्र भेजते समय कृपया निम्न बिन्दुओं पर ध्यान दें-

◈लेखक अपना शोध-पत्र सर्वेश तिवारी (राजन) प्रबन्ध संपादक- '**अभिनव गवेषणा**' के-444, 'शिवराम कृपा' विश्व बैंक बर्रा-कानपुर-27 को अथवा **super.prakashan@gmail.com** पर प्रेषित करें। ◈प्राप्त शोध पत्र पत्रिका में प्रकाशन के पूर्व पुनर्निरीक्षित किये जायेंगे। स्वीकृत शोध पत्र कहीं और प्रकाशित नहीं होना चाहिए और न ही उस शोध पत्र का कोई भी भाग सम्पादक के अनुमति के बिना कहीं और प्रकाशित किया जा सकता है।

◈अपने शोधपत्र की पाण्डुलिपि निम्न भागों में तैयार करें- शीर्षक, सारांश, पाण्डुलिपि, पुस्तक संदर्भ-सूची। कृपया पुनर्निरीक्षण की गुणवत्ता में सहायता करने हेतु अपना नाम, पता पाण्डुलिपि पर न दें।

◈**शीर्षक** - शीर्षक पाण्डुलिपि पर अवश्य दें, किन्तु अपना पूरा नाम, पता, संस्था जहाँ पर अध्ययन अथवा अध्यापन कार्य सम्पादित किया गया हो, आपका विषय, दूरभाष-मोबाइल, फैक्स, ई-मेल पत्राचार हेतु अलग पृष्ठ पर अवश्य दें। उपर्युक्त तथ्य आपके शोध पत्र के शब्द सीमा के अन्तर्गत ही माना जायेगा।

◈**सारांश** - कृपया शोधपत्र का सारांश अधिकतम 200 शब्दों में दें।

◈**पाण्डुलिपि** - इसके अन्तर्गत मुख्य पाठ्य सामग्री होगी जो 5 से 10 पृष्ठ तक होनी चाहिए। शोध पत्र 10 पृष्ठ से (सारांश, शब्द संक्षेप, सूची समेत) अधिक प्रकाशन हेतु स्वीकार नहीं किया जायेगा। अन्यथा वृहद् शोध पत्र (10 से पृष्ठ से अधिक) प्रकाशन में देर भी हो सकती है। लेखक को यह बात स्वीकार होनी चाहिए कि शोध पत्र पुनर्निरीक्षण के दौरान किये गये संशोधन उन्हें मान्य होंगे। शोध पत्र प्रकाशन के दौरान त्रुटि की सम्भावना न बने इसका पूरा ध्यान रखा जाता है, फिर भी कोई त्रुटि पाये जाने पर लेखक संशोधित री-प्रिन्ट प्राप्त कर सकता है। पत्रिका में संशोधन की व्यवस्था नहीं है।

◈ **सन्दर्भ वर्णमालाक्रमानुसार** - शोध पत्र के समापन पर कृपया संदर्भ वर्ण माला क्रमानुसार ही दें। पत्रिका का वर्ष, लेखक, पृष्ठ संख्या, भाग इत्यादि विस्तार से दें। पुस्तक या पत्रिका शीर्षक इटैलिक दें। ◈ **पुस्तक** - प्रकाशक का नाम, संस्करण, संख्या, प्रकाशन वर्ष, लेखक का नाम, पुस्तक का नाम, पृष्ठ संख्या। ◈ **पत्रिका** - पत्रिका नाम, लेख का शीर्षक, लेखक का नाम, प्रकाशक का नाम, अंक संख्या, माह, वार्षिक, अर्द्धवार्षिक, त्रैमासिक अथवा मासिक जो भी हो स्पष्ट करें।

◈ **संदर्भ ग्रन्थ सूची** - कृपया शोध पत्र में कम से कम 8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची अवश्य दें। ◈ **समाचार पत्र** - प्रकाशक, तिथि, सन्, पृष्ठ संख्या। ◈ **इण्टरनेट** - वेबसाइड, पृष्ठ संख्या, मुख्य शीर्षक, अन्तः शीर्षक।

◈ **मानचित्र एवं सारणी** - मानचित्र एवं सारणी अथवा चित्र शोध पत्र की समाप्ति के अन्त में दें। यह ब्लैक एण्ड व्हाइट ही होना चाहिए। इसका स्पष्ट संकेत पाण्डुलिपि में दें (उदाहरण, सारणी संख्या)।

◈ **विशेष** - कृपया अपना शोध पत्र ई-मेल करने के बाद डाक से अवश्य भेजें। अपने शोध पत्र के साथ-साथ बायोडाटा, फोटो, अपना पता लिखा लिफाफा (20 रुपये टिकट सहित) भेजें। शोध पत्र हिन्दी, अंग्रेजी अथवा संस्कृत भाषा में ही होना चाहिए। शोध पत्र यदि हिन्दी-संस्कृत में है तो (कृतिदेव-हिन्दी फान्ट 14) में अंग्रेजी में है तो (एरियल - अंग्रेजी फान्ट 12) में तैयार सीडी के साथ दें। शोध पत्र प्राप्त होने के एक सप्ताह के अन्दर लेखक को स्वीकृति पत्र प्रेषित कर दिया जायेगा। ई-मेल (**super.prakashan@gmail. com**) से प्राप्त शोध पत्र हेतु ई-मेल से स्वीकृति भेजी जायेगी। शोध पत्र प्रेषित करने से पूर्व प्रबन्धक से दूरभाष पर अवश्य सम्पर्क करें। सम्पादक मण्डल अथवा सलाहकार समिति में सम्मिलित करने का अन्तिम निर्णय संस्था का होगा।

◈ **सुझाव** - लेखकों एवं पाठकों को यह अंक कैसा लगा, इस सम्बन्ध में अपने-अपने विचार अवश्य भेजें, इससे मुझे अपनी त्रुटियों को जानने और भावी योजना बनाने में सहायता मिलेगी।

◈ **विनम्र निवेदन**- सभी सम्मानित सदस्यों से निवेदन है कि अपने माध्यम अधिकतम सदस्यों को पत्रिका परिवार से जोड़कर संस्था का सहयोग करें।

अभिनव
गवेषणा
मल्टी डिसिप्लिनरी क्वार्टरली इण्टरनेशनल
रेफ्रीड/पियर रिव्यूड रिसर्च जर्नल

Abhinav
GAVESHNA
Multi Disciplinary Quarterly International
Refreed/Peer Reviewed Research Journal

ISSN - 2394-4366
E-mail : super.prakashan@gmail.com
कार्यालय : सेक्टर के-444 'शिवराम कृपा' विश्व बैंक बर्रा, कानपुर-208027

सदस्यता फार्म

श्रीमान् सम्पादक महोदय,
'अभिनव गवेषणा'
(मल्टी डिसिप्लिनरी क्वार्टरली इण्टरनेशनल रेफ्रीड/ पियर रिव्यूड रिसर्च जर्नल)
सेक्टर-के-444, 'शिवराम कृपा' विश्व बैंक बर्रा, कानपुर-208027 (उ. प्र.) भारत

महोदय / महोदया,

निवेदन है मैं / हमारा महाविद्यालय आपके 'सुपर प्रकाशन' द्वारा प्रकाशित **'अभिनव गवेषणा'** (मल्टी डिसिप्लिनरी क्वार्टरली इण्टरनेशनल रेफ्रीड/ पियर रिव्यूड रिसर्च जर्नल) परिवार का .... वर्षीय / आजीवन◈ / व्यक्तिगत / संस्थागत◈ सदस्य बनना चाहता हूँ / चाहती हूँ? मैं / हमारी संस्था **'सुपर प्रकाशन'**, विश्व बैंक बर्रा, कानपुर-27 के नाम सदस्यता शुल्क .... रुपये नकद / मनीआर्डर / चेक अथवा बैंक ड्राफ्ट खाता क्रमांक (सुपर प्रकाशन - 52570200000355) IFS Code No. BARB0BUPGBX. बड़ौदा उत्तर प्रदेश ग्रामीण बैंक, शाखा- विश्व बैंक बर्रा (कर्रही) कानपुर-27 के नाम से दे रहा हूँ। (↑ ZERO)

नाम (श्री / श्रीमती) डॉ. : ....
पद का नाम (जहाँ वर्तमान में कार्यरत हैं) : ....
संस्था / निवास का नाम : ....
पत्र व्यवहार का पूरा पता (पिनकोड सहित) : ....
: ....
फोन / मोबाइल नं. : ....
स्थान व दिनांक : ....

- हस्ताक्षर

प्रबन्ध सम्पादक : **सर्वेश तिवारी 'राजन'**
मो. : 08896244776

सम्पादक : **डॉ. ज्ञानप्रभा अग्रवाल**
मो. : 08707047802